शेख़ निसार कृत

यूसुफ़ ज़ुलेख़ा

सम्पादक

डॉ० सत्यप्रकाश त्रिपाठी

सम्पादक : डॉ० सत्यप्रकाश त्रिपाठी

प्रकाशक : साहित्य-संस्कृति संस्थान
नहरबाग, फैजाबाद (उ०प्र०)
दूरभाष-०५२७८-६१२६६

प्रथम संस्करण : सन् २००५

मूल्य : ३००.००

सर्वाधिकार : सम्पादकाधीन

अक्षर संयोजन : साहू कम्प्यूटर्स, तेली टोला
फैजाबाद-२२४ ००१ (उ०प्र०)

मुद्रक : बी. के. ऑफसेट
नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२

SHEIKH NISAR KRIT YUSUF JULEKHA
Original Script
Edited by- Dr. Satya Prakash Tripathi

निवेदन

'यूसुफ जुलेखा' सामी जीवन-जगत् का सर्वाधिक लोक-प्रसिद्ध आख्यान है। इस पर विश्व की अनेक भाषाओं में असंख्य काव्य-कृतियों की सर्जना हुई है। सूफी कवि शेख निसार कृत 'यूसुफ जुलेखा' इस विषय पर हिन्दी की प्रथम काव्यकृति है इसकी रचना सन् १७६० में हुई है। इस कृति की ओर कदाचित् पहलीबार ध्यान सन् १६२६ में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का गया। उन्होंने 'हिन्दी शब्द सागर' की भूमिका में शेख निसार कृत 'यूसुफ जुलेखा' का उल्लेख किया है। इसके बाद अनेक विद्वानों का ध्यान 'यूसुफ जुलेखा' की ओर गया। किन्तु, उनकी दृष्टि कृति के सामान्य परिचय तक ही सीमित रही। खेद है कि विगत आठ दशक से हिन्दी संसार में पर्याप्त चर्चित होने के बावजूद इस अमूल्य ग्रन्थ का सम्पादन एवं प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका।

सम्पादन की दृष्टि से सर्वप्रथम फारसी में लिखित 'यूसुफ जुलेखा' की प्रतिलिपि हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग में आयी। एकेडमी ने इसके सम्पादन का दायित्व क्रमशः सत्यजीवन वर्मा तथा पं० गणेशप्रसाद द्विवेदी को सौंपा था। परन्तु, वे इस कृति को सम्पादित न कर सके। सत्यजीवन वर्मा ने इसी प्रतिलिपि के आधार पर सन् १६३० में काशी से प्रकाशित 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' के भाग-२ में 'शेख निसार कृत मसनवी यूसुफ जुलेखा' शीर्षक लेख लिखा था। पं० गणेशप्रसाद द्विवेदी ने सन् १६५३ में प्रकाशित 'हिन्दी प्रेमगाथा काव्य संग्रह' में कवि का संक्षिप्त परिचय तथा मूलकृति का कुछ अंश प्रस्तुत किया था। श्री गोपालचन्द्र सिन्हा (अवकाश प्राप्त जुडीशियल मजिस्ट्रेट) ने 'यूसुफ जुलेखा' और उसके रचनाकार शेख निसार के विषय में पहलीबार विस्तृत प्रकाश डाला। श्री सिन्हा को फैजाबाद के अताउल्ला खाँ से इसकी एक हस्तलिखित प्रति प्राप्त हुई थी। इसी के आधार पर उन्होंने पं० रामरक्षा त्रिपाठी 'निर्भीक', पं० भवानीभीख त्रिपाठी 'दिव्य' तथा श्री वली मुहम्मद के सहयोग से 'यूसुफ जुलेखा' के सम्पादन का प्रयत्न किया। उन्होंने दिव्य जी तथा वली मुहम्मद के सहयोग से 'यूसुफ जुलेखा' का फारसी से देवनागरी में लिप्यंतरण एवं शब्दार्थ तैयार करवाया। जीवन के अन्तिम दिनों में अस्वस्थ रहने के कारण सिन्हा जी ने 'यूसुफ जुलेखा' की पाण्डुलिपि सम्पादित एवं लिप्यंतरित प्रति के साथ लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग के रीडर(अब अवकाश प्राप्त) डॉ० रामफेर त्रिपाठी को सौंप दिया था। किन्तु अभी तक, हिन्दी संसार में 'यूसुफ जुलेखा' का सम्पादन एवं प्रकाशन सम्भव नहीं हुआ।

इस काव्यग्रन्थ के प्रणयन (सन् १७६० ई०) के लगभग दो सौ वर्ष बाद इसके सम्पादन का सुयोग लाभकर मैं अपने को बड़भागी मानता हूँ। रचनाकार की यह पंक्ति –'मोरे अंश

देव लिखि राखा' मेरे मानस में सहज उभर आती है। सचमुच यह ईश्वरीय कृपा है। वैसे तो मूलकृति के अभाव में मेरे लिए इस पर कार्य कर पाना आकाश-कुसुम की कल्पना के समान था, पर पूज्यपाद पं० रामरक्षा त्रिपाठी 'निर्भीक' (अब स्वर्गीय) की कृपा से यह कार्य सम्भव हुआ। 'यूसुफ जुलेखा' की एक प्रति जिसपर निर्भीक जी स्वयं कार्य करना चाहते थे, पर दीर्घकालीन अस्वस्थता के कारण उन्होंने उक्त पाण्डुलिपि मेरे पिताश्री परमपूज्य डॉ० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी को सौंप दी। पूज्य निर्भीक जी के प्रति मैं श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। पाठ सुनिश्चित करने के दृष्टि से मैंने आदरणीय डॉ० रामफेर त्रिपाठी के पास सुरक्षित पाण्डुलिपि का भी आद्योपान्त अवलोकन किया है। इस कृपापूर्ण सहयोग के लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ। इस विषय पर कार्य करते हुए मैं पं० भवानीभीख त्रिपाठी 'दिव्य' से भी मिला। परन्तु, गम्भीर अस्वस्थता के कारण उनका मार्ग-दर्शन ले पाना सम्भव नहीं हुआ।

पाठान्तर तैयार करने के लिए मैंने उपलब्ध समस्त पाण्डुलिपियों का उपयोग किया है। देवनागरी वर्णमाला में नुक्ता का प्रयोग न होने के कारण मैंने मुख्य शीर्षक को छोड़कर ग्रन्थ में कहीं भी नुक्ता का प्रयोग नहीं किया है।

इस कृति के सम्पादन में संत साहित्य मनीषी परमपूज्य पिताश्री डॉ० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी ने मुझे न केवल प्रेरित-प्रोत्साहित किया, बल्कि सम्पादन की दृष्टि से अनेक बिन्दुओं पर मेरा मार्ग-दर्शन भी किया। दुर्भाग्य से आज वे हमारे बीच नहीं हैं, किन्तु उनका आशीर्वाद मुझ अकिंचन का सम्बल है। वे ग्रन्थ का प्रकाशन नहीं देख सके, इसका दर्द मुझे जीवन-पर्यन्त रहेगा। मैं पिताश्री के चरणों में अपनी प्रणति निवेदन कर, इस लघु प्रयत्न को सभक्ति अर्पित करता हूँ।

पूज्य भ्राता डॉ० आनन्दप्रकाश त्रिपाठी उपाचार्य, हिन्दी विभाग, डॉ० हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर (म०प्र०) के स्नेहाशीष और प्रोत्साहन से मुझे कर्त्तव्यकर्म में सतत् प्रवृत्त रहने की शक्ति मिलती रही है। इस कृति के प्रकाशन एवं रूप-संयोजन में जो प्रेरणा एवं मार्ग-दर्शन उनसे मिला है, उसके लिए मैं धन्यवादकी औपचारिता निभाने में असमर्थ हूँ।

परम आदरणीय प्रोफेसर कृष्णचन्द्र लाल, डॉ० अजीतकुमार सारस्वत, डॉ० जनार्दन उपाध्याय, डॉ० माधवप्रसाद पाण्डेय, डॉ० जगन्नाथ त्रिपाठी, डॉ०ओंकारनाथ त्रिपाठी, डॉ० रामबली मिश्र, डॉ० कृष्णकौल त्रिपाठी, श्री प्रमोदकान्त मिश्र, श्रीमती डॉ० मीरा चन्द्रा और श्री त्रिलोकीनाथ त्रिपाठी 'निर्मोही' के स्नेहाशीष एवं सत्परामर्श के लिए मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। युवा साहित्यकार प्रिय भाई श्री यतीन्द्र मिश्र, श्री अशोककुमार त्रिपाठी तथा प्रिय अनुज डॉ० असीम त्रिपाठी के साथ ही मैं उन सभी आत्मीयजनों जिनका सहयोग किसी न किसी रूप में मेरे इस कार्य में सहायक सिद्ध हुआ है के प्रति आभारी हूँ तथा अन्त में ग्रन्थ के शब्द सज्जाकार श्री रामतीरथ साहू तथा फूलचन्द्र वर्मा को धन्यवाद देता हूँ।

विजयदशमी
संवत् २०६१, फैजाबाद

सत्यप्रकाश त्रिपाठी

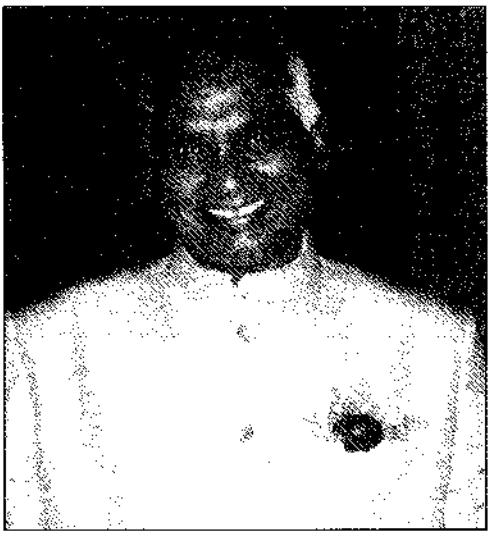

पा तुम्हारी छुअन
तन-मन-प्राण पुलकित
सुगबुगाने लगे हैं
फिर से नये अंकुर।

संत साहित्य मनीषी
परमपूज्य पिता डॉ० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी
की पुण्य स्मृति को श्रद्धा संवलित हृदय से।

अनुक्रम

शेख निसार का जीवन परिचय : ११

यूसुफ जुलेखा प्रेमाख्यान-परम्परा : १८

शेख निसार कृत यूसुफ जुलेखा

उपलब्ध प्रतियाँ : २६

कथावस्तु : २७

कथा का आधार : ३१

भारतीय धर्म-साधना का प्रभाव : ३३

प्रेम-निरूपण : ३४

वात्सल्य-वर्णन : ३६

सौन्दर्य-निरूपण : ४१

प्रेमाध्यात्म : ४४

चरित्र-सृष्टि : ४७

प्रबन्ध-योजना : ५१

महाकाव्यत्व : ५४

काव्य-रूढ़ि : ५६

काव्य-भाषा : ५७

छन्द-विधान : ५८

अलंकार-विधान : ५६

निष्कर्ष : ६१

यूसुफ जुलेखा (मूल पाठ तथा पाठान्तर)

आदि खण्ड	:	१
यूसुफ-जन्म खण्ड	:	८
भ्रातृ षड्यंत्र खण्ड	:	१२
जिबरैल प्रबोध खण्ड	:	१८
याकूब पुत्र-वियोग खण्ड	:	२०
यूसुफ -बनजारा खण्ड	:	२८
जुलेखा रूप-वर्णन खण्ड	:	३३
जुलेखा स्वप्न खण्ड	:	४२
जुलेखा-वजीर विवाह खण्ड	:	५१
जुलेखा ग्लानि खण्ड	:	५५
यूसुफ मिस्र गमन खण्ड	:	६३
यूसुफ विक्रय खण्ड	:	६५
फुलवारी खण्ड	:	७४
जुलेखा वासना खण्ड	:	७६
यूसुफ कारावास खण्ड	:	८८
यूसुफ कारावास-मुक्त खण्ड	:	१०४
मिस्र अकाल खण्ड	:	१०६
जुलेखा दशा खण्ड	:	११२
षड्ऋतु खण्ड	:	११४
भाइयों की मिस्र यात्रा खण्ड	:	११६
याकूब सन्देश खण्ड	:	१३६
यूसुफ-याकूब मिलन खण्ड	:	१४३

मिलन एवं विरह निवेदन खण्ड : १५४
बारहमासा खण्ड : १६१
जुलेखा रूप-वय प्राप्ति खण्ड : १७०
विवाह एवं प्रेम-भक्ति खण्ड : १७५
यूसुफ जुलेखा क्षार मिलन खण्ड : १८३
उपसंहार : १८८
शब्दार्थ एवं टिप्पणी : १९१
पाठान्तर-संकेत : २१६

उक्त पंक्तियों में शेख निसार का शेखपुर गाँव में जन्म लेना स्पष्ट है। शेख निसार के प्रपितामह शेख हबीबुल्लाह ने अकबर के शासनकाल में दिल्ली से अवध आकर शेखपुर गाँव बसाया था। किन्तु शेख निसार ने जिस शेखपुर में अपने जन्म लेने की बात कही है, उसकी स्थिति के विषय में मतैक्य नहीं है। श्री सत्यजीवन वर्मा के अनुसार शेख निसार ने जिस शेखपुर में जन्म लिया वह रायबरेली जिलान्तर्गत महराजगंज तहसील के बछराँवा परगने में है।[1] श्री गोपालचन्द्र सिन्हा ने शेखपुर को फैजाबाद जिले के मंगलसी परगने का एक गाँव बताया है जो इस समय शेखपुर ज़ाफर के नाम से जाना जाता है। शेखपुर जाफर फैजाबाद-लखनऊ मार्ग पर फैजाबाद से १८ किलोमीटर की दूरी पर स्थित उत्तर रेलवे के सोहावल स्टेशन के निकट रौनाही थाने से लगभग एक किलोमीटर दक्षिण पड़ता है। अन्तस्साक्ष्य से भी शेखपुर का अवध (अयोध्या) और रुदौली के मध्य स्थित होना प्रमाणित होता है–

अवध रुदौली के मझठावाँ। सेखपूर अति सुन्दर गावाँ।।[2]

कवि निसार अपने गृह द्वार पर स्थित तम्बू के समान सघन-शीतल छाया वाले इमली के वृक्ष का महत्व बताते हुए कहते हैं–

अंबिली बिरिछ न जाइ बखाना। द्वारे पर जस तँबुआ ताना।।
ताकी छाँह जो बैठे कोई। कैसो सूर कि सायर होई।।
अति उत्तम औ सीतल छहाँ। पंछी बहुत रहहिं तेहि माहाँ।।
दहियल नित बोलै भिनसारा। पिउ-पिउ पपिहा करै पुकारा।।
धौराहर पर सोवन जाई। सुनत कूक वह नींद हेराई।।
पीव कहाँ जब चातक बोलै। कपट कपाट हिये कर खोलै।।
पंछी नित सँवरे वह नाऊँ। करै खोज पिउ कै सब ठाऊँ।।
हम बाउर भूले जग माहीं। पिउ की खोज करहिं कुछ नाहीं।।
छिन इक हिये चोट अस लागी। पुनि सो ग्यान ध्यान सो भागी।।
खोजत पिउ पावै नहीं, चहुँ दिसि करै पुकार।
पंछी नित सँवरै पिउ, भूला फिरै निसार।।१/११

शेख निसार की वंश परम्परा के सदस्यों द्वारा ज्ञात हुआ कि इमली का वह पुराना वृक्ष एक दशक पूर्व तक विद्यमान था।

---

१. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग-११
२. शेख निसार, मेहर-निगार, सूफी काव्य संग्रह, पृ० १६३ से उद्धृत।

शेख निसार का जीवन परिचय

सूफी कवि शेख निसार के भौतिक जीवन एवं व्यक्तित्त्व के सम्बन्ध में यद्यपि पर्याप्त प्रमाणों के अभाव में सर्वथा प्रामाणिक रूप में कुछ कह सकना कठिन है, फिर भी अन्तस्साक्ष्यों एवं बहिस्साक्ष्यों से कवि के जीवन के विभिन्न पक्षों पर जो प्रकाश पड़ता है, उसके आधार पर उनकी जीवन-झाँकी प्रस्तुत की जा सकती है।

जन्मकाल

शेख निसार ने अपनी जन्म-तिथि का कहीं कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है। पर, 'यूसुफ जुलेखा' के रचनाकाल के साथ अपनी अवस्था का जो वर्णन उन्होंने किया है उसके आधार पर उनके जन्मकाल पर भी प्रकाश पड़ता है। 'यूसुफ जुलेखा' की रचना स्वयं कवि के अनुसार संवत् १८४७ की पौष पूर्णिमा से प्रारम्भ होकर सात दिन के भीतर पूरी हुई थी। उस समय कवि की अवस्था ५७ वर्ष थी।[1] इस प्रकार विक्रम संवत् १८४७ में से कवि की अवस्था के ५७ वर्ष ऋण करने पर कवि का जन्म संवत् १७९० तदनुसार १७३३ ई० में पौष मास के आस-पास किसी समय होना सिद्ध होता है। इस विषय पर कार्य करने वाले अधिकांश विद्वानों ने इसी तिथि को स्वीकार किया है।[2]

जन्म-स्थान

शेख निसार ने अपने जन्म-स्थान का परिचय देते हुए लिखा है-

सेखपूर उत गाँव सुहावा। सेख निसार जनम तहँ पावा।।
चारिउ ओर सघन अमराई। अगम अथाह चहूँ दिसि खाई।।
सेख हबीबुल्लाह सोहाये। सेखपूर जिन आन बसाये।।
बादसाह अकबर सुलताना। तेहिके राज कर करत बखाना।।
अवध देस सूबा है आये। बीस बरस लहि रहे सुहाये।।१/१०

---

१. हिजरी सन बारह सै पाँचा। बरनेउँ प्रेम कथा यह साँचा।।
अठारह सै सैंतालीसा। संवत विक्रम सेन जगेसा।।
सतरह सै बारह पुनि साका। पूष मास पून्यौ ससि राका।।
सत्तावन बरख बीते आऊ। तब उपजेउ यह कथा के चाऊ।।
सात दिवस महँ कीन्ह समापन। दुरमति नाम अहो यह संवत।।१/१४

२. (क) डॉ० कन्हैया सिंह, हिन्दी सूफी काव्य में हिन्दू संस्कृति का चित्रण एवं निरूपण, पृ० ७७
(ख) डॉ० शिवसहाय पाठक, हिन्दी सूफी काव्य का समग्र अनुशीलन, पृ० १६४

चित्र में बाएँ बड़ी कब्र शेख निसार के पिता की तथा उनके दाएँ लखौरी ईंट से बनी जीर्ण-शीर्ण चबूतरे के रूप में शेख निसार एवं उनके तीनों भाइयों की कब्र है।

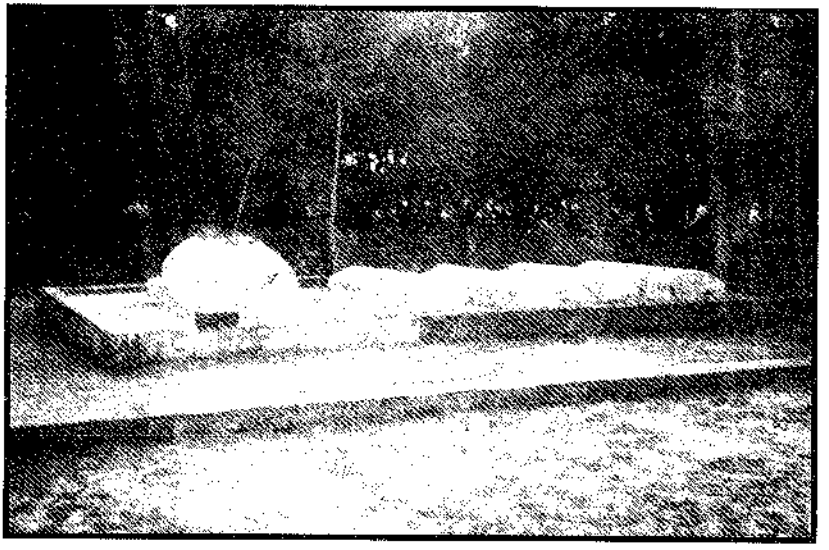

जीर्णोद्धार के पश्चात् बाएँ बड़ी कब्र शेख निसार के पिता की तथा दाएँ छोटी कब्रें शेख निसार एवं उनके तीनों भाइयों की हैं।

शेखपुर जाफर के 'इकरार मालिकान' में उक्त गाँव का जो इतिहास दिया गया है उससे गोपालचन्द्र सिन्हा का अभिमत पुष्ट होता है। वहाँ लिखा गया है- "अर्सा तख्मीनन तीन सौ बरस से जायद का हुआ कि मुसम्मे शेख हबीबुल्लाह मूरिस आला मालिकान देहली से बतवत्सुल मुलाजिमी बादशाह इस मुल्क में आये। उस वक्त २५० बीघा खाम आराजी जंगल वास्ते ताहुद के म्वाफ फरमाया। मूरिस मौसूफ ने जंगल तरासी कराके मौजा आबाद किया और नाम मौजे का बमुनासिबत कौम मौसूम हुआ। बाद इसके शेख मोहम्मद जाफर ने और भी जमीन दीहात हमसर्हद्दी से खरीद करके शामिल मौजा किया। तबसे मौजे का बनामजद शेखपुर जाफर मारुफ है।[1]

'इकरार मालिकान' में लिखित विवरण का शेख निसार के आत्मकथन से मिलान करने पर दोनों में पूर्ण साम्य दिखायी पड़ता है। शेखपुर जाफर में आज भी निसार के पिता एवं तीनों भाइयों की समाधि बनी हुई हैं। पिता की कब्र ऊँची है और पुत्रों की उससे नीचे लखौरी ईंट से बनी जीर्ण-शीर्ण एक बड़े चबूतरे के रूप में। वर्तमान में बड़ी समाधि शेख निसार की समाधि के रूप में जाना जाता है, जिसपर उनका नाम अंकित है। इस सम्बन्ध में कवि निसार के भाई के वंशज श्री इफ्तखार अहमद द्वारा ज्ञात हुआ कि यहाँ किसी श्रद्धालु की मनोकामना पूर्ण होने पर उसने सन् १९९२ में बड़ी समाधि को शेख निसार की समाधि समझ कर जीर्णोद्धार करवाया था, जो वस्तुतः उनके पिता गुलाम मुहम्मद की समाधि है। निसार तथा उनके भाइयों की समाधि जो एक चबूतरे के रूप में थी, भी सन् २००० में उस पर अलग-अलग चार समाधि बना दी गयी हैं। किन्तु, यह नहीं स्पष्ट है कि इसमें कौन सी समाधि शेख निसार की है। इस प्रकार विविध अन्तः एवं वाह्य साक्ष्यों से शेख निसार का फैजाबाद जिले के शेखपुर या शेखपुर जाफर का निवासी होना सिद्ध होता है।

नाम

शेख निसार का वास्तविक नाम गुलाम अशरफ था। इस बात को सभी विद्वान एक मत से स्वीकार करते हैं।[2] 'निसार' वस्तुतः कवि का उपनाम है। नवल किशोर प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित सैय्यद हुसैन की 'मकसूद नजात' नामक कृति में गुलाम अशरफ का ही उपनाम शेख निसार है। निसार ने इस मसनवी की रचना का उल्लेख अपनी 'यूसुफ जुलेखा' में किया है। 'शजरा नसब मालिकान' से भी इनका नाम शेख गुलाम अशरफ होना पुष्ट होता है।

वंश-परम्परा

अंतस्साक्ष्यों से शेख निसार जलालुद्दीन रूमी के वंशज सिद्ध होते हैं। प्रसिद्ध ग्रंथ मसनवी के रचयिता मौलाना जलालुद्दीन रूमी के वंशज शेख हबीबुल्लाह ने अकबर के

१. डॉ० सरला शुक्ल, जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य, पृ० ३९० से।
२. (क) आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, सूफी काव्य संग्रह, पृ० १९३
(ख) डॉ० सरला शुक्ल, जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य, पृ० ३९१
(ग) डॉ० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी, अवधी भाषा साहित्य और संस्कृति, पृ० १०९
(घ) डॉ० कन्हैया सिंह, हिन्दी सूफीकाव्य में हिन्दू संस्कृति का चित्रण और निरूपण,पृ०७६

राज्यकाल में दिल्ली की ओर से आकर अवध में शेखपुर नामक गाँव बसाया था, जिनके लड़के शेख गुलाम हुए, जो शेख निसार के पिता थे-

सेखपूर उत गाँव सुहावा। सेख निसार जनम तहँ पावा।।
सेख हबीबुल्लाह सोहाये। सेखपूर जिन आन बसाये।।
X X X
तेहिके सेख मुहम्मद वारा। रूपवंत भू पर अवतारा।।
ता सुत गुलाम मुहम्मद नाऊँ। सो हम पिता सो ताकर गाऊँ।।
वंस मौलवी रूम के, सेख हबीबुल्लाह।
जेहिकी मसनवी जगत महँ, अगम निगम अवगाह।।१/१०

उपर्युक्त वंश-परम्परा से प्रमाणित होता है कि शेख निसार जलालुद्दीन रूमी के वंशज थे। मौलाना जलालुद्दीन रूमी फारस के बड़े आध्यात्मिक कवि थे। इनका जन्म ३० सितम्बर सन् १२०७ ई० में बल्ख में हुआ था। इन्होंने मौलविया सम्प्रदाय की स्थापना की थी। रूमी को खुदाबन्दगार भी कहते हैं। एक परम्परा के अनुसार वे अबूबकर की वंश-परम्परा में समझे जाते हैं और दूसरी के अनुसार हजरत अली के। इनके पिता का नाम मुहम्मद बहाउद्दीन था। इस प्रकार शेख निसार रूमी का वंशज होने के कारण अबूबकर या हजरत अली जैसे इतिहास पुरुष की वंश-परम्परा में आते हैं।

शेख निसार की रचनाओं में उनके भाई का उल्लेख नहीं मिलता। किन्तु, सैयद मुख्तार हुसेन द्वारा लिखित 'मकसूद नजात' के अनुसार इनके तीन भाई और थे जिनका नाम गुलाम गौस, गुलाम रसूल और गुलाम सादिक था। 'शजरा-नसब मालिकान' में दी हुई वंशावली में भी इनके पूर्वजों के नाम के साथ तीनों भाइयों के नाम दिये हुए हैं। जो इस प्रकार है-

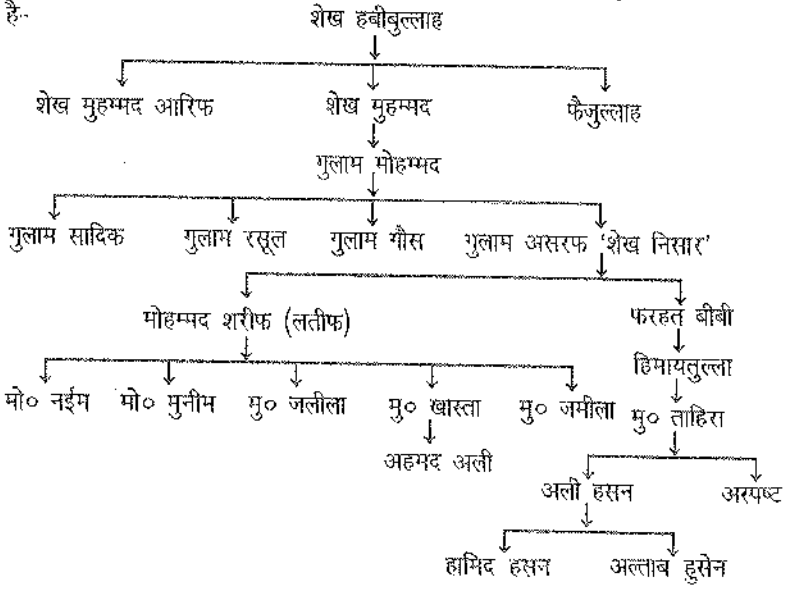

इस वंशवृक्ष से यह प्रमाणित होता है कि शेख निसार के एक पुत्र मोहम्मद शरीफ और एक पुत्री फरहत बीबी थी। पर शेख निसार के आत्मकथनानुसार उनके एक मात्र पुत्र लतीफ था जो बाईस वर्ष की अवस्था में मृत्यु को प्राप्त हो गया। कवि का कथन द्रष्टव्य है-

पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा। रूप अनूप बुध आगर कीन्हा।।
बाइस बरस रहा जग माहीं। छुट विद्या उन जान्यों नाहीं।।
नाम लतीफ अनूप सोहावा। सब गुन ज्ञान दई अधिकावा।।२८/१

उक्त दोनों सूत्रों का तुलनात्मक अध्ययन करने पर लगता है कि अन्तस्साक्ष्य के लतीफ का ही 'सजरा नसब मालिकान' में लेखकीय प्रमाद से शरीफ हो गया है।

गुरु

शेख निसार ने गुरु के रूप में अपने पितामह शेख हबीबुल्लाह का स्मरण किया है। शेख हबीबुल्लाह मौलाना जलालुद्दीन रूमी की वंश-परम्परा से सम्बद्ध थे। उन्होंने शेख निसार को मौलाना रूमी द्वारा स्थापित सूफी साधना के मौलविया सम्प्रदाय में दीक्षित किया था। निसार ने श्रद्धाभिभूत होकर अपने गुरु को सभी गुरुओं में श्रेष्ठ माना है और किसी अन्य को गुरु बनाने की भूल न करने की बात कही है। वस्तुतः वे अपने पितामह को ही गुरु मानकर उनके प्रति सर्वतोभावेन समर्पित हो गये थे। इस सम्बन्ध में कवि का कथन उल्लेखनीय है-

सबहे गुरू कर गुरू सुहावा। सो हम गुरू वह जग महँ आवा।।
जेहि सो गुरू के दोउ जग आसा। अवर गुरू के भूख न प्यासा।।
चहै गुरू वह पार लगावै। चहै तो बार-बार भटकावै।।
वहकर प्रेम हिये महँ गोवा। अवर प्रेम सब चित तन खोवा।।
अच्छर एक पढ़ावा सोई। बहुरि गुरू वह कियो बिछोई।।
भयो हिया जस समुद अपारा। किये गरंथ अनूप सँवारा।।
झूठ कथा कहि रैन बिहाये। अब वह समैं भोर कै आये।।
तब जब चेत भयउ ऊ ग्याना। साँच कथा अब करउँ बखाना।।
वंस मौलवी रूम के, मो लै लावा पंथ।
सोय सिद्ध बुध मसनवी, निरगम-अगम गरंथ।।१/१२

शिक्षा-दीक्षा

शेख निसार की विद्यालयीय शिक्षा के विषय में कोई जानकारी नहीं मिलती है। पर उनके बहु भाषाविद् होने के आधार पर कहा जा सकता है कि उन्होंने अवश्य ही शिक्षा पायी थी। हिन्दी, फारसी, तुर्की, संस्कृत और अरबी भाषाओं में रचित इनकी रचनाएँ इस बात का प्रमाण हैं कि वे इन भाषाओं के ज्ञाता थे। इस सम्बन्ध में शेख निसार के भाई गुलाम सादिक के वंशज डॉ० सईद अहमद ने मिलने पर लेखक को बताया कि शेख निसार ने वाराणसी के किसी संस्कृतज्ञ आचार्य से संस्कृत भाषा का अध्ययन किया था।

साहित्य-साधना

शेख निसार एक श्रेष्ठ साहित्य साधक थे। 'यूसुफ जुलेखा' उनकी महत्त्वपूर्ण काव्य-कृति है। जिसकी रचना संवत् १८४७ में ५७ वर्ष की अवस्था में की थी[1]। उन्होंने 'यूसुफ-जुलेखा' के अतिरिक्त हिन्दी, फारसी, संस्कृत, तुर्की और अरबी भाषाओं में मेहर निगार,रस मनोज, दीवान, मसनवी, ग़ोदी, नख़ और नसाब नामक सात अनुपम ग्रंथों की रचना की थी। परन्तु यह रचनाएँ उपलब्ध नहीं होती। 'यूसुफ जुलेखा' के आदि खण्ड में वे लिखते हैं-

सात गरंथ अनूप बनाए। हिन्दी औ पारसी सोहाए।।
संसकिरत तुरकी मन भाये। सबै प्रेम रस भरे सोहाये।।
मेहर निगार की कह्यो कहानी। रस मनोज रस कवित बखानी।।
औ दीवान मसनवी भाखा। ग़ोदी, नख़ फारसी राखा।।
संसकिरत तुरकी और ताजी। औ पारसी नसराब जो साजी।।१/१३

ये सभी रचनाएँ प्रेमरस से परिपूर्ण थी। उन्होंने अपने समय की 'हंस जवाहर' तथा कवि इंशा की कल्पना पर आधारित अन्य कहानियों से उपराम होकर यूसुफ जुलेखा की सच्ची कथा को ग्रहण करने की बात कही है-

हंस जवाहिर प्रेम कहानी। कहा मसनवी अमृत बानी।।
इंसा कहे जहाँ लह भेदू। ओ सब कथा जहाँ लह वेदू।।
झूठि जानि सबते मन भागा। अब यह साँच कथा चित लागा।।१/१३

आशु कविता करने में उन्हें महारत प्राप्त था। कहा जाता है कि तत्कालीन काशी नरेश के द्वारा दी गयी समस्या "केहि कारन चन्द्र पिपीलन खायो" को उन्होंने तत्काल पूर्ण करके निम्नलिखित छन्द सुनाया था-

एक समय सिवसंकर जू, भगवान के ध्यान में तारी लगायो।।
वर्ष सहस्र जो बीति गयो, तबहू सिवनाथ न माथ उठायो।।
खेह समान है, देह गई, तब चन्द्र पै गाढ़ लिलाट पै आयो।।
सेख निसार विचार कहैं, यहि कारन चन्द्र पिपीलन खायो।।

इस छन्द का उल्लेख डॉ० सरला शुक्ल ने अपने शोध-प्रबन्ध में किया है।[2] मुझे अपने शोध के दौरान पं० भवानीभीख त्रिपाठी 'दिव्य', पं० रामरक्षा त्रिपाठी 'निर्भीक' और पं० सत्यनारायण द्विवेदी 'श्रीश' से शेख निसार के द्वारा की गई उक्त समस्या पूर्ति की पुष्टि हुई है, तथापि अभी तक यह नहीं ज्ञात हो सका है कि उक्त छन्द इन विद्वानों को किस सूत्र से

---

१. शेख निसार, यूसुफ जुलेखा, १/१४

२. डॉ० सरला शुक्ल, जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य, पृ०- ३६२

प्राप्त हुआ है। जो भी हो इतना निश्चित है कि शेख निसार आशु कविता करने में सिद्धहस्त थे, क्योंकि 'यूसुफ जुलेखा' जैसे वृहत् प्रेमाख्यान की रचना उन्होंने मात्र सात दिनों के भीतर कर डाली थी-

सत्तावन बरख बीते आऊ। तब उपजेउ यह कथा के चाऊ।।
सात दिवस महँ कीन्ह समापन। दुमरति नाम अहो यह संवत।।१/१४

पारिवारिक जीवन

शेख निसार का सम्पूर्ण जीवन अत्यन्त कष्टप्रद था। नौ वर्ष की अवस्था में इनके पिता का देहान्त हो गया था। इसके पश्चात् इनके तीनों भाई एक-एक करके मृत्यु को प्राप्त हो गये जिसकी पीड़ा ने उनके हृदय को विदीर्ण कर दिया-

बंधु कई हौं रहेउँ अकेला। रोइ-रोइ सभ कहँ परहेला।।
तीन बन्धु मोहिं छाड़ि सिधारे। एकते एक अनूप सँवारे।।
यह जग छाड़ सोई निहचिन्ता। गये पैठ औ सागर मीता।।
जब सँवरौं वह सभै सोहाए। छाती फाट बेहर न जाए।।

अन्त में इनका प्रिय पुत्र लतीफ भी बीमार होकर चल बसा। लतीफ के वियोग में शेख निसार असह्य पीड़ा से तड़पते रहे, जिसका उल्लेख 'यूसुफ जुलेखा' के उपसंहार खण्ड में करते हुए कहते हैं-जबसे मेरा जन्म हुआ, तबसे मुझे दुःख के अतिरिक्त कुछ नहीं मिला। शायद यही मेरे भाग्य में लिखा है कि जब तक जीवित रहूँ दुःख ही झेलता रहूँ। मैंने सारे दुःखों को सह लिया। किन्तु, एक बहुत बड़ा दुःख मेरे ऊपर तब आ पड़ा जब मेरा बाईस वर्ष का पुत्र लतीफ मुझे छोड़कर चल बसा-

जबते जनम लीन्ह जगमाहीं। छुट दुख औरो देख्यो नाहीं।।
जबलहि जिऊँ पिऊँ दुख नीरा। माथहिं दीन्ह सो दुख कै पीरा।।
अवर दुख मैं सब कुछ सहा। भयो एक दुख बाउर महा।।
पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा। रूप अनूप बुध आगर कीन्हा।।
बाइस बरस रहा जग माहीं। छुट विद्या उन जान्यों नाहीं।।
नाम लतीफ अनूप सोहावा। सब गुन ज्ञान दई अधिकावा।।
बात भुलात नहिं पुत्र सोहावा। सायर सुघर सो ग्रन्थ बनावा।।
बाइस बरस के बयस महँ, छाड़ दीन्ह उन देह।
मुरत अनूप गुलाब से, जाय मिले पुन खेह।।२८/१

इस प्रकार हम देखते हैं कि यह सूफी रचनाकार अपने बाल्यकाल से ही पीड़ा का एक अखण्ड साम्राज्य लेकर जीवन यापन करता रहा और उसके जीवन में जो दर्द बचपन से पल रहा था उसी की पीठिका पर वह अपनी प्रेम-पीर को वाणी देने में कृत्कार्य हुआ। यही मर्म 'यूसुफ जुलेखा' की रचना का प्रेरणा स्रोत बना। हजरत याकूब के आहत वात्सल्य की गहनता की अनुभूति उन्हें स्वयं अपने पुत्र लतीफ के वियोग में हुई।

यूसुफ जुलेखा प्रेमाख्यान-परम्परा

यूसुफ जुलेखा की प्रेमकहानी विश्व के प्राचीनतम प्रेमाख्यानों में से एक है, जिसका सम्बन्ध मूलतः सामी जीवन-दर्शन से है। इस्लामी धर्म-दर्शन के प्रसार के साथ इस प्रेमकहानी का विश्व साहित्य में प्रचार-प्रसार हुआ। अरबी, फारसी, अंग्रेजी, हिन्दी, सिन्धी, पंजाबी, कश्मीरी, बंगला, उर्दू, दक्षिणी हिन्दी आदि भाषाओं में इसकी प्रशस्त परम्परा दिखाई पड़ती है। इसपर दृष्टिपात करना आवश्यक है।

बाइबिल में यूसुफ जुलेखा

इस कहानी का मूल स्रोत 'बाइबिल' ओल्डटेस्टामेण्ट है। इसमें यूसुफ को जोसफ तथा उनके पिता याकूब को जकोब नाम दिया गया है। किन्तु इसमें कहीं भी जुलेखा का नाम नहीं आया है। 'बाइबिल' में वर्णित कथा 'कुरान' की कथा से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। 'बाइबिल' से ज्ञात होता है कि जिस समय यूसुफ को कुएँ में डाला गया था उस समय उसकी अवस्था १७ वर्ष की थी। यूसुफ का स्वप्न दर्शन और उसे कुएँ में डाले जाने की घटना हजरत ईसा मसीह से लगभग १८९० वर्ष पूर्व की है।

तलमूद में यूसुफ का आख्यान

यहूदी धर्म संहिता का नाम 'तलमूद' है, जिसमें हजरत यूसुफ का किस्सा सविस्तार मिलता है। यद्यपि 'तलमूद' में किस्से की महत्त्वपूर्ण बातें 'कुरान' के अनुसार ही हैं, तथापि इसमें कुछ भिन्नता मिलती है। 'कुरान' का बयान एक नबी के जीवन चरित्र के अनुकूल है, जबकि 'तलमूद' में उससे हटकर है।

कुरान में यूसुफ जुलेखा आख्यान

'कुरान' में यह कथा अत्यन्त संक्षिप्त रूप में सूर ए यूसुफ मक्की, रुकू १२, आयत १११ में वर्णित है। 'कुरान' की इस सुरा में हजरत यूसुफ के जीवन-वृत्त का वर्णन है, जो मात्र किस्सा कहानी न होकर यूसुफ के रूप में नबी सल्ल० के भविष्य के बारे में एक भविष्यवाणी है। इस सुरा में हजरत यूसुफ और उनके भाइयों का जो किस्सा कहा गया है वह पूर्ण रूप से हजरत मुहम्मद सल्ल० और कुरेश के ऊपर आधारित है। 'कुरान' की इस कथा के द्वारा सच्चाई, सत्यप्रियता और एकेश्वरोपासना का उपदेश दिया गया है। जुलेखा का नामोल्लेख नहीं मिलता है। यहाँ यूसुफ के स्वामी की पत्नी के माध्यम से कहानी का विकास दिखाया गया है, जिसे बाद में जुलेखा की संज्ञा दी गयी है।

फारसी साहित्य में यूसुफ जुलेखा

फारसी साहित्य में अल-गजाली, जामी, निजामी आदि कवियों ने 'कुरान' की कथा का आधार लेकर अपने-अपने ढंग से 'यूसुफ जुलेखा' प्रेमाख्यान की रचना की है, जिनका संक्षिप्त परिचय यहाँ आवश्यक हैं। यह प्रेमकहानी बाद में फारसी साहित्य के माध्यम से

भारतीय साहित्य में आयी।

अलगजाली कृत यूसुफ जुलेखा

अलगजाली का जन्म खुरासान प्रान्त के तूस नामक स्थान पर सन् १०५९ ई० में हुआ था। वह बड़ा प्रतिभासम्पन्न सुन्नी विद्यार्थी था। बचपन में अलगजाली को धर्मशास्त्र की शिक्षा मिली। बाद में अर्थोपार्जन के उद्देश्य से धर्म सम्बन्धी अन्य विषयों के अध्ययन हेतु नीशापुर चला गया। लोग इसे महान शाफिई (एक इमाम) के नाम से सम्बोधित करते थे। इनका मन जीवन और जगत की कुरूपताओं से उचट गया था। इनकी मृत्यु १११९ ई० में हुई।

अलगजाली ने अनेक मूल्यवान ग्रन्थों की रचना की। सर्वप्रमुख और वृहदाकार ग्रन्थ है 'इहया उलूम अलदीन' (धर्म-शास्त्रों का पुनरुज्जीवन)। इन्होंने 'यूसुफ जुलेखा' प्रेमाख्यान की रचना अपने ढ़ग से की है। इसमें सूफी प्रेम-साधना का अच्छा परिचय मिलता है। इस कृति में यूसुफ के प्रति जुलेखा का प्रेम इतना घनीभूत हो गया है कि जब कोई उससे यह कह देता है कि मैंने यूसुफ को देखा है तो वह उसे गले का हार दे देती। उसके पास ७० ऊँट हीरे थे। धीरे-धीरे सब समाप्त हो गये। वह हर क्षण यूसुफ को याद करती रहती थीं। यहाँ तक कि जब वह आकाश की ओर देखती तो उसे तारों में यूसुफ का नाम दिखाई पड़ता। विवाहोपरान्त उसका प्रेम व्यापक होकर अध्यात्मोन्मुख हो जाता है और वह यूसुफ के साथ रहना अस्वीकार कर देती है।

जामी कृत यूसुफ जुलेखा

जामी फारसी के श्रेष्ठ कवि थे। इनका पूरा नाम मुल्ला नूरूद्दीन अब्दुर्रहमान था। खुरासान के जाम नगर का निवासी होने के कारण इन्हें जामी कहा गया। इनका जन्म १४१४ ई० में हुआ था। यह नक्श-बन्दिया सम्प्रदाय के सूफी संत थे। ये श्रेष्ठ कवि, चिन्तक और साधक थे। इन्होंने कई प्रसिद्ध ग्रन्थों की रचना की।

'यूसुफ जुलेखा' जामी की एक प्रसिद्ध काव्यकृति है। इसकी रचना सन् १४८३ ई० में हुई। हजाज छन्द में रचित इस मसनवी में जामी ने ईश्वर को शाश्वत सौन्दर्य कहा है और उसे संसार की समस्त सुन्दरताओं से श्रेष्ठ बताया है।[1] उन्होंने 'यूसुफ जुलेखा' में सांसारिक प्रेम के माध्यम से ईश्वरीय प्रेम को प्राप्त करने का आदर्श प्रस्तुत किया है। उनका कथन है कि सांसारिक प्रेम का रसपान करो ताकि पवित्र प्रेम की मदिरा से परिचित हो सको। पर, अपनी आत्मा को अधिक समय तक यहाँ न टिकने दो। इस पुल से गुजर जाओ। तेजी से आगे बढ़ जाओ।' इसमें 'यूसुफ जुलेखा' की प्रेम कथा के माध्यम से जीवन की सम्पूर्णता सामने लाई गयी है।

---

१. जामी, यूसुफ जुलेखा, पृ० २४

फिरदौसी कृत यूसुफ जुलेखा

फिरदौसी ने 'शाहनामा' जैसे महान व्यंगात्मक काव्य के अतिरिक्त 'यूसुफ जुलेखा' नामक प्रेमाख्यान की रचना की थी। फिरदौसी की 'यूसुफ जुलेखा' प्रेमाख्यान होते हुए भी मुतफारिब छन्द में लिखी गयी है जिसके कारण इसे पसन्द नहीं किया जाता है।

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी का अनुमान है कि सम्भवतः फिरदौसी के समकालीन अब्दुल मुयीद ने भी 'यूसुफ जुलेखा' नाम से एक मसनवी की रचना की थी। इनके अतिरिक्त फारसी में बखतियारी अहवरी, अब्दुल मुहम्मद बलखी, नाजिम हर्वी, अमीर खुसरो आदि के द्वारा भी 'यूसुफ जुलेखा' की प्रेमकहानी को काव्य का विषय बनाया जाना बताया गया है।

उर्दू साहित्य में यूसुफ जुलेखा

उर्दू भाषा में अनेक रचनाकारों ने 'यूसुफ जुलेखा' की कहानी को आधार बनाकर रचनाएँ की हैं। इनमें फिगार और अब्दुल हलीम के नाम उल्लेखनीय है। दक्खिनी हिन्दी में सैयद मीराँ हाशमी, शेख मुहम्मद अमीन, मुहम्मद फतेह, मोतबर खाँ आदि ने इस विषय पर लेखनी चलायी, जिसे विद्वानों ने उर्दू साहित्यान्तर्गत रखने का आग्रह किया है।

फिगार कृत यूसुफ जुलेखा

फिगार ने 'यूसुफ जुलेखा' की रचना उर्दू भाषा में की है। यह जामी की यूसुफ जुलेखा का उर्दू अनुवाद प्रतीत होता है। फिगार की 'यूसुफ जुलेखा' में जुलेखा की विरहावस्था का बड़ा ही मार्मिक चित्रण देखने को मिलता है । जुलेखा विक्षिप्त होकर असामान्य व्यवहार करने लगती है। निम्नलिखित पंक्तियाँ ध्यान देने योग्य हैं-

फुंगा व माला करती वा दिले चाक।
कभी बकली, कभी गिरती थी बरखाक।
लिया नामोस ले जब उसको गम ने।
रखा सिजदे में तब सर उस सनम ने।
जबी सिजदे में रखकर की जो जारी।
कहाँ तक हो रकम वह बेकरारी।।[1]

सैयद मीराँ हाशमी कृत यूसुफ जुलेखा

सैयद मीराँ हाशमी बीजापुर के रहने वाले थे। इनके जन्मकाल के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। इनकी मृत्यु ११०६ हि० (१६९७ ई०) में हुई थी। इनके गुरु का नाम सैयद हाशिम शाह था। इन्हीं के नाम पर सैयद मीराँ ने अपना उपनाम रखा था। वे जन्मांध थे, इसका उल्लेख उनकी मसनवी 'यूसुफ जुलेखा' में मिलता है। अभी तक इनकी 'यूसुफ जुलेखा', 'एक दीवान' और 'एक मर्सिया' नामक तीन पुस्तकों का पता लगा है।

---

१. फिगार, यूसुफ जुलेखा पृ० १४

हाशमी कृत 'यूसुफ जुलेखा' की रचना १०६६ हि० (१६८८ ई०) में हुई, कवि के अनुसार-

मुस्तब किया मैं यूँ किस्सा कूँ तो हजार बरस पर जो ये नौबत पोनो।[1]

यह दक्खिनी हिन्दी का वृहद् काव्य है। अधिकांश विद्वानों ने इसमें शेरों की संख्या ६००० से अधिक बतायी है। परन्तु, स्वयं हाशमी साहब इसमें कुल पाँच हजार एक सौ सात (५१०७) शेर बताते हैं-

अगर कोई पत्तों का पूछे सुमार-एक सद ऐसे सात हैं पेज हजार।[2]

हाशमी ने अपने मुर्शिद सैयद शाह हाशिम की फरमाइश पर इस प्रेमाख्यान को पद्यबद्ध किया था। कथा का आधार जामी कृत 'यूसुफ जुलेखा' है और इनकी मूल संवेदना सूफीमत से जुड़ी हुई है। इसमें अलंकारों की छटा कवि की अलंकारप्रियता को सिद्ध करती है। कृति की रचना कवि ने रेखती में की है। भाव, भाषा, अलंकार सभी दृष्टियों से मीरॉ हाशमी कृत 'यूसुफ जुलेखा' दक्खिनी हिन्दी की एक महत्त्वपूर्ण रचना है। इसमें कवि की मौलिकता स्थान-स्थान पर देखने को मिलती है।

अमीन कृत यूसुफ जुलेखा

दक्खिनी हिन्दी में अमीन नाम के अनेक कवि हुए हैं। 'यूसुफ जुलेखा' के रचनाकार अमीन का पूरा नाम शेख मुहम्मद अमीन बताया जाता है। गुजरात निवासी और गूजरी भाषी होने के कारण इन्हें अमीन गूजरी भी कहते हैं। इन्होंने बहुत समय तक औरंगाबाद में रहकर काव्य-सर्जना की थी। 'यूसुफ जुलेखा' जिसकी रचना ११०६ हि० अर्थात् सन् १६६८ में हुई। अमीन ने इस कृति का प्रारम्भ गोधरा (गुजरात) में किया था-

बेता चालीस सौ पर चौदह और सौ।
है लिखिया गोधरे के बीच सुन यों।

अमीन की इस कथा का मूल आधार जामी कृत फारसी की 'यूसुफ जुलेखा' है। इन्होंने 'यूसुफ जुलेखा' की भाषा को गूजरी कहा है-

सुनो मतलब अहै अब यूँ अमीन का। लिखी गूजरी मने यूसुफ जुलेखा।।
हरेक जाने किस्सा है फारसी में। अमीन उसकूँ उतारे गूजरी में।।
के बूझे हर कदाम इसकी हकीकत। बड़ी है गूजरी जग बीच न्यामत।।[3]

वस्तुतः अमीन की 'यूसुफ जुलेखा' भाषा-शैली की दृष्टि से गूजरी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण रचना है।

कवि मोहम्मद फतेह कृत यूसुफ-सानी

---

१. मीरॉ हाशमी, यूसुफ जुलेखा, सेण्ट्रल लाइब्रेरी हैदराबाद की पोथी सं० ४६७, पृ० २४४
२. वही, पृ० २४४
३. नवाए अदब (त्रैमासिक) जनवरी १६५५, अमीन गूजरी की 'यूसुफ जुलेखा' शीर्षक लेख, डॉ० अब्दुल फारूकी पृ० १७

कवि मोहम्मद फतेह भी गोधरा के निवासी और अमीन के समकालीन थे। ये प्रारम्भ में 'यूसुफ जुलेखा' लिखना चाहते थे, लेकिन वहाँ की जामा मस्जिद में जब इन्हें यह ज्ञात हुआ कि अमीन ने उनसे पहले ही 'यूसुफ जुलेखा' की रचना कर डाली है तो उन्होंने अपनी कृति का नाम 'यूसुफ-सानी' या 'जुलेखा-सानी' रख दिया। ये स्वयं को गोधरे का निवासी बताते हुए लिखते हैं-

सुन मोहम्मद तू फतेह मुज सी ये बात, गोधरे के बीच तू है नेक जात।।[1]

मोतबर खाँ 'उमर' कृत यूसुफ जुलेखा

उमर दक्खिनी हिन्दी के अन्तिम कवि कहे जाते हैं। ये औरंगाबाद के रहने वाले थे। यहीं पर इनका जन्म भी हुआ था। इनकी जन्मतिथि के विषय में कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिलता पर इनकी मृत्यु अधिकांश विद्वानों ने सन् १६७३ ई० में स्वीकार की है। इनका देहावसान औरंगाबाद में हुआ। यहीं पर उनकी कब्र भी है। वली दकनी इनके काव्य-गुरु थे, जिन्हें उर्दू कविता का प्रथम कवि माना जाता है।

उमर की एक मात्र प्रसिद्ध रचना 'यूसुफ जुलेखा' है। इसकी रचना-तिथि के विषय में विद्वानों में मतैक्य न होने के कारण निश्चित रूप से कुछ कह पाना कठिन है। जामी कृत 'यूसुफ जुलेखा' से विशेष रूप से प्रभावित होने के बावजूद इन्होंने अपनी रचना में स्थान-स्थान पर मौलिकता का परिचय दिया है। इन्होंने जामी के अतिरिक्त कलाम पाक की विविध टीकाओं, तफसीरों तथा मुसलमानों में प्रचलित रवायतों से भी सहायता ली है।

उमर इस लोकप्रिय कथा के द्वारा अपने को संसार में अमर बनाना चाहता था। अतः उसने 'कुरान' में वर्णित इस लोकविश्रुत आख्यान की रचना फारसी के कवि जामी से प्रेरित होकर की-

बका चाहता है लिख ऐसी कहानी, है कुरान में बयाँ जिसके मानी।
यही बेहतर है सुखन ताजा कहूँ मैं, कुछ आगे मतलम रंगी लिखूँ मैं।
सुनाऊँ किस्सा यूसुफ जुलेखा, करूँ आलम पै यह मतलब हो वैदा।
लिखूँगा किस्सा अहसन है उम्मीद, कि पहुँची है तुले जामी से ताईद।।[2]

अन्त में कवि अपनी नानी का जिक्र करते हुए कहता है कि उन्होंने ही इस कृति की रचना का आदेश दिया था।

कश्मीरी भाषा में महमूद गामी कृत यूसुफ जुलेखा

कश्मीरी भाषा के कवि महमूद गामी का जन्म अनन्तनाग जिले की शाहबाद्डूर तहसील में आखारि नामक गाँव में हुआ था, जो अब महमूदाबाद नाम से जाना जाता है। इनका जन्मकाल अज्ञात है और मृत्यु सन् १८५५ ई० बताई जाती है। यह एक बहुमुखी प्रतिभावाले कलाकार थे। इन्होंने साहित्य की विभिन्न धाराओं पर सफलतापूर्वक लेखनी चलाई।

---

१. यूसुफ जुलेखा, अमीन गुजराती (भूमिका), पृ० ६३
२. यूसुफ जुलेखा, उमर, सालार जंग की पोथी नं० ३३, पृ० १०

मसनवियाँ, गजल, गीत, लोलबाथ आदि लिखकर इन्होंने कश्मीरी साहित्य की श्रीवृद्धि की। फारसी का परित्याग कर कश्मीरी में काव्य रचना करने लिए महमूद गामी को कटु आलोचना सहनी पड़ी। उन्हें गँवार गामी तक कहा गया। महमूद गामी ने नौ मसनवियों की रचना की। इसके अतिरिक्त लगभग एक सौ स्फुट कविताएँ व गजलें भी लिखी हैं।

'यूसुफ जुलेखा' महमूदगामी की सर्वाधिक लोकप्रिय मसनवी है। सरल एवं प्रभावपूर्ण भाषा-शैली में लिखित इस मसनवी के अधिकांश गीत आज भी लोग बड़े चाव से गाते हैं। गामी की 'यूसुफ जुलेखा' जामी की प्रसिद्ध मसनवी की तरह पीड़ित आशिकों के मनोविनोद के लिए रची गयी है। महमूदगामी ने जामी का आधार स्वीकार करते हुए लिखा है-

दर जुलेखा बोनयि हजरत
जामियन बोनयि काशिरि्य पाठ्य महमूद गामियन।।[1]

पंजाबी भाषा में हाफिज बरखुरदार कृत यूसुफ जुलेखा

पंजाबी साहित्य में हाफिज नाम के दो कवि हो चुके हैं। दोनों के द्वारा 'यूसुफ जुलेखा' लिखी जाने के कारण उन्हें भ्रमवशात् एक ही व्यक्ति मानने का आग्रह किया जाता रहा है। हाफिज बरखुरदार नाम से विख्यात यह पंजाबी कवि लाहौर के ग्राम पिण्ड मुसलमानी, परगना चीमा चट्ठा का रहने वाला था। इनका जन्म शाहजहाँ के शासनकाल में हुआ, पर इनको विशेष ख्याति औरंगजेब के समय में प्राप्त हुई। इनकी पंजाबी रचनाएँ इस प्रकार हैं- 'यूसुफ जुलेखा', 'सस्सी पुन्नू', 'मिर्जा साहिबा', 'किस्सा खेची'।

पंजाबी में यूसुफ जुलेखा के ये प्रथम किस्साकार हैं। 'यूसुफ जुलेखा' की रचना इन्होंने सन् १०६० हिजरी में, औरंगजेब के समकालीन नवाब जफर खाँ की प्रेरणा से की थी। पुरस्कार स्वरूप नवाब ने इन्हें सात बीघा भूमि, घोड़ा और एक सौ रुपये प्रदान किया था। हाफिज की 'यूसुफ जुलेखा' का सम्पूर्ण ढ़ाँचा शेख निसार कृत 'यूसुफ जुलेखा' के अनुरूप है। यह कृति यूसुफ की दृढ़ता तथा जुलेखा के भावुक प्रणय की सुन्दर रोमानी कथा बन गयी है।

अहमदयार कृत यूसुफ जुलेखा

अहमदयार (सन् १७६८-१८४५ ई०) के प्रेमाख्यान पंजाबी भाषा में विशेष प्रसिद्ध हुए। इन्होंने बीसों प्रेमाख्यानों की रचना की है, इनमें 'हीर राझाँ', 'सस्सी पुन्नू', 'यूसुफ जुलेखा', 'लैला मजनू', 'जैफुल मलूक', 'सोहनी महीवाल' तथा 'चन्दर बदन' आदि प्रमुख हैं। इनके द्वारा रचित 'यूसुफ जुलेखा' की गणना उत्कृष्ट सूफी प्रेमाख्यानों में की जाती है।

इसके अतिरिक्त खअद्उद्दीन कृत 'किस्सा हजरत यूसुफ' मुहम्मद अब्दुल गनी कृत 'परदेसी यूसुफ' तथा खादम हुसैन कृत 'जुलेखा की फरियाद' नामक कृतियाँ भी इसी लोक विश्रुत आख्यान से सम्बद्ध है।

---

१. डॉ० शिवकृष्ण रैणा, कश्मीरी भाषा और साहित्य, पृ० १०१

सिन्धी भाषा में सैयद मुर्तजाई कृत यूसुफ जुलेखा

सिन्धी भाषा में कवि सैयद मुर्तजाई का जीवन काल १८४३ से १९०७ के बीच माना जाता है। इन्होंने जामी के 'यूसुफ जुलेखा' को आदर्श मानकर उसी नाम से सिन्धी भाषा में काव्य रचना की। अन्तर केवल इतना है कि मुर्तजाई ने 'यूसुफ जुलेखा' से सम्बद्ध कुछ और भी सामग्री जुटाई है, जबकि जामी की काव्यकृति अपेक्षाकृत अधिक मौलिक है।

बंगला में यूसुफ जुलेखा

बंगला में यूसुफ जुलेखा की इस प्रेमकथा को आधार बनाकर काव्य रचना करनेवाले अनेक कवि हुए हैं, जिनमें गरीबुल्लाह, शाह मुहम्मद सागिर, फकीर मुहम्मद, अब्दुल हकीम आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

गरीबुल्लाह अठारवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हुए थे। उन्होंने जामी की फारसी काव्यकृति 'यूसुफ जुलेखा' के आधार पर 'अमीर हमजा' नाम से काव्य रचना की, जिसका रूपान्तर 'जंगनामा' नाम से हो चुका है।

बंगला के प्रसिद्ध कवि शाह मुहम्मद सागिर ने भी ईसा की सत्राहवीं शताब्दी में 'यूसुफ जुलेखा' नामक काव्य का प्रणयन किया।

हिन्दी भाषा में यूसुफ जुलेखा

हिन्दी भाषा में भी यूसुफ जुलेखा कहानी की एक प्रशस्त परम्परा प्राप्त होती है। जिसमें शेख निसार, शेख रहीम, कवि नसीर के नाम उल्लेखनीय हैं। हिन्दी के इन रचनाकारों ने अपनी कथा का आधार 'कुरान' से ग्रहण किया है। इनपर फारसी और उर्दू के रचनाकारों का भी प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

शेख निसार कृत यूसुफ जुलेखा

हिन्दी की यूसुफ जुलेखा काव्य-परम्परा में शेख निसार का नाम अग्रगण्य है। परवर्ती सूफी रचनाकारों में शेख निसार अपने रचनाकर्म के कारण स्मरणीय है। इनका जन्म सन् १७३३ ई० में अयोध्या एवं रुदौली के बीच स्थित शेखपुर नामक गाँव में हुआ था।[1] इनका पूरा नाम शेख गुलाम अशरफ था और इनके पिता का नाम गुलाम मुहम्मद था।[2] इन्होंने अपनी प्रसिद्ध मसनवी 'यूसुफ जुलेखा' के अतिरिक्त सात अन्य ग्रन्थों की रचना की थी।

'यूसुफ जुलेखा' अवधी भाषा एवं दोहा, चौपाई छन्द में लिखा गया है। रीतिकालीन प्रभाव से इस कृति में षड्-ऋतु तथा बारहमासा में कवित्त और सोरठा छन्दों का भी प्रयोग हुआ है। शेख निसार ने ग्रन्थ की रचना कुरान के आधार पर की है। इस पर जामी की प्रसिद्ध फारसी मसनवी का प्रभाव दिखाई पड़ता है। प्रस्तुत कृति में इस पर विशेष विवेचन किया गया है।

---

१. शेख निसार, 'यूसुफ जुलेखा', १/१०

२. वही, १/१०

शेख रहीम कृत भाषा-प्रेमरस

शेख रहीम का जन्म बहराइच के जरवल नामक स्थान पर हुआ था। इनके पिता का नाम यार मुहम्मद था। ये हनफी शाखा के अंसारी मुसलमान थे। इनके गुरु का नाम विलायत अली था, जो सैयद कुल के थे। सन् १६२१ ई० में अर्कुन्निसा (धनुर्पात) रोग से इनका देहान्त हो गया।

शेख रहीम की प्रसिद्ध काव्यकृति 'भाषा-प्रेमरस' है, जिसकी रचना १६१५ ई० में हुई है। इसमें 'यूसुफ जुलेखा' का आख्यान प्रसंगवशात् वर्णित होते हुए भी पर्याप्त विस्तार से है। ग्रन्थ का सर्वाधिक उत्कर्ष वाला अंश भी इसी प्रसंग में देखने को मिलता है। शेख रहीम ने इस कथा का आधार शेख निसार के प्रेमाख्यान से ग्रहण किया है। पर वर्णन वैशिष्ट्य से शेख रहीम की कथा में नवीनता की अभिव्यक्ति हुई है।

कवि नसीर कृत प्रेम-दर्पण

कवि नसीर गाजीपुर जिले के जमानियाँ नामक ग्राम के रहने वाले थे। इनका जीवन स्वयं एक दुःख कथा है। बचपन में ही इनके पिता का देहान्त हो गया । माता ने इनका पालन-पोषण किया तथा एक अध्यापक रखकर इन्हें शिक्षा दिलाई।[1] इन्होंने ऐनुल अहदी नामक व्यक्ति को अपने गुरु के रूप में स्मरण किया है -

ऐनुल अहदी काशी अस्थाना। रूप सरूप दिये जस माना।।
जाते निरंजन तिन्ह परकासू। वही मेरे गुरू हौं उन्हकर दासू।।[2]

इन्होंने सं० १६७४ के भादो महीने की कृष्ण द्वादशी पर शुक्रवार के दिन इस प्रेमगाथा की समाप्ति की थी। 'प्रेम-दर्पण' में यूसुफ जुलेखा की कथा का सविस्तार वर्णन हुआ है। इनके मन में यह कथा कहने की चाह जामी की फारसी एवं फिगार की उर्दू रचना को देखकर उत्पन्न हुई। इसीलिए उन्होंने इस कथा की रचना की। अपने विषय में यह जानते हुए भी कि वे कवि नहीं हैं, उन्हें अपने ग्रन्थ से सन्तोष था, क्योंकि इसमें करतार का वर्णन है।[3]

इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न भाषाओं में इस प्रेमाख्यान की एक प्रशस्त परम्परा दिखाई पड़ती है। यह सामग्री सम्यक् अनुशीलन की दृष्टि से अनुसंधाताओं की बाट देख रही है।

---

१. कवि नसीर कृत प्रेम-दर्पण
२. कवि नसीर कृत प्रेम-दर्पण
३. कवि नसीर कृत प्रेम-दर्पण

शेख निसार कृत यूसुफ जुलेखा

उपलब्ध प्रतियाँ

वैसे तो 'यूसुफ जुलेखा' का प्रामाणिक पाठ प्रस्तुत करने की दृष्टि से इसकी अधिकाधिक प्रतियों को खोज निकालना आज भी अनुसंधित्सुओं के लिए एक चुनौती भरा कार्य है, फिर भी कार्यारम्भ के लिए इसकी तीन प्रतियों का उपलब्ध होना भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।

१. हिन्दुस्तानी एकेडमी की प्रति

हिन्दुस्तानी एकेडमी से उपलब्ध 'यूसुफ जुलेखा' की प्रति सन् १२४४ हिजरी की है। फारसी लिपि में लिखी हुई यह हस्तलिखित प्रति हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग के संग्रहालय में थी, अब अनुपलब्ध है। प्राप्त जानकारी के अनुसार इस प्रति में कुल ३४१ पृष्ठ हैं और प्रत्येक पृष्ठ में १३ से १५ पंक्तियाँ हैं। इसका आकार ७.५" × ४.५" है। प्रारम्भ के तीन पत्र और अन्तिम पत्र कुछ खण्डित हैं। अन्य सभी पन्ने ठीक दशा में हैं। यह प्रति सुलतानपुर जिले के गंगयो निवासी हाफिज समीउल्लाह खाँ तरीन बी०ए०, एल०एल०बी० के यहाँ से प्राप्त हुई थी। इस प्रति के आधार पर सत्यजीवन वर्मा ने सन् १९३० ई० में शेख निसार कृत मसनवी 'यूसुफ जुलेखा' शीर्षक एक विशद परिचयात्मक लेख लिखा था। पं० गणेशप्रसाद द्विवेदी ने सन् १९५३ में प्रकाशित 'हिन्दी प्रेम गाथा काव्य संग्रह' में कवि का संक्षिप्त परिचय तथा मूल कृति का कुछ भाग दिया था। इसकी पुष्पिका निम्नलिखित है- "पोथी जुलेखा हिन्दी, २९, रमलानुल्मुबारक सन् १२४४ हिजरी में मवैया गाँव जो इलाका पच्छुम राठ में है बदर्वाजे लाला ब्रजलाल लिखी गयी। लेखक नूरअली वल्द मोहम्मद हसन जमीदार साकिन शेखपुर जाफर इलाका रौनाही, अमला परगना मंगलसी, सरकार सूबा अवध शासनकाल, नवाब मुर्शिद नसीरुद्दीन बहादुर।"

खेतासराय की प्रति

'यूसुफ जुलेखा' की यह प्रति सन् १९०१ ई० में शेख रहमतुल्लाह मौजा खेतासराय, जिला बाराबंकी द्वारा प्रतिलिपिबद्ध हुई है। यह प्रति इस अर्थ में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है कि इसमें हमें 'यूसुफ जुलेखा' की एक दूसरी प्रतिलिपि की सूचना मिलती है, जो अब तक की प्रतियों में सबसे प्राचीन अर्थात् सन् १२२६ हिजरी की है। इसकी पुष्पिका ध्यान देने योग्य है-

"करम खाँ वल्द फहेम खाँ, साकिन मौजा जगनपुर ने जो अपने हाथों से सब्बाल सन् १२२६ हिजरी में लिखी थी उससे शेख रहमतुल्लाह बल्द गौहर अली साकिन मौजा खेतासराय बाराबंकी ने १५ रजबुल्रजब सन् १३१६ हिजरी मुताबिक २८ अक्टूबर सन् १९०१ में नकल की।"

अताउल्लाह खाँ की प्रति

'यूसुफ जुलेखा' (सन् १३१६ हिजरी) की यह प्रति श्री गोपालचन्द्र सिन्हा ने फैजाबाद के श्री अताउल्लाह खाँ के पास से प्राप्त किया था और नार्मल स्कूल फैजाबाद के अध्यापक श्री भवानीभीख त्रिपाठी 'दिव्य' के माध्यम से फारसी लिपि से देवनागरी में लिप्यंतरित करवाया। इस एक प्रति को लिप्यंतरित प्रति के साथ सिन्हा जी ने अपने जीवन के मध्यकाल में लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग के तत्कालीन रीडर डॉ० रामफेर त्रिपाठी को सौंप दिया था। श्री अताउल्लाह खाँ की प्रति की पुष्पिका इस प्रकार है-

"यकुम जिल हिज सन् १३१६ हिजरी में मोहम्मद हामिद अली वल्द शेख रमजान अली साकिन व जमींदार हरहवा, जिला बाराबंकी ने तहरीर किया।"

रामरक्षा त्रिपाठी 'निर्भीक' की प्रति

यूसुफ जुलेखा की एक प्रति मेरे पिताश्री डॉ० राधिकाप्रसाद त्रिपाठी को पं० रामरक्षा त्रिपाठी निर्भीक (अयोध्या, फैजाबाद) के सौजन्य से प्राप्त हुई। यह प्रति स्वयं निर्भीक जी द्वारा देवनागरी में लिप्यंतरित है। निर्भीक जी ने इसे किस प्रति से तैयार किया था यह नहीं ज्ञात हो सका। इस प्रति के बीच-बीच में कुछ पंक्तियाँ खण्डित हैं। तथापि पाठ की साधुता की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। प्रारम्भ में निर्भीक जी इस कृति को सम्पादित करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने पाठ-शोधन की दृष्टि से अनेक स्थलों पर इतने परिवर्तन कर दिये हैं कि उनमें मूल पाठ प्रायः खो सा गया है। सौभाग्य से मूलपाठ कट जाने के बावजूद अपनी जगह पर पठनीयता को बचाये हुए है और पाण्डुलिपि विकृति होने से बच गयी है। इस पाण्डुलिपि के आदि और अन्त में कोई पुष्पिका नहीं है।

कथावस्तु

किना नामक नगर में याकूब नाम के एक नबी रहते थे। उनकी सात पत्नियाँ थीं, जिनसे बारह पुत्र हुए। उनका सबसे छोटा पुत्र यूसुफ परम रूपवान था। वह पिता को अत्यन्त प्रिय था। यूसुफ के प्रति पिता के अपार स्नेह को देखकर अन्य भाई उससे ईर्ष्या करने लगे। एक रात यूसुफ ने अद्‌भुत स्वप्न देखा और अपने पिता को स्वप्न के विषय में बताया कि "ग्यारह ग्रहों के साथ सूर्य और चन्द्रमा उसके सामने नतमस्तक हुए थे" पिता ने यह स्वप्न अपने भाइयों को बताने से मना किया। परन्तु, यूसुफ ने स्वप्न की बात भाइयों को बता दी। इस बात को सुनकर भाइयों को घोर ईर्ष्या हुई और उन्होंने यूसुफ की हत्या का षड्यंत्र रचा। वे यूसुफ को फुसला कर भेड़ों को चराने के बहाने अपने साथ जंगल में ले गये। वहाँ यातना देकर उसे अंधे कुएँ में डाल दिया। यूसुफ के रोने तथा बार-बार अनुनय-विनय करने का उन बेरहम हत्यारे भाइयों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उन भाइयों ने बकरी के खून में यूसुफ के कपड़े रंगकर पिता याकूब को दिखाया और कहा कि यूसुफ को भेड़िया खा

गया। यह दुःखद समाचार सुनकर पिता याकूब पुत्र-शोक में विकल हो उठे और रो-रो कर अपनी आँखें खो दीं। उनका जीवन गम के अँधेरे में डूब जाता है।

इधर यूसुफ को कुएँ में पड़े सात दिन बीत गये। अगले दिन बंजारों का एक काफिला आकर जंगल में उसी स्थान पर रुका। अंधे कुएँ से यूसुफ की दर्द भरी पुकार सुनकर काफिले के नायक ने अपने साथियों के सहयोग से यूसुफ को बाहर निकाला। संयोगवश उसी समय यूसुफ के भाई भी वहाँ पहुँच गये। उन्होंने यूसुफ के विरुद्ध नायक से शिकायत की कि यह हमारा दास है और चोरी के अपराध के कारण इसे कुएँ में डाल दिया था। भाइयों ने यूसुफ को उन बंजारों के हाथों थोड़े से दाम में बेच दिया। बंजारे यूसुफ को जंजीर में बाँधकर मिस्र देश ले गये। रास्ते में यूसुफ ने माँ की समाधि देखी। वह समाधि से लिपट कर रोने लगा। इस कारण एक दास ने उसकी बड़ी निर्ममता से पिटाई की। यूसुफ के प्रति इस निर्मम व्यवहार को देखकर प्रकृति भी अत्यन्त दुःखी हो उठी। माँ की समाधि काँपने लगी। चारों ओर भयानक तूफान आ गया। ऐसा लगा जैसे अफाट अंधकार में सब कुछ विलीन हो जायेगा। खुदा के इस कहर का एहसास होते ही नायक ने यूसुफ से छमा-याचना की और उसकी बेड़ियाँ कटवा दिया। वह यूसुफ को सुन्दर वस्त्रों से सुसज्जित कर ससम्मान अपने साथ मिस्र देश ले गया। वहाँ यूसुफ को अपने पिता की बहुत याद आती थी। वह हमेशा पिता के वियोग में अश्रुपात किया करता था, पर किसी को कुछ नहीं बताता।

जुलेखा पश्चिम के मगरिब देश के सुलतान तैमूसशाह की अपूर्व सौन्दर्यमयी पुत्री थी। एक रात उसने स्वप्न में एक परम सौन्दर्यवान युवक को देखा। जागने पर वह उसकी याद में व्याकुल हो उठी। हर समय वह उदास रहती। धीरे-धीरे उसका खाना-पीना, आमोद-प्रमोद सब कुछ छूट गया। आँखों से हमेशा अश्रु बहते रहते थे। अपनी सखियों से भी वह कुछ नहीं बताती। एक दिन धाय के बार-बार पूछने पर जुलेखा ने अपने दुःख का कारण बताया और स्वप्न में देखे युवक को प्राप्त करने का उपाय पूछा। पर समस्या थी कि उस युवक का नाम-पता कुछ भी तो नहीं मालूम था।

प्रिय की याद में जुलेखा का वियोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता गया। उसकी स्थिति दयनीय होती गयी। इस बीच जुलेखा ने पुनः स्वप्न में उस स्वप्न-प्रिय को देखा, किन्तु इस बार भी वह प्रिय से नाम-पता नहीं पूछ पायी। उसकी विरह व्यथा अत्यधिक बढ़ जाती है। वह पागल सी हो जाती है। उसे विक्षिप्त देखकर पिता ने उसके पैरों में बेड़ियाँ डलवा दी। एक रात पुनः जुलेखा को उसी स्वप्न-प्रिय के दर्शन होते हैं। तीसरे स्वप्न में यूसुफ भी जुलेखा को अपनी प्रीति का विश्वास दिलाते हुए अपना नाम-पता बताता है। उसने स्वयं को मिस्र का वजीर बताया। इस तरह स्वप्न प्रिय का परिचय पाकर जुलेखा उसे पाने का निश्चय कर लेती है। उसके लिए यह जीवन-मरण का प्रश्न बन जाता है।

धाय माँ की सलाह पर सुलतान ने जुलेखा का विवाह मिस्र देश के वजीर के साथ करवा दिया। परन्तु, विवाह के पश्चात् जब जुलेखा ने वजीर को देखा तब उसे लगा कि

वह उसका स्वप्न-प्रिय नहीं है। वह बहुत ही निराश और दुःखी हुई। वह मृत्यु का वरण करना चाहती है, किन्तु धाय के सान्त्वना देने और समझाने पर बीमारी के बहाने अपने सतीत्व की रक्षा करते हुए हृदय से यूसुफ से मिलने की आशा सँजोए जीवन व्यतीत करने लगती है। अहर्निश वह यूसुफ की स्मृति में खोयी हुई अश्रुपात करती रहती थी। कभी वह दुःखी होकर कहती कि जिसके लिए लाज-धर्म सब कुछ छोड़ कर मैं मिस्र देश आयी, उसी ने मेरे साथ छल किया।

एक दिन कबीले का नायक सौदागर यूसुफ को दास बनाकर मिस्र के चौक में बेचने के लिए आता है। यूसुफ के अपूर्व रूप को देखकर सभी लोग हैरान हो उठते हैं। उसके सौन्दर्य की चतुर्दिक चर्चा होने लगती है। जुलेखा भी उसके सौन्दर्य की प्रशंसा सुनकर धाय के साथ देखने जाती है। वह देखते ही उसे पहचान लेती है कि यही उसका स्वप्न-प्रिय यूसुफ है। जुलेखा के निवेदन पर निःसंतान वजीर बादशाह की अनुमति पाकर पुत्र के रूप में रखने की मंशा से यूसुफ को खरीद लेता है।

जुलेखा यूसुफ को अपना स्वप्न-प्रिय होने का विश्वास दिलाती है। वह अनेक प्रकार से अपना प्रेम प्रकट करती है। परन्तु, यूसुफ का ध्यान जुलेखा की ओर नहीं जाता है। यूसुफ में कामवासना जागृत करने के लिए जुलेखा अनेक प्रयास करती है, पर सब व्यर्थ सिद्ध हुए। पल भर के लिए यूसुफ आकर्षित होकर जुलेखा को आलिंगन अवश्य कर लेता है, किन्तु तत्क्षण कर्तव्य-बोध होने के कारण वह जुलेखा के आकर्षण से स्वयं को मुक्त कर लेता है। जुलेखा बलात् यूसुफ से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करती है। यूसुफ महल से भागकर अपना बचाव करता है। भागते हुए यूसुफ के कुर्ते के पिछले हिस्से का एक टुकड़ा भर जुलेखा के हाथ में आता है। जुलेखा रुष्ट होकर अपने पति वजीर से यूसुफ पर दुश्चरित्र होने का आरोप लगाती है। यूसुफ के कुर्ते का पिछला हिस्सा फटा देखकर वजीर जुलेखा को ही दोषी समझता है, किन्तु प्रतिष्ठा हानि की डर से यूसुफ को दण्डित करना आवश्यक समझता है।

यूसुफ को कारावास की सजा हो जाती है। जुलेखा उसे दण्ड दिलाकर वियोग और प्रायश्चित की आग में जलने लगती है। नगर में सर्वत्र जुलेखा के दुश्चरित्रता की चर्चा होने लगती है। जुलेखा अपनी सफाई पेश करने के लिए नगर की स्त्रियों को निमंत्रित करती है। वह कारागार से यूसुफ को भी बुलवाती है। यूसुफ के सौन्दर्य से अभिभूत स्त्रियाँ अपने हाथ में दी गई छुरी से नीबू के स्थान पर अपनी उँगली काट बैठती हैं। जुलेखा के बताने पर वे स्त्रियाँ लज्जित होती हैं और उससे क्षमा-याचना करती हैं।

यूसुफ ने कारागार में दो बंदियों द्वारा देखे गये स्वप्न का फल बताया। एक बंदी ने स्वयं को मदिरा निचोड़ते तथा दूसरे ने सिर पर रखी रोटियाँ खाते हुए पक्षी को देखा। स्वप्न-फल बताते हुए यूसुफ ने कहा कि मदिरा देने वाला व्यक्ति तो राजा को मदिरा

पिलायेगा तथा दूसरा सूली पर चढ़ाया जायेगा। स्वप्न सत्य सिद्ध होता है। यूसुफ की ख्याति एक स्वप्न विश्लेषक के रूप में फैल जाती है। एक बार मिस्र के सुलतान का स्वप्न-विश्लेषण करते हुए यूसुफ ने बताया कि तुम्हारे राज में सात वर्ष तक खूब वर्षा होगी और अपार अन्न पैदा होगा, पुनः सात वर्ष तक भयानक अकाल पड़ेगा। सुलतान यूसुफ द्वारा किये गये स्वप्न सम्बन्धी व्याख्या से अत्यन्त प्रभावित हुआ। उसने वजीर से यूसुफ के कैद किये जाने का कारण पूछा। जुलेखा ने सब कुछ साफ-साफ बताते हुए अपनी गलती के लिए क्षमा माँगी। वजीर ने जुलेखा को उसकी दुश्चरित्रता के लिए परित्याग कर दिया। सुलतान यूसुफ को कारागार से मुक्त करके अपना वजीर बना लेता है।

यूसुफ की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होती है। दुर्भिक्ष के कारण यूसुफ के भाई भी अन्न की तलाश में मिस्र पहुँचते हैं। वर्षों उपरान्त भी यूसुफ अपने भाइयों को पहचान लेता है। वह उन्हें बहुत सा अन्न देता है और उनके माध्यम से पिता याकूब के पास संदेश भेजता है। यूसुफ का समाचार पाकर पिता याकूब बहुत प्रसन्न होते हैं। वह यूसुफ से मिलने के लिए चल पड़ते हैं। इस प्रकार तीस वर्षों के पश्चात् यूसुफ की अपने पिता से भेंट होती है। कालान्तर में मिस्र के वृद्ध सुलतान ने अपनी गद्दी यूसुफ को सौंप दी।

इधर जुलेखा की दशा अत्यन्त दयनीय हो जाती है। वह यूसुफ की याद में निरन्तर विलाप करती है। उसकी नींद, भूख, प्यास सब कुछ चली जाती है। धन-ऐश्वर्य, रूप-सौन्दर्य, यहाँ तक कि आँखों की ज्योति खोकर भी वह यूसुफ के लिए दर-दर भटकती रहती है। चालीस वर्ष की चिर प्रतीक्षा के बाद उसका यूसुफ से मिलन होता है। याकूब की कृपा से जुलेखा को पुनः पूर्व रूप-वय प्राप्त हो जाता है। सोलहों शृंगार तथा बारहों आभूषण से सुसज्जित जुलेखा का शुभ-मुहूर्त पर यूसुफ से विवाह सम्पन्न होता है। दोनों का वैवाहिक जीवन सुखमय बीतता है। परन्तु, कुछ समय के पश्चात् जुलेखा सांसारिक प्रेम से विरक्त होकर ईश्वरीय प्रेम की ओर उन्मुख हो जाती है। उसे यह अनुभव होता है कि जितना समय उसने एक मनुष्य के लिए गँवाया, उतना यदि परमात्मा को पाने के लिए लगाया होता तो उसे मुक्ति मिल जाती। इस आत्मज्ञान के साथ वह तन से यूसुफ की सहचरी होकर भी मन से एकदम अलग हो जाती है। जुलेखा के प्रति यूसुफ का प्रेम भी कम नहीं है। वह जुलेखा की अलख साधना में बाधक नहीं बनता है। वह जुलेखा को सांसारिक चिंताओं से मुक्त करने का यथासम्भव प्रयत्न करता है।

कालान्तर में वृद्धावस्था को प्राप्त होकर यूसुफ की मृत्यु हो जाती है। उसे निष्प्राण देख कर जुलेखा मूर्छित हो जाती है। तीन दिन तक मूर्छित रहने के पश्चात् जब जुलेखा होश में आती है तब वह अपने सारे शृंगार उतार कर धरती पर सिर पटक-पटक कर विलाप करने लगती है। वह अपने अतीत जीवन की स्मृतियों में खो जाती है और पश्चाताप करती

है। प्रियतम के बिना वह जीवन को धिक्कारती है। उसे अपना सारा जीवन सूना-सूना लगता है। तड़प-तड़प कर वह यूसुफ की समाधि पर प्राण त्याग देती है। क्षार-क्षार में मिल जाता है। यूसुफ और जुलेखा की समाधियाँ एक ही स्थान पर बनायी जाती हैं।

कथा का आधार

'यूसुफ जुलेखा' की प्रेमकहानी विश्व की प्राचीनतम लोकप्रिय प्रेमगाथा है। इस्लाम धर्म का प्रचार-प्रसार जिन क्षेत्रों में हुआ वहाँ यह कहानी न केवल जन-मानस में लोकप्रिय हुई, अपितु रचनाकारों के लिए भी आकर्षण का केन्द्र बनी। यद्यपि मूलकथा में प्रेमतत्त्व का अभावसा है। तथापि यूसुफ के साथ एक अनाम महिला का प्रेम-प्रसंग जुड़ा है। इस आधार पर इसे प्रेमकहानी का स्वरूप प्रदान करने की पूरी गुंजाइश थी। कदाचित् इसीलिए बाद में सूफी साधना और साहित्य के अन्तर्गत यह कहानी विशेष लोकप्रिय हुई।

वस्तुतः शेख निसार कृत 'यूसुफ जुलेखा' एक प्रेमाख्यान है। इसमें 'कुरान' की कथा के साथ सूफी साधना का मादन भाव स्वाभाविक रूप से घुल-मिल गया है। उसकी छानबीन अलग से करने की आवश्यकता है। यह भी विचारणीय है कि कवि की रचनात्मक प्रतिभा मूल कहानी से जुड़कर किस रूप में प्रतिफलित हुई। शेख निसार ने आलोच्य कृति का कथात्मक ढाँचा 'कुरान' में वर्णित यूसुफ की कथा से ग्रहण किया है। इस सन्दर्भ में उनका स्पष्ट कथन है कि मैंने 'कुरान' में इस कथा के विषय में जैसा सुना और पढ़ा था उसी सत्य कथा को स्वतंत्र रूप में कहा है-

कहौ स्वतंत्र कथा अति साँचा। जस कुरान में सुना औ बाँचा।।१/१५

कवि कथन को ध्यान में रखकर हम देखते हैं कि शेख निसार कृत 'यूसुफ जुलेखा' और 'कुरान' के यूसुफ सम्बन्धी आख्यान का मूल ढाँचा एक जैसा है। यूसुफ का अपने पिता याकूब को अत्यन्त प्रिय लगना, यूसुफ के भाइयों का उसके प्रति ईर्ष्या करना, यूसुफ को षड्यंत्र पूर्वक पिता से अलग करना, जंगल में ले जाकर उसे अंधे कुएँ में डाल देना, पुनः उसे बंजारों के हाथ बेच देना और याकूब को इस बात की सूचना देना कि यूसुफ को भेड़िये ने खा डाला, व्यापारियों द्वारा यूसुफ को मिस्र में ले जाकर बेंचना, मालिक की पत्नी का यूसुफ के प्रति आकृष्ट होना और उससे वासना तृप्ति के लिए आग्रह करना, मालिक की पत्नी द्वारा यूसुफ पर दुश्चरित्रता का आरोप लगाना और उसे बंदी बनवा देना, बंदी गृह में दो व्यक्तियों को स्वप्न-फल बताना, राजा के द्वारा देखे गये स्वप्न का विचार कर राज्य में अकाल पड़ने की भविष्यवाणी करना। अकाल के समय यूसुफ द्वारा अपने भाइयों को अन्न देना और उन्हें पहचानना, पिता याकूब को नेत्र ज्योति मिलना तथा पिता-पुत्र मिलन के पश्चात् ईश्वर की महिमा का गायन करना आदि घटनाएँ 'कुरान शरीफ' और शेख निसार कृत 'यूसुफ जुलेखा' में समान रूप से वर्णित है। किन्तु, जहाँ कवि को अपनी काव्य प्रतिभा का उपयोग

करने का अवकाश मिला है वहाँ उसने तनिक भी चूक नहीं की है। जुलेखा का तो सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही कवि के द्वारा निर्मित हुआ है। जुलेखा का नख-शिख वर्णन, उसके यौवन का आगमन, स्वप्न-दर्शन, विरह-वेदना, अजीज से उसका विवाह-सम्बन्ध जैसे कथा व्यापारों का कुरान में वर्णन नहीं मिलता है। जुलेखा का अपने पति से सतीत्व की रक्षा करना, यूसुफ के लिए सर्वस्व त्याग करना, विरह भावना के कारण नेत्रहीन, सौन्दर्यहीन और वृद्ध होना तथा अन्त में जुलेखा का यूसुफ से मिलन, दोनों का गार्हस्थ्य-जीवन, यूसुफ और जुलेखा का निधन आदि घटनाएँ भी शेख निसार की काव्य-प्रतिभा की उपज है।

'कुरान' की कथा में जुलेखा ने प्रीतिभोज के अवसर पर मेवे रखे थे जबकि शेख निसार नीबू की बात कहते हैं। यह कवि की मौलिक उद्‌भावना है। 'यूसुफ जुलेखा' की कथावस्तु में जो प्रसंग 'कुरान' से भिन्न है उसमें अधिकांश फारसी के सूफी कवि मौलाना अब्दुल रहमान जामी कृत 'यूसुफ जुलेखा' पर आधारित है।

प्रेमतत्त्व निसार कृत 'यूसुफ जुलेखा' का प्राण है, जो 'कुरान' की कथा में उपलब्ध नहीं है। कुरान की कथा में एक अज्ञातनामा स्त्री का वर्णन है, किन्तु वह प्रेम से सर्वथा दूर वासना की प्रतिमूर्ति दिखायी पड़ती है। वह अपनी वासना-पूर्ति के लिए प्रीति और भय का नाटक करती है, जबकि शेख निसार की आलोच्य रचना आद्योपांत प्रेम रस से सिक्त है। वहाँ यदि वासना है तो वह प्रेम का अनुषंग बनकर आया है। शेख निसार द्वारा वर्णित प्रेमतत्त्व यद्यपि अपने स्वरूप में सूफी प्रेम-दर्शन से शक्ति ग्रहण करता है, तथापि इस प्रेम का प्रारम्भ जुलेखा के पक्ष से दिखाया जाना और प्रिय को प्राप्त करने का उपक्रम भी उसी की ओर अंकित करना, सूफी प्रेमाख्यान परम्परा से भिन्न है। क्योंकि, वहाँ प्रेमोद्‌भव और उसे प्राप्त करने का प्रयत्न सदैव नायक की ओर से दिखाया जाता है। इस रूप में 'यूसुफ जुलेखा' भारतीय प्रेमाख्यान-परम्परा से बहुत दूर तक प्रभावित है।

चरित्र सृष्टि की दृष्टि से भी 'यूसुफ जुलेखा' पर 'कुरान' के प्रभाव तथा कवि की रचनाशीलता पर विचार करना आवश्यक है। 'कुरान शरीफ' में मात्र यूसुफ का चरित्र वर्णित हुआ है। अनाम महिला (जुलेखा) सहित याकूब आदि अन्य समस्त पात्र कायदे से पात्रता प्राप्त करने में भी सफल नहीं हुए हैं। यूसुफ का चरित्र भी 'कुरान शरीफ' में बहुत कुछ निस्संग भाव से अंकित हुआ है। 'कुरान' में यूसुफ के चरित्र के माध्यम से सच्चाई, सत्यप्रियता, एकेश्वरोपासना का उपदेश दिया गया है। जबकि शेख निसार ने अपनी काव्यकृति में यूसुफ को प्रेम और करुणा से अभिभूत दिखाया है। शेख निसार ने यूसुफ, जुलेखा और याकूब का विशद वर्णन किया है। कभी-कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि जुलेखा ही इस प्रेमाख्यान की सर्वप्रमुख पात्र है और इस नाते उसका व्यक्तित्व सम्पूर्ण कथा पर छाया

हुआ है। विरह के बाण से विद्ध सरल हृदया जुलेखा का निश्छल व्यक्तित्व-सचमुच शरद ऋतु की चाँदनी सा निर्मल बन पड़ा है। जुलेखा का यह चरित्र मुख्य रूप से जामी से प्रभावित है और यत्र-तत्र उस पर भारतीय भक्ति-दर्शन का भी प्रभाव दिखायी पड़ता है। याकूब के चरित्र को उभारने में कवि निसार का निजी आहत पितृत्व विशेष रूप से क्रियाशील रहता है। बाईस वर्ष की युवावस्था में मृत्यु-शैया पर पड़े हुए निसार के एक मात्र पुत्र लतीफ ने पिताश्री को बोध देते हुए 'कुरान' में वर्णित याकूब और यूसुफ के प्रसंग को सुनाया था। वही मर्मकथा इसकी मुख्य प्रेरणाभूमि बन गयी है। इसलिए यह कृति वात्सल्य रस से आविष्ट है।

इस प्रकार शेख निसार ने 'यूसुफ जुलेखा' में 'कुरान', फारसी कवि जामी तथा भारतीय चिन्तन से प्रभाव ग्रहण किया है और उसे अपनी मौलिक उद्‌भावना शक्ति से रंजित कर एक मौलिक काव्यकृति बना दिया है।

भारतीय धर्म-साधना का प्रभाव

भारतीय उप-महाद्वीप में सूफी धर्म-दर्शन के पदार्पण के साथ ही यहाँ की परिस्थितियों और धर्म साधना का अनेक रूप में व्यापक प्रभाव पड़ा। पर, नाथपंथी साधना का प्रभाव सूफियों पर सर्वाधिक दिखाई पड़ता है। 'यूसुफ जुलेखा' इसका अपवाद नहीं है। इसके 'आदि खण्ड' में अनेक स्थलों पर अलख, अनहद, तुरिया, निरंजन जैसे नाथपंथी शब्दों का प्रयोग मिलता है। शेख निसार के यूसुफ और जुलेखा का आराध्य ही अलख है-

कहा जुलेखा मोहि न भावै। अलख ध्यान छुट आन न आवै।।
मोहि को एक अलख कै आसा। विरथा यह सुख भोग विलासा।। २६/६

जुलेखा का यूसुफ के प्रति समर्पण भाव भारतीय पत्नीव्रत के आदर्श से प्रेरित है। प्रिय प्राप्ति के बाद जुलेखा का अध्यात्म की ओर उन्मुख होना[1], बालक यूसुफ को इन्द्र के समान बताना[2], याकूब का अपने पुत्रों को वेद पढ़ाना[3], यूसुफ द्वारा वेदान्तों का अध्ययन करना[4], याकूब का मृत्यूपरान्त शिव लोक जाना[5] आदि प्रसंग इस बात को रेखांकित करते हैं कि शेख निसार भारतीय धर्म-संस्कृति और दर्शन से अत्यधिक प्रभावित है। यहाँ तक कि उन्होंने अपने पैगम्बर कथानायक यूसुफ एवं उनके पिता याकूब को वेद-वेदान्तों का पठन-पाठन करते प्रस्तुत किया। निसार ने नबी याकूब के शिवलोक गमन की बात कही है। कवि का यह प्रयत्न हिन्दू-मुस्लिम सद्‌भाव के रूप में देखा जाना चाहिए। जुलेखा का मूर्ति पूजा प्रसंग भी

---

१. शेख निसार, यूसुफ जुलेखा, २६/३
२. वही, १२/१
३. वही, २/४
४. वही, १५/२५
५. वही, २६/६

कवि की उदारतावादी दृष्टि का प्रमाण है। परन्तु, प्रिय मिलन की कामना पूरी न होने पर जुलेखा द्वारा मूर्ति उपासना के प्रति अविश्वास और क्रोधावेश में मूर्ति को खण्डित कर देने की घटना कवि निसार पर कट्टरपंथियों के दबाव के रूप में महसूस किया जा सकता है। यही वजह है कि साम्प्रदायिक सौहार्द के कायल सूफी कवियों को समय-समय पर अपनी सफाई पेश करनी पड़ी है। महमूद बहरी जैसे रचनाकारों को कहना पड़ा-

हिन्दी तो जबान है हमारी। कहते न लागे हमन को भारी।।
हर बोल में मारेफत की बानी। सीता की न राम की कहानी।।[1]

यत्र-तत्र भारतीय कर्मफल सिद्धान्त का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। 'उपसंहार खण्ड' में लतीफ जीवन की अन्तिम घड़ी में अपने पिता शेख निसार को सान्त्वना देते हुए रामकथा की ओर आकृष्ट होता है। यहाँ कवि भारतीयता से प्रभावित लगता है। सच यह है कि इस कृति के रचनाकाल तक हिन्दू-मुस्लिम संस्कृतियाँ एक दूसरे के अत्यधिक निकट आ गयी थीं।

प्रेम-निरूपण

'यूसुफ जुलेखा' की प्रेम-कहानी 'कुरान शरीफ' पर आधारित है, जो इस्लामी धर्म-दर्शन से बहुत गहराई के साथ सम्बद्ध है। सूफी साधकों का पारस-स्पर्श पाकर इस कहानी का प्रेम-तत्त्व बारहबानी का सोना बन गया है। यद्यपि इस कहानी में प्रगाढ़ प्रेम-तत्त्व का समावेश फारस के सूफी संत जामी और अलगजाली आदि ने किया था, पर शेख निसार की रचनात्मक प्रतिभा ने उसे और भी अभिनव रूप-रंग दिया है। लौकिक प्रेम की पवित्र भावभूमि पर ले जाकर उसे वासना मुक्त करने और अन्ततः उसे ईश्वरीय प्रेम में परिणत करने में जैसी सफलता शेख निसार को मिली है वैसी इस परम्परा के किसी अन्य सूफी कवि को नहीं प्राप्त हो सकी।

'यूसुफ जुलेखा' में प्रेमोदय स्वप्न-दर्शन से दिखाया गया है। जुलेखा ईश्वरीय गुणों एवं सौन्दर्य के प्रतीक यूसुफ को स्वप्न में देखकर उस पर अनुरक्त हो जाती है। यहीं से जुलेखा के हृदय में प्रेमांकुर प्रस्फुटित होता है।[2] स्वप्न भंग होने पर वह व्याकुल हो उठती है।[3] जुलेखा के प्रेम की प्रगाढ़ता के लिए कवि तीन बार स्वप्न-दर्शन का सहारा लेता है। प्रथम स्वप्न में

---

१. महमूद बहरि, मनलगन

२. सोवै लागि तेहि समय जुलेखा। यूसुफ कहँ सपने महँ देखा।।
मीठी नींद सबै लग सोवा। प्रेम बीज हिय जामहँ गोवा।।
भान सरूप तहँ आय गय, देखि रहै टक लाय।
लीन्ह प्रान तिन्ह काढ़िकै, रूप अनूप दिखाय।।८/१

३. प्रेम फंद अरुझाने, गई ग्यान मति भूल।
सँवर रूप अकुलाय मन, उठै हिये महँ सूल।।८/२

जुलेखा का ध्यान स्वप्नप्रिय में लग जाता है, द्वितीय स्वप्न में यूसुफ भी जुलेखा को अपनी प्रीति का विश्वास दिलाता है[1] और तृतीय स्वप्न में जुलेखा को स्वप्न प्रिय का परिचय प्राप्त होता है। उसे विश्वास हो जाता है कि उसका प्रिय मिस्र देश के सुलतान का वजीर है। वह प्रिय-मिलन का दृढ़ निश्चय कर लेती है। प्रेम उसके लिए जीवन-मरण का प्रश्न बन जाता है।[2]

यूसुफ के प्रेम में प्राप्त लोकनिन्दा तथा उसके द्वारा परित्यक्त होने पर भी जुलेखा कोई परवाह नहीं करती। यूसुफ की प्राप्ति हेतु वह चालीस वर्ष की दीर्घ अवधि तक तपस्या करती है। वह मन, वचन और कर्म से यूसुफ में लीन हो जाती है। धन, ऐश्वर्य और रूप-सौन्दर्य खोकर जुलेखा असमय वृद्धा हो जाती है। उसकी नेत्र ज्योति चली जाती है। फिर भी, वह लकड़ी का सहारा लेकर यूसुफ को खोजती रहती है।[3] उसके जैसा पुनीत प्रेम अन्यत्र नहीं मिलता। यूसुफ से मिलन के प्रति आशान्वित वह तड़पती है। अन्ततः चालीस वर्ष की प्रतीक्षा के बाद जुलेखा का यूसुफ से मिलन होता है। दोनों का शुभ-मुहूर्त में विवाह सम्पन्न होता है।[4]

इस प्रकार जुलेखा की प्रेम-भावना प्रारम्भ से ही सर्वथा एकान्तिक है। यूसुफ से परिचय होने पर जुलेखा उसकी प्राप्ति का प्रयत्न करती है। जुलेखा के प्रेम और विरह का यूसुफ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह जुलेखा के दास के रूप में रहकर उसके सौन्दर्य और

---

१. कहा कि अस मोहिं उपज्यो सोगू। तुम्हते अधिक सो बिरह वियोगू।।
तुम पर कौन बिथा अस बीती। हौं जस सहौं सो प्रेम पिरीती।।
तोरे बिरह भयो अग्याना। छाँड्यो देस औ नगर अपाना।।
तोरे लाग भयो परदेसी। मिला न कोई प्रेम सँदेसी।।
सो तुम मोहिं भुलावहु नाहीं। राख्यो प्रीति सदा हिय माहीं।।
मोहिं भूल्यहु जिन प्यारी, औ सँवरहु दिन रैन।
करो सदा वैराग चित, तब पावहु सुख चैन।।८/१६

२. जिऊँ तो जाउँ मिसिर कहँ, मरूँ तो मारग माँह।
छार होहुँ उड़ि जाउँ अब, जहाँ बसै मोर नाँह।।८/२३

३. चालिस बरस जोग जिन्ह कीन्हा। दरब भँडार खोय सभ दीन्हा।।
x x x
रोवत नैन भये अँधियारे। रोम-रोम तन विरहिन जारे।।
जब लहि नैन हुते वह केरे। तब लहि दरस प्रीतमहिं हेरे।।
गये नयन भइ रंक भिखारी। बिरह स्वरूप भई वह नारी।।
कूबर निकसि पीठ महँ आवा। बक्र अंग भा सूध सोहावा।।
लै लकुटी हेरत फिरै, नित यूसुफ कै बाट।
जो कोइ नावँ सुनावै, भुइँ महँ धरे लिलाट।।२३/३

४. सुन यूसुफ सिर नाइ के, कीन्ह व्याह कै चार।
बाजे लाग जो नौबत, नाच गौड़ झंकार।।२६/१
जो कुछ होत व्याह कै चारा। सो सब्ह कीन्ह राग रँग सारा।।
सुफल घरी मा व्याह सोहावा। दुखिया दान दरब बहु पावा।।२६/२

प्रेम-चेष्टाओं के प्रति क्षणभर के लिए आकर्षित होता है। उसका प्रेम जुलेखा की भाँति एकान्तिक नहीं है। वह कर्तव्य-भावना से बँधा रहता है और उस क्षणिक आसक्ति का दमन कर देता है। यहाँ यूसुफ का चरित्र को अत्यन्त संयत रूप में अंकित है; क्योंकि इस्लाम धर्मान्तर्गत यूसुफ महापुरुष के रूप में मान्य है। अतः साक्षात्कार से पूर्व ही यूसुफ में कामचेष्टा का होना महापुरुष की गरिमा के अनुरूप न होता।

जुलेखा के प्रति यूसुफ का प्रेम भी अगाध है। यही वजह है कि जब जुलेखा सांसारिकता से विरक्त हो अलख में लीन हो जाती है तो वह जुलेखा की अलख साधना में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं आने देता। उसे अपने पुत्रों तथा अन्य सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त करने के लिए भी वह यथेष्ट प्रयत्न करता है। फिर भी, सम्पूर्ण कथा में जुलेखा का प्रेम अधिकाधिक मुखरित हुआ है। प्रेम को आगे बढ़ाने का सारा प्रयत्न उसी के द्वारा होता है। यूसुफ का स्वरूप अत्यन्त संयत तथा मर्यादित है। यद्यपि वह लोक-व्यवहार की सर्वथा उपेक्षा नहीं कर पाता, अपने भाइयों तथा पिता के प्रति व्यवहार भी रखता है, पर है वह अद्‌भुत और परा कोटि का।

शेख निसार द्वारा वर्णित प्रेम-तत्त्व यद्यपि अपने स्वरूप में सूफी प्रेम-दर्शन से शक्ति ग्रहण करता है और उस पर सूफी साधक जामी की 'यूसुफ जुलेखा' का गहरा प्रभाव है तथापि इस प्रेम का आरम्भ जुलेखा पक्ष से दिखाया जाना और प्रिय को प्राप्त करने का सम्पूर्ण उपक्रम भी उसी के ओर से अंकित करना, सूफी प्रेमाख्यान-परम्परा से भिन्न है। क्योंकि वहाँ प्रेमोद्‌भव और उसे प्राप्त करने का प्रयत्न सदैव नायक की ओर से दिखाया जाता है। इस रूप में 'यूसुफ जुलेखा' भारतीय प्रेमाख्यान-परम्परा से बहुत दूर तक प्रभावित है।

वियोग

'यूसुफ जुलेखा' में जुलेखा का वियोग अत्यन्त कारुणिक है। उसका सम्पूर्ण जीवन वियोग-सिंधु में डूबा हुआ है। संयोग के क्षण उसके जीवन में अल्प समय के लिए आते हैं। जुलेखा को वियोग का प्रथम अनुभव स्वप्न में यूसुफ को देखकर होता है। वह विमोहित हो जाती है, परन्तु स्वप्न टूटने पर वह यूसुफ को नहीं पाती। परिणामतः उसमें अकुलाहट और बेचैनी व्याप्त हो जाती है। वह यूसुफ का बार-बार स्मरण कर अश्रुपात करती है। उसका रोम-रोम विरह बाण से बिंध जाता है। उसके हृदय में विरहाग्नि सुलगने लगती है।[1] उसकी अकुलाहट इतनी बढ़ जाती है कि उसे अपने शरीर का भी ध्यान नहीं रह जाता।[2] वह वियोगावस्था में कभी पागलों की तरह अपने वस्त्रों को फाड़ने लगती है, कभी उठकर घर से

---

१. जब सँवरै मुख तब बिलखाई। पै सुलाज ते रोय न जाई।।
बिरह बान बेधा एक बारा। रोम-रोम व्याकुल तेहि छारा।।
चिनगी बिरह आगि कै लागी। सुलगै लाग हिये महँ आगी।। ८/३

२. सखिन्ह देखि धन बदन मलीना। मन व्याकुल तन सुध-बुध हीना।। ८/३

भागने लगती है और कभी अपने ही शरीर को काटने लगती है।[1]

विरह की अवस्था में प्रकृति भी बदली हुई दिखाई पड़ती है। विरही मन प्रकृति को दूसरे रूप में देखने लगता है। इसीलिए कवियों ने प्रकृति सौन्दर्य में विरही और विरहिणी की मनोदशा का चित्रण करने के लिए षड्ऋतु वर्णन तथा बारहमासा की परम्परा चलायी। कवि निसार ने भी वियोग-वर्णन की इस परम्परा का निर्वाह किया है।

वसन्त ऋतु में जब वन-उपवन में फूल खिलने लगते हैं, भौंरे गुंजार करने लगते हैं, अनार की डाल पर आग की दाहकता वाले रक्तवर्णी फूल लग जाते हैं, टेसू के फूल तो मानो चारों ओर आग ही लगा देते हैं। ऐसे वातावरण में विरहिणी जुलेखा समझ नहीं पाती की वह कहाँ जाय। उसे संसार में अपने लिए कोई जगह नहीं दिखाई पड़ती जहाँ उसे शान्ति मिल सके।[2]

जुलेखा की विरह-व्यथा इतनी बढ़ जाती है कि वह अहर्निश रोती रहती है। ग्रीष्म ऋतु के भयानक ताप में नदी, समुद्र, तालाब, कुएँ, लता, वृक्ष, फूल-पत्तियाँ सभी सूख जाते हैं। यहाँ तक कि जल बरसाने वाले बादल भी सूख जाते हैं, परन्तु उसके नेत्रों के आँसू नहीं सूखते।[3]

वियोगिनी जुलेखा के हृदय को शरदकालीन निर्मल चाँदनी व्याकुल बना देती है। शरदकालीन चाँदनी उसे विरहबाण सदृश लगती है और वह विरहाग्नि में जलने लगती है। ऐसी दशा में उसके जीवित रहने में सन्देह होता है।[4]

विरहिणी जुलेखा को हेमन्त ऋतु की रात्रि पहाड़ के सदृश्य प्रतीत होती है। रात्रि व्यतीत करना उसके लिए मुश्किल हो जाता है।[5]

---

१. भइ बाउर तन सुध-बुध त्यागी। चाहा जायसु घर से भागी।।
x x x
प्रेम पीर ते भई अधीरा। होय व्याकुल तन फारे चीरा।।
उठि-उठि चले छाड़ि घरबारा। तन पर लागि चढ़ावै छारा।। ८/२०

२. फूले फूल सिखी गुंजारहिं। लागी आगि अनार के डारहिं।।
मैं का करूँ कहाँ अब जाऊँ। मो कहँ नाहिं जगत महँ ठाऊँ।।
टेसू फूल जो कीन्ह अँजोरा। लागी आगि जरै चहुँ ओरा।। १६/१

३. सूखि समुद्र गए रवि तेज सो, सूखि गई सलिता जलधारी।
सूखि गए पुहुमी रवि मंदिल, सूखि गए जल मेघ सुखारी।।
सुखहिं कूप तड़ाग लता द्रुम, बेलि बली बन औ फुलवारी।
सेख निसार अथ विरहानल, सूखै न ई अखियाँ दुखियारी।।१६/२

४ सरद चाँदनी निरमल देखा। भा. हमार बाउर कर लेखा।।
x x x
लाग बिरह कै बान, जरै बिरह की अगिन सों।
केहि विधि बचै परान, सरद चाँदनी चित दहै।।१६/४ (सोरठा)

५. निसि हेवंत पहाड़ भग, तिनु गिउ कटै न रैन।
जागि बिहाऊँ रैन दिन, जाड़ करै बेचैन।।१६/५

इसी प्रकार 'बारहमासा' के अन्तर्गत बारहों महीनें जैसे-जैसे आते हैं विरहाकुल जुलेखा की दशा बिगड़ती चली जाती है। चैत का सुहावना मास आने पर जब वन-उपवन हरे-भरे होकर पुष्पित हो जाते हैं तब वियुक्त जुलेखा रक्त के आँसू बहाती है।[1] शरीर को सुख प्रदान करने वाली शीतल वायु उसे जलाने लगती है।[2]

वैशाख मास का सुखद वातावरण भी विरहिणी जुलेखा के लिए अत्यन्त कष्टप्रद हो उठता है। इसीलिए वह कहती है कि लोगों के लिए यह ऋतुराज है, सुख सोहाग का समय है, पर मुझे तो यह दुःख से नष्ट कर रहा है। न जाने किसलिए इसका आगमन हुआ है।[3]

इसके पश्चात् ज्येष्ठ का महीना आता है। जेठ देह को जलाने लगता है, परन्तु नेहवती नारी सुखी रहती है। उसे सभी दिशाओं में स्नेहाधिक्य दिखाई पड़ता है। किन्तु, विरहिणी जुलेखा के लिए सब कुछ दारुण सिद्ध होता है।[4] वह गुप्त और प्रकट रूप में रात-दिन जलती रहती है।[5]

जुलेखा के लिए प्रिय के बिना बादलों से भरी अषाढ़ की अँधेरी रात बिताना कठिन हो जाता है। घटाओं और बिजलियों को देखकर उसका हृदय काँपने लगता है।[6] जाड़े की रात के साथ उसका विरह और भी बढ़ जाता है।[7]

इस प्रकार प्रकृति का सुखद वातावरण जुलेखा की भावना को तीव्रतर बनाता है। वहाँ प्रकृति का उदास और निर्मल रूप उसे सहानुभूति प्रदर्शित करता प्रतीत होता है।

'यूसुफ जुलेखा' में संयोग शृंगार का अवसर कवि को प्रायः नहीं मिल सका है। क्योंकि दोनों का मिलन होते ही जुलेखा में नया परिवर्तन आ जाता है। अपना सम्पूर्ण जीवन यूसुफ के वियोग में तड़पते हुए बिता देने वाली जुलेखा को यूसुफ से मिलन के बाद ज्ञान प्राप्त हो जाता है कि उसने जितना समय मनुष्य के प्रेम में गँवाया, उतना प्रेम यदि उस परमात्मा से किया होता तो उसे मुक्ति मिल गयी होती। इस आत्मज्ञान के साथ वह यूसुफ से पुनः अलग हो जाती है। इस प्रकार जुलेखा का सम्पूर्ण जीवन यूसुफ के विरह में तड़पते हुए ही बीतता है।

१. चैत मास पिउ गयो बिछोई। तबतें रकत आँसु मैं रोई।। २४/१

२. सीतल पवन अंग कहँ भावै। बिरहिन को तन अधिक जरावै।। २४/१

३. सुख सोहाग के समय यह, लोग कहैं ऋतुराज।
हमें नष्ट दुख देय यह, आवै कौने काज।।२४/२

४. जेठ जरावे देह, नेह बाह नारी सुखी।
चहुँ दिस बढ्या सनेह, बिरहिन कै दारुन लगै।।२४/३ (सोरठा)

५. गुप्त परगट एक पिव बिन, बिरहिनै निस दिन जरैं।।२४/३ (सवैया)

६. कैसे कटै सो यह रितु भारी। बिन पिउ घमंड घोर अँधियारी।।
मास असाढ़ सोहावने, मन भावन न सेज।
देख घटा औ दामिनी, काँपै, मोर करेज।।२४/४

७. बाढ़ा बिरह रैन जस बाढ़ै। अरुझे प्रेम फाँस हिय गाढ़े।। १६/५

वियोग की जिस स्थिति को जुलेखा प्रिय मिलन की आशा में गुजारती है वह वास्तव में उसके प्रेम को खरा सिद्ध करने की कसौटी है।

वात्सल्य-वर्णन

इस कृत का मूल प्रेरक भाव यद्यपि पिता याकूब के बहाने स्वयं रचनाकार का वियोग-वात्सल्य है, पर सम्पूर्ण कहानी में यूसुफ जुलेखा के प्रेम की प्रमुखता होने के कारण वात्सल्य भाव गौण सा हो गया है। फिर भी, इस कृति में वात्सल्य के संयोग और वियोग दोनों पक्षों का मार्मिक चित्रण हुआ है।

संयोग-वात्सल्य

इसमें कथा का विकास प्रारम्भ में जिस घटना बहुलता के साथ हुआ है उसको देखते हुए यदि उसमें संयोग-वात्सल्य को विस्तार नहीं मिल सका है तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। फिर भी, याकूब और यूसुफ तथा यूसुफ का पालन करने वाली फूफी के हृदय में स्थित वात्सल्य कवि की दृष्टि से ओझल नहीं हुआ है। याकूब पुत्र यूसुफ को अपनी अन्तिम और मातृविहीन सन्तान होने के कारण सर्वाधिक प्यार करता है। वह अपने उस सुन्दर, सुघड़, सुजान सपूत को प्राणों से बढ़कर मानता है।[१] वह यूसुफ को आँखों से ओझल नहीं करना चाहता। भूख-प्यास से कहीं उसका मुख मुरझा न जाये इसलिए वह उसे निहारता रहता है।[२] जिस समय यूसुफ के भाई उसे षड्यंत्र पूर्वक वन में ले जाने का प्रयास करते हैं, उस समय याकूब का वात्सल्य पूरित मन रांशग रो भर जाता है।[३]

यूसुफ की फूफी भी यूसुफ के प्रति वात्सल्य पूरित है। वह यूसुफ को रात-दिन पढ़ाती है, क्षण-भर के लिए भी आँखों से ओझल नहीं होने देती।[४] वह उसे प्राणों से अधिक मानती है और रात-दिन हृदय से लगाए रहती है।[५]

वियोग-वात्सल्य

यहाँ वियोग वात्सल्य का प्रारम्भ याकूब द्वारा यूसुफ को वन भेजने के साथ होता है। यूसुफ के वियोग में याकूब मूर्छित होकर गिर पड़ते हैं, मानों स्वयं काल ने उनके प्राणों का हरण कर लिया है।[६]

धीरे-धीरे याकूब का वियोग इतना अधिक बढ़ जाता है कि सोते-जागते हर वक्त वह यूसुफ के नाम की रट लगाये रहता है। उसे भूख-प्यास की भी सुधि नहीं रहती। पुत्र का

---

१. यूसुफ कहँ निस दिन पिता, राखै प्रान समान।
प्रान ते अधिक सपूत सुत, सुन्दर सुघर सुजान।।२/५

२. आँखी ओट पिता नहिं करई। छुधा तृषा मुख देखत हरई।। २/७

३. मोर हिये उपजै यह संसा। जिन लै जाहु संग यह मंसा।। ३/४

४. यूसुफ कहँ दिन-रात पढ़ावै। छिन नैनन नहिं ओट करावै।। २/४

५. प्रान ते अधिक रखै दिन राती। निस दिन रहैं लगाये छाती।। २/४

६. सुनि याकूब सो मुरछित भयऊ। मानहु प्रान काल लै गयऊ।। ५/३

स्मरण कर वह सदैव अश्रुपात करते हैं।[1] रोते-रोते उनके नेत्रों की ज्योति चली जाती है।[2] याकूब के मन में पुत्र मोह के कारण तरह-तरह की आशंकाएँ उत्पन्न होती हैं। यह स्वाभाविक वात्सल्य का प्रमाण है।[3]

यूसुफ भी पिता से वियुक्त होने के कारण अत्यन्त दुःखी होता है। उसे अपने मरने का दुःख नहीं है, बल्कि वह इस आशंका से व्यथित है कि उसके वियोग में कहीं उसके पिता की मृत्यु न हो जाय।[4] इसीलिये भाइयों से वह प्रार्थना करता है कि पिता से उसके मरने की बात न बताकर परदेश जाने की बात बताएँ। क्योंकि उसे इस बात का डर है कि मरने का समाचार सुनकर पिता कहीं अपने प्राणों का त्याग न कर दें।[5] इन तथ्यों से पिता के प्रति यूसुफ के अपार प्रेम का परिचय मिलता है।

पूरी रचना में माता के प्रति यूसुफ के प्रेम का मात्र एक प्रसंग मिलता है जब बंजारों द्वारा मिस्र ले जाते हुए यूसुफ रास्ते में माँ की समाधि से लिपट कर रोने लगता है तथा पुत्र व्यथा से माँ की समाधि काँप उठती है।[6]

वस्तुतः याकूब का पुत्र प्रेम श्लाघनीय है। दशरथ के पुत्र-प्रेम की भाँति मार्मिक और सूर की यशोदा के वात्सल्य जैसा स्वाभाविक और तलस्पर्शी है। पुत्र के अश्रुपात से माता की समाधि हिलने लगे तो उसे वात्सल्य की पराकाष्ठा ही समझना चाहिए। याकूब ने दशरथ की भाँति अपने वात्सल्य की वेदिका पर प्राणों का अर्पण तो नहीं किया, पर अपने नेत्र देकर (अंधा होकर) संसार से भौतिक सम्बन्ध अवश्य तोड़ लिया। इस वात्सल्य वर्णन ने निश्चय ही पुत्र शोक से विकल शेख निसार की आत्मा को सहलाया होगा।

---

१. जो सोए तो यूसुफ कहै। जो जागै यूसुफ मुख छहै।।
यूसुफ कहै भूख जब लागै। यूसुफ कहै प्यास तन भागै।।
नींद भूख औ प्यास महँ, यूसुफ नाम अधार।
सँवर-सँवर मुख पुत्र का, रोदन करै अपार।।५/६

२. रोवत नयन भये दोउ अंधा। फाट न हिया सँवर चित बँधा।। ५/७

३. केहि बन महँ तुम्ह का परहेले। तुम्ह बालक कत फिरहु अकेले।।
x x x
केहि सो साँझ लै हिये लगाउब। भोर होत केहि लालि जगाउब।।
केहिके सुनब मधुर रव बाता। केहिकर हिये लगाउब गाता।।५/८,९

४. मोहि मारे तुम दोख है, पिता मरहि तेहि रोय।
तेहिते अब दाया करहु, धरहु क्षमा रिसि खोय।।३/६

५. कह्यो पिता ते जाय सँदेसा। पुत्र तुम्हार गयो परदेसा।।
मरत नाम जिन कह्यो सुनाई। मरैं पिता निज प्रान नसाई।। ५/१३

६. यूसुफ नबी नैन भरि हेरा। रोय-रोय माता कहँ टेरा।।
लखि माता की कबर सुहाई। होय बिकरार गिरा मुरझाई।।
पुत्र तुम्हार जात परदेसा। भयउ दास देख्यो नहिं भेसा।।
वे चरनन महँ देखहु बेरी। टाट झूल जो कबहुँ न हेरी।।
लोटै पड़ा कबर पर रोई। खाय पछार जीव कत खोई।। ६/६

सौन्दर्य-निरूपण

सूफी काव्य में सौन्दर्यांकन मुख्यतः रूप सौन्दर्य पर केन्द्रित है। 'यूसुफ जुलेखा' इसका अपवाद नहीं है। इसमें मानवीय रूप-चित्रण और प्रकृति-सौन्दर्य को विशेष महत्त्व दिया गया है। सौन्दर्य के अन्य पहलू कवि की दृष्टि से प्रायः ओझल रहे हैं। मानवीय रूप-सौन्दर्य के अन्तर्गत नारी रूप-सौन्दर्य एवं पुरुष रूप-सौन्दर्य दोनों ही पक्ष 'यूसुफ जुलेखा' में प्राप्त होते हैं। सूफी काव्य-परम्परा के अनुरूप 'यूसुफ जुलेखा' में भी नारी-रूप का अंकन प्रमुख है। कवि ने प्रत्येक सुन्दर पदार्थ की व्यंजना जुलेखा के रूप-सौन्दर्य चित्रण में की है, जब वह प्रेम वियोग से अपरिचित रहती है।

रूप-सौन्दर्य की दृष्टि से 'नख-शिख वर्णन' का विशेष महत्त्व है। इसमें रचनाकार ने अपूर्व मनोयोग के साथ जुलेखा की माँग, वेणी, ललाट, भौंह, नेत्र, कान, कपोल, अधर, चिबुक, भला, वक्ष, कुच, नाभि, भुजा, पीठ, कमर, जाँघ, उँगली, नाखून, एड़ी आदि अंगों का वर्णन किया है। इसमें परम्परागत उपमानों का प्रयोग हुआ है। फिर भी, यत्र-तत्र कोमलता और दीप्ति के वर्णन में नयी कल्पना का रंग उमड़ आया है।

जुलेखा के अनुपम रूप की प्रसिद्धि सारे संसार में है-"रूप अनूप जगत सब जानी।" उसे देखकर किसी का बावला हो जाना स्वाभाविक है-"बाउर होय जो दर्शन हेरा" उसकी माँग का सौन्दर्य विद्युत रेखा के समान है- "दामिन अस वह माँग सोहाई। केस घमंड घटा जस छाई।।"[1] उसका ललाट पूर्णिमा के चन्द्र से अधिक ज्योतिर्मय है। ललाट पर शोभित किनारी की झलक चन्द्रमा में दामिनी के प्रवेश के समान अनुपम सौन्दर्य उत्पन्न करती है। उसकी ललाट-ज्योति के सम्मुख चन्द्रमा फीका पड़ जाता है; क्योंकि चन्द्रमा में कलंक है जबकि उसका ललाट पूर्णतः निष्कलंक है-

अब लिलाट बरनौं सुखकारी। राका ससि तासों उँजियारी।।
X X X
तहाँ सो झलक किनारी देखा। जस ससि महँ दामिन परवेसा।।
चंद लिलाट न सोहै, पूरन जोत अपार।
वह कलंक निकलंक यहि, वह षट बुध लहि सार।। ७/५

जुलेखा का नेत्र-सौन्दर्य देखते ही नायक बेचैन हो उठता है। उसका कटाक्ष हृदय में घाव करने वाला साबित होता है। उसके नेत्रों में श्वेतता, श्यामता और अरुणाभा का मिला-जुला रूप ऐसा लगता है जैसे विष, अमृत और मधु को एक साथ घोल दिया गया हो। उसके नेत्र सूर्य की आभा सदृश लुभाने वाले हैं जिसे देखने वाले नेत्र कमल के समान अरुणाभा से भर जाते हैं-

नैन देखि मन होय बेहाला। जासु कटाछ हिये महँ साला।।
सेत साम औ अरुन सोहावा। बिख अमिरित मधु घोरि दिखावा।।
अंबुज बरन दिधिग अरुनाई। भानु बरन होय गयो लुभाई।। ७/७

---

१. शेख निसार, यूसुफ जुलेखा, ७/३

उसके दोनों कान मोतियों से भरे दो सीप के समान हैं।[1] नासिका चंपा की कली सदृश है, जो देखने वाले के मन के ऊपर खड्गधार का काम करती है।[2] उसके कपोलों का सौन्दर्य अवर्णनीय है। संसार में उसके समान सुन्दर दूसरा कुछ भी नहीं है। बेसर के साथ उन कपोलों का सौन्दर्य देखकर ज्ञान लज्जित होने लगता है अर्थात् देखने वाले की मति विमूढ़ हो जाती है; क्योंकि जुलेखा के समान सुन्दर सृष्टि में कुछ भी नहीं है, जिससे उसकी उपमा दी जा सके। कवि का कथन है-

कँवल कपोल न जाइ बखाना। कहँ ससि पर जग ताहि समाना।।
बेसर देख सो ज्ञान लजाए। कहँ तेहि सम जेहि उपमा लाए।। ७/१०

उसका कंठ सुन्दर, सुभग और अनुपम है। जिसे देखकर स्वर्ण भी लज्जित हो जाता है। मानों वह स्वर्ण को चाक पर चढ़ाकर बनाया गया है। उसकी देह देवताओं का सौन्दर्य निचोड़ कर बनायी गयी है-

गीव सुहावन सुभग अनूपा। जातरूप डरि जाय सरूपा।।
कुंदन चाक चढ़ाय बनाए। देहि अदेहिन गार सुहाए।। ७/१३

उसके उरोज नारंगी के समान कठोर हैं तथा लालमणि की दो मूर्तियों के समान शोभित होते हैं। उसकी लालिमा को देखकर लालरंग भी लज्जित होता है, वह स्वर्ण वाटिका की क्यारियों में शोभित अमृत फल के समान हैं। कभी लगता है जुलेखा के रूप-सौन्दर्य से पराजित होकर कामदेव ने अपने दोनों नगारे उलट कर रख दिये हैं-

नारंगी सो उरज कठोरा। और कछू तेहि जाय न जोरा।।
दोउ लाल कै मूरति साजा। देखि सो लाल रंग वह लाजा।।
कुंदन बागन क्यारि बनाई। दुइ अँबिरित फल तहाँ सुहाई।।
मुरत मनोज देखि कै हारा। निज अँवधाय सो रख्यो नगारा।। ७/१४

जुलेखा की भुजाओं की शोभा भी अवर्णनीय है। वे चित्रित सी लगती हैं। सम्पूर्ण शरीर में भुजाओं की स्थिति ऐसी है जैसे पुष्प-छत्र में लगे हुए दण्ड हों अथवा कामदेव रूपी चित्रकार के द्वारा प्रयुक्त चाकदण्ड हो-

का बरनै भुज सोभा कोई। रचा चित्र महँ चित्रित सोई।।
X X X
पुहुप छत्र वह दण्ड सोहावा। काम चितेरै चाक फिरावा।। ७/१६

उस बाला का सौन्दर्य मुनियों, ऋषियों और गन्धर्वों को भी मोहित करने वाला है-"मुनि गँधरब रिषि ता लखि मोहा"।[3] जब वह अपनी सखियों से मुसकराती है तो फूलों की वर्षा

---

१. दोउ सरवन दुइ सीप सुहाये। मोती भरा सदा दिखराए।।७/८
२. जस चंपै की कली सोहाई। खड़गधार तेहिमन बिकसाई।।७/९
३. शेख निसार, यूसुफ जुलेखा, ७/१३

होने लगती है और चारों ओर उसकी कान्ति से उजाला हो जाता है- "जब मुसकाय सखिन से गोरी। झरहिं फूल और होहिं अंजोरी।।"[1] उसके अधरों की मुसकान जीवनदायनी है जो मृतक को भी जीवित कर देती है- "जो वह अधर मधुर मुसकाई। तो मिरतक कहँ देत जियाई।।"[2]

जुलेखा के रूप-सौन्दर्य से सम्बन्धित दूसरा प्रसंग उस समय आता है, जब अनेक कष्ट सहने के पश्चात् यूसुफ से उसका संयोग होता है और वह पुनः अपना पूर्व-सौन्दर्य प्राप्त कर विवाह के लिए सजने लगती है। वह सोलह शृंगार करती है-"लागे षट्दस होय सिंगारा।"[3] वह बारह आभूषणों से अपने को सजाती है-"बारह अभरन साज बनावा"।[4] शृंगार करने पर उसका रूप अप्सरा के समान शोभित होता है। उसे देखकर सखियाँ मोहित हो जाती हैं। कवि की दृष्टि में वह अलख ब्रह्म धन्य है जिसने उसे ऐसा अनुपम रूप दिया-"धन वह अलख रूप जिन दीन्हा।"[5]

सौन्दर्य वर्णन में अन्य सूफी कवियों की भाँति शेख निसार ने नारी रूप में ईश्वर-अंश की कल्पना नहीं की है। अप्रस्तुत सौन्दर्य से आवृत्त के कारण उसमें मांसलता और कामोद्दीपकता नहीं दिखाई पड़ती है।

'यूसुफ जुलेखा' में पुरुष सौन्दर्य का वर्णन अत्यल्प है। यद्यपि यूसुफ का अद्वितीय सौन्दर्य ही कथावस्तु की गतिमयता का आधार है, परन्तु कवि ने यूसुफ के सौन्दर्य का विस्तृत वर्णन नहीं किया है। सर्वप्रथम 'आदि खण्ड' में कवि ने यूसुफ के जन्म-अवसर पर उसके जिस सौन्दर्य का उल्लेख किया है। उसे देखकर लगता है कि जैसे विधाता ने सम्पूर्ण सौन्दर्य का दो भाग यूसुफ को दे दिया है और शेष में सम्पूर्ण संसार की रचना की है। विधाता द्वारा निर्मित वह रूप धन्य है-

विधि सरूप जब उतपति कीन्हा। दुई अंस यूसुफ कहँ दीन्हा।।
एक अंस महँ सब जग पावा। धनि वह रूप जो दइयँ बनावा।। २/३

उस सौन्दर्य की कहाँ तक प्रशंसा की जाय। वह रूप जैसे साक्षात् विधाता का ही रूप है- "तेहि सरूप कर कहौ बखाना। जेहि विधिनै कै रूप निधाना।।"[6] वह रूप मन को भाने वाला रूप है- "वह मनभावन रूप सोहावा।"[7] तभी तो जुलेखा स्वप्न में यूसुफ के सौन्दर्य पर मोहित हो जाती है। उसका रूप सूर्य के समान तेजोमय है- "भान सरूप वह आय गय।"[8]

---

१. शेख निसार, यूसुफ जुलेखा, ७/११
२. वही, ७/११
३. वही, २५/८
४. वही, २५/६
५. वही, २५/६
६. वही, २/३
७. वही, २/६
८. वही, ८/१

प्रकृति-सौन्दर्य

'यूसुफ जुलेखा' में मुख्य रूप से प्रकृति के आलंकारिक और उद्दीपन रूप का वर्णन है। कवि नख-शिख सौन्दर्य चित्रण में उपमानों को प्रकृति के व्यापक परिसर से गृहीत कर उसे विभिन्न अलंकारों के रूप में प्रस्तुत किया है। उन्होंने साहित्य-परम्परा में प्रचलित उपमानों के साथ ही मौलिक एवं लोक प्रचलित उपमानों का भी चयन किया है, जो मुख्यतः बाह्य प्रकृति से लिया गया है।

प्रकृति के उद्दीपन-रूप के लिये कवि ने षड्ऋतु तथा बारहमासा का वर्णन किया है। चूँकि 'यूसुफ जुलेखा' में संयोग सुख के चित्र अल्प हैं इसलिए उनका षड्ऋतु वर्णन वियोगजन्य दुःख को उद्दीपित करने वाला है। षड्ऋतु वर्णन जुलेखा के वियोग चित्रण के सन्दर्भ में है। वसंत से लेकर शिशिर तक समस्त ऋतुएँ वियोगिनी जुलेखा को अत्यन्त कष्टकर प्रतीत होती हैं।

शेख निसार ने 'बारहमासा' की योजना जुलेखा के विरहाधिक्य की व्यंजना के लिए किया है। इस वर्णन में उन्होंने प्रकृति के उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत अधिक उन्मुक्त वातावरण की योजना की है। ऋतु परिवर्तन को विरहिणी की मानसिक दशा के अनुरूप उद्दीपक बनाया गया है। विरहिणी जुलेखा प्रत्येक मास के बदलते हुए प्राकृतिक वातावरण के साथ नित्य नयी विकलता का अनुभव करती है। सभी महीने उसे अत्यन्त कष्टप्रद लगते हैं। उसका सुखद स्वरूप भी उसे कष्टप्रद लगता है। 'यूसुफ जुलेखा' में वस्तु सौन्दर्य का वर्णन नहीं के बराबर है। लगता है वस्तु- वर्णन में कवि का मन नहीं रमा है।

इस प्रकार 'यूसुफ जुलेखा' में नारी के रूप-सौन्दर्य के चित्रण में कवि की वृत्ति अधिक रमी है। नायिका की कोमलता और दीप्ति से सम्बन्धित कवि की नयी उद्भावनाएँ देखते ही बनती है।

प्रेमाध्यात्म

शेख निसार को आध्यात्मिक संस्कार अपने पूर्व पुरुषों से विरासत में प्राप्त हुआ था। उनके प्रपितामह शेख हबीबुल्लाह फारस के महान अध्यात्म साधक मौलाना जलालुद्दीन रूमी की वंश-परम्परा में उत्पन्न हुए थे। अतः अपने पूर्वजों के आध्यात्मिक चिन्तन का उत्तराधिकार लेकर शेख निसार ने 'यूसुफ जुलेखा' प्रेमाख्यान की रचना की। सामान्यतः सूफी साधना में लैकिक प्रेम के आश्रय और आलम्बन ही अन्योक्ति के माध्यम से आध्यात्मिक अर्थ की प्रतीति कराने लगते हैं। लौकिक प्रेम (इश्क मजाजी) परिष्कृत हो जाने पर अलौकिक प्रेम (इश्क हकीकी) में परिणित हो जाता है। जबकि इस प्रेम कहानी में इश्क मजाजी से इश्क हकीकी में परिवर्तन आलम्बन परिवर्तन के साथ होता है। ज्ञान प्राप्त होते ही जुलेखा का प्रेम यूसुफ से हटकर अलख में लग जाता है।

काव्य-नायिका जुलेखा कामासक्त होकर यूसुफ को पाने का प्रयत्न करती है। वह

सामाजिक रूप से अपमानित भी होती है। यूसुफ के वियोग में चालीस वर्ष तक दहते-दहते वह वार्धक्य को प्राप्त हो जाती है। उसकी आँखों की ज्योति समाप्त हो जाती है। अन्त में जब वह दीन-हीन दशा में यूसुफ से मिलती है तब कहती है कि मुझे हीरा-मोती नहीं चाहिए। तुम मेरे लिए ईश्वर से मात्र इतनी प्रार्थना करो कि वह मुझे आँखों की ज्योति दे दें, ताकि मैं तुम्हारा मुख देख सकूँ। वह कहती है-

माँगहु तुम्ह करतार ते, देहि नयन कै जोति।
जेहिते देखहुँ तोर मुख चहौ न हीरा मोति।।२५/२

किन्तु, शीघ्र ही यूसुफ को छोड़कर वह ईश्वरीय प्रेम में लीन हो जाती है। शेख निसार का यूसुफ सौन्दर्यमयी सृष्टि का प्रमाण है। उसके सौन्दर्य को परमात्मा की महानता समझकर प्यार करना तो युक्तिसंगत है, पर उसके पीछे उस सृष्टिकर्त्ता को भुला देना ठीक नहीं। जुलेखा के प्रारम्भिक प्रेम में कामवासना की गन्ध रहती है, किन्तु धीरे-धीरे उसका वासनात्मक प्रेम विरह का ताप पाकर कुन्दन की तरह निखर उठता है। अन्त में, जब वह यूसुफ को पाती है तब उसके मानस में रूप-रंग और चर्ममय यूसुफ के प्रति कोई आकर्षण नहीं रह जाता। वह सोचती है कि जितना समय एक मनुष्य के लिए गँवाया उतना यदि परमात्मा के लिए लगाया होता तो मुक्ति मिल गयी होती। जुलेखा कहती है-

मैं विरथा यह जनम गँवावा। प्रेम विपत मानुख सो लावा।।
काहे न प्रेम अलख ते लाऊँ। जेहिते मोख मुगत पुन पाऊँ।।
का मानुख मानुख का चाहै। चाहै अलख मुगत कर लाहै।।
निस-दिन लाग तपस्या करै। जब जोगित ते प्रीति छबि धरै।।२६/३

यूसुफ जुलेखा को अनेकविध समझाकर उससे प्रणय याचना करता है, परन्तु जुलेखा उसकी याचना को ठुकराते हुए कहती है कि मुझे एकमात्र अलख की आशा है, सारा सुख, भोग-विलास व्यर्थ है। यह समस्त रूप-शृंगार चन्द दिनों के लिए है और अन्त में उसे छार में मिल जाना है। इसलिए क्यों न अलख का स्मरण किया जाय जिससे मुक्ति मिलेगी।[1]

जुलेखा को यह विश्वास हो जाता है कि संसार की सारी वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं। अतः उनकी इच्छा करना उचित नहीं है।[2] दूसरी ओर उसे अनुभव होता है कि समस्त गोचर

---

१. कोटि बिनति कै यूसुफ हारा। नाहा हाथ गले पा डारा।।
कहा जुलेखा मोहि न भावै। अलख ध्यान छुट आन न आवै।।
मोहिको एक अलख कै आसा। बिरथा यह सुख भोग बिलासा।।
दिना पाँच का रूप-सिंगारा। होइह अंत देह तेहि छारा।।
जोवन रूप सिंगार सब, संघ जाय तेहि खोय।
काहे न सँवर सो अलख कहँ, जानो मुकुत कब होय।। २६/६

२. (क) मैं जौवन अरु रूप उतंगा। देखि लीन्ह कछु रहै न संगा।। २६/४
(ख) जाय फूल कुँभिलाय जब, रहै न रंग न बास।
तेहिते सँवरहु एक वह, जेहिके दुओ जग आस।। २६/४.

पदार्थों से ऊपर भी एक परमतत्त्व है जिसकी आराधना मनुष्य के लिए श्रेयस्कर है।[1]

शेख निसार के प्रेम विषयक चिंतन से प्रकट होता है कि वे मौलाना रूमी के इस मत से एकदम सहमत हैं, कि सूरत और रंग के प्रति होने वाला प्रेम, प्रेम नहीं है, क्योंकि सौन्दर्याकृति के समाप्त होते ही इस प्रकार का प्रेम समाप्त हो जाता है। इसका अर्थ यह नहीं कि जिस यूसुफ के लिए जुलेखा ने चालीस वर्ष तक कठोर तप किया और समस्त सांसारिक वासनाओं को ठुकरा दिया, उस यूसुफ को पाने के बाद उसने अलख के प्रति लौ लगा ली। वास्तव में यूसुफ से जुलेखा की असहमति इस बिन्दु पर है कि यूसुफ उसे फिर वासना-पंक में खींचना चाहता है, किन्तु उसे कथमपि स्वीकार नहीं है। यहाँ अलख और यूसुफ क्रमशः आध्यात्मिकता और सांसारिकता के दो छोर बनकर उपस्थित होते हैं। स्मरणीय है कि जब तक जुलेखा के हृदय में यूसुफ के प्रति वासनामूलक प्रेम रहा तब तक अनेक प्रकार से वह अपमानित और पीड़ित होती रही। परन्तु, जब वह इस द्वन्द से ऊपर उठ जाती है तब यूसुफ को कैसे स्वीकार करे। वह कहती है-

एक हिए दुइ प्रेम अब, कैसे कहो समाय।
जग सामी कै प्रेम अब, रहै हिये महँ छाय।।२६/८

यद्यपि जुलेखा यूसुफ के साथ रहते हुए बरबस देह-धर्म के नाते का निर्वाह करती है, किन्तु उसे सुख-भोग नहीं भाता। उसका मन तो नित्य योग में ही रमा रहता है। यहाँ उसकी स्थिति ठीक जनक जैसी हो जाती है जो देह धर्म का पालन करने के बावजूद विदेह थे। इस दृष्टि से निम्नांकित पंक्तियाँ ध्यान देने योग्य हैं-

बरबस करै भोग सुख सारा। सुत नित दिये तेहिं करतारा।।
पाँच पूत दुइ दुहिता भयो। जब तप करै प्रान पर छायो।।
दुहिता सुत सामी नहिं भावै। नित उठ चित अलख से लावै।।
धाई कोट रहे सुख बारा। औ प्रतिपाल करै करतारा।।
करै जुलेखा निसि दिन जोगू। भावै ना तेहि सुख औ भोगू।। २६/९

पितृ-शोक के क्षणों में जब स्वर्ग से जिबरैल आकर यूसुफ को अलख का स्मरण करने की सलाह देता है, तब उसके हृदय में जगत की नश्वरता और जगतपति की कृपालुता का बोध होता है। यूसुफ स्वयं से कहता है-

सब कुछ दीन्ह दयाल तोहिं, कछु हींछा अब नाँह।
करौ कूच अब जगत से, करो सो मोहि पर छाँह।।२६/१७

जुलेखा की भाँति यूसुफ भी संसार की नश्वरता का बोध होने पर अलख की आराधना में लग जाता है। यूसुफ और जुलेखा दोनों ही मजाजी इश्क की जमीन से ऊपर उठकर

---

१. मैं तो तोहि न जान्यो, जनम अकारथ खोइ।
धन्य गरीब नेवाज तुइ, को अस दूसर होइ।।२५/७

हकीकी इश्क के आकाश में विराजमान हो जाते हैं। अन्त में यूसुफ के निधन पर जुलेखा उसे अपना साँई और अपने को उसकी चेरी बताते हुए उससे अपनी शरण में लेने के लिए विनती करती है। वह यूसुफ की समाधि पर पछाड़ खाकर गिर पड़ती है। उसके प्राणपखेरू उड़ जाते हैं। छार-छार में मिल जाता है-

न पिउ बोल सुनावहु, न अब दरसन देहु।
करहु दया पति राखहु, यह जीवन आपन लेहु।।
x x x
खाय पछार सो छार पर करै आह एकबार।
पंछी प्रान सो उड़ि गयो, रहे छार महँ छार।। २७/१०,११

इस प्रकार 'यूसुफ जुलेखा' की कहानी का समापन इश्क मजाजी से इश्क हकीकी में परिवर्तित होने के साथ होता है। 'यूसुफ जुलेखा' में लौकिकता और आध्यात्मिकता का समन्वयन अन्यान्य सूफी प्रेमाख्यानों के समान नहीं था। फिर भी, शेख निसार ने इस कार्य को बहुत ही खूबी के साथ सम्पन्न किया है।

इस विवेचन से यह प्रमाणित होता है कि शेख निसार मौलाना रूमी की भाँति प्रेम को वासना मुक्त कर उसे आध्यात्मिक प्रेम में परिवर्तित करने के पक्षधर थे। सांसारिक रूप-सौन्दर्य को नश्वर घोषित करते हुए उन्होंने ईश्वर के प्रति लौ लगाने का सन्देश दिया है। वस्तुतः शेख निसार वे जामी की भाँति सांसारिक प्रेम-सेतु पारकर जिस अध्यात्म क्षेत्र में अवतरित हैं वह शाश्वत सौन्दर्य से मण्डित है।

चरित्र-सृष्टि

'यूसुफ जुलेखा' एक अनुपम प्रेम कहानी है। इसमें कवि का लक्ष्य पात्र विशेष की चरित्रगत विलक्षणता का अंकन करना या जाति विशेष का वैशिष्ट्य दिखाना नहीं रहा है। फिर भी, कुछेक पात्रों के सामान्य स्वभाव का वर्णन हुआ है। वैसे तो लूतनबी, इसहाक, इसराइल, रूबिया, रोहेल, दुनियाँ, इब्न, अमीन, यहूदा, अजीज, जिबरैल, सुलतान तैमूरशाह आदि अनेक पात्रों के नाम कथा के बीच-बीच में आये हैं पर इन्हें पात्रता नहीं मिल सकी है। यूसुफ, जुलेखा और याकूब प्रमुख पात्र हैं। इनका व्यक्तित्त्व अंकन कवि ने जीवन-संघर्ष के बीच इनके कार्य-व्यापारों और आन्तरिक संघर्ष-विघर्ष के माध्यम से किया है। वास्तव में ये पौराणिक पात्र अपनी विशेषताओं के कारण लोक में युगों से स्मरण किये जाते रहे हैं। इनका परिचय इस प्रकार है-

यूसुफ

आलोच्य कृति का नायक यूसुफ एक आदर्श चरित्र वाला पात्र है। उसके चरित्र में उन सभी आदर्शों का सन्निवेश हुआ है, जो प्राचीन पद्धति के अनुसार एक नायक में होने चाहिए।

सर्वप्रथम यूसुफ एक पितृभक्त के रूप में पाठक के सामने आता है। उसका यह गुण बाल्यकाल से ही देखने को मिलता है। भाइयों द्वारा मारे जाते समय भी उसे इसी बात की चिन्ता रहती है कि मेरे मरने का समाचार सुन पिता याकूब रो-रोकर मर जायेंगे। उसे अपने मरने का उतना दुःख नहीं रहता जितना पिता के दुःख का।[१] यूसुफ का यह पितृ-भक्त रूप अनेक स्थानों पर देखने को मिलता है। विशेष रूप से उस समय जब भाइयों द्वारा कुएँ में डाल दिये जाने के पश्चात् यहूदा उसकी स्थिति जानने के लिए जाता है। वह यहूदा से पिता को अपने मरने के विषय में न बता कर परदेश जाने की बात कहने के लिए कहता है। क्योंकि उसे इस बात की आशंका है कि उसकी मृत्यु को सुनकर पिता भी दुःख के कारण मर जायेंगे।[२] वह यहूदा से अपने पिता की सेवा करने के लिए भी कहता है। उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न होने दें। जिससे वे उसके दुःख को भूल जायें।[३] पिता के प्रति उसकी यह चिन्ता उस समय भी देखने को मिलती है जब वह भाइयों द्वारा दास बनाकर बेंच दिया जाता है। इसलिए वह बार-बार पिता को अपनी मृत्यु का समाचार न बताने के लिए कहता है।[४]

यूसुफ एक क्षमाशील व्यक्ति है। वह उन भाइयों को जो उससे ईर्ष्या करते हैं, डाह करते हैं और अन्त में उसे जान से मार डालने का प्रयत्न करते हैं, उन्हें भी क्षमाकर उनकी हित-कामना करता है।[५] अन्त में अकाल के समय भी उन्हीं भाइयों की मुक्त हस्त होकर सहायता करता है जो उसके प्रति अनेक प्रकार का अत्याचार किये होते है। यूसुफ का क्षमाशील रूप उस समय भी देखने को मिलता है जब जुलेखा उस पर झूठा आरोप लगा कर उसे कैद में डलवा देती है। वह उसे भी माफ कर देता है। सुलतान के बार-बार पूछने पर भी वह उसको दोषी नहीं बताता।

यूसुफ एक गर्व रहित व्यक्ति है। वह अत्यन्त रूपवान है "धनि वह रूप जो दइय बनावा।" अन्त में वह मिश्र का वजीर और शासक भी हो जाता है, परन्तु न तो उसे अपने रूप का कोई गर्व रहता है और न किसी अन्य बात का। वह सदा सहज गर्व रहित बना रहता है।

यूसुफ एक स्वप्न विश्लेषक रूप में भी सामने आता है। वह अनेक बार स्वप्न का सही विचार करता है। उसके इसी स्वप्न-विचारक रूप की ख्याति सुनकर सुलतान उससे अपने स्वप्न का रहस्य पूछता है।

यूसुफ में कर्तव्य परायणता का गुण भी देखने को मिलता है। वह आरम्भ से लेकर अन्त तक अपने कर्तव्य के प्रति पूर्णतः जागरूक रहता है। अत्यन्त रूपवती जुलेखा का रूप भी उसे

---

१. शेख निसार, यूसुफ जुलेखा, ५/१३, ३/६
२. वही, ५/१३
३. वही, ५/१३
४. वही, ५/७
५. वही, ४/३

अपने कर्तव्य-पथ से विचलित नहीं कर पाता। तभीतो वह अपने को कर्तव्य से हटता देख जुलेखा जैसी सुन्दरी को भी ठुकरा देता है। बाद में मिस्र का वजीर और सुलतान होने पर भी वह कहीं भी अपने कर्तव्य से विचलित नहीं होता। वह हर जगह, हर परिस्थिति में अपने कर्तव्य के प्रति सदा सचेत दिखाई पड़ता है।

विवाह के पश्चात् उसका प्रेमी रूप भी देखने को मिलता है। जुलेखा के प्रति उसका अगाध प्रेम रहता है। यही कारण है कि जब जुलेखा यूसुफ से विमुख हो उस अलख में लीन हो जाती है। तो यूसुफ उसके प्रेम में तड़पकर अधीर हो उठता है।[1] इसका प्रेम इतना प्रगाढ़ हो जाता है कि वह अपनी सारी तड़पन के बावजूद जुलेखा की ईश्वर-भक्ति में किसी प्रकार व्यवधान नहीं उपस्थित होने देता, बल्कि उसकी सुविधा के लिए मन्दिर तब बनवाता है। वह उसे अपने पुत्रों की चिन्ता तथा अन्य सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त करने के लिए भी यथेष्ट प्रयत्न करता है।

याकूब

याकूब यूसुफ का पिता है। इसके चरित्र में पुत्र-प्रेम की प्रधानता है, अन्य पक्ष उपेक्षित सा हो गया है। किन्तु, इनका पुत्र-प्रेम भी पक्षपात रहित नहीं मिलता। ये अपने सभी पुत्रों में सबसे छोटे पुत्र यूसुफ को सौन्दर्यवान तथा गुणवान होने के नाते सर्वाधिक प्रेम करते हैं। जिससे, अन्य पुत्रों को ईर्ष्या होती है।[2] यूसुफ के प्रति इनका यह पक्षपात इतना अधिक रहता है कि यूसुफ को छोटा होते हुए भी उसे अन्य पुत्रों से अधिक हिस्सा देते है, जबकि अन्य पुत्र रात-दिन काम भी करते हैं।[3]

याकूब का प्रगाढ़ पुत्र-प्रेम उस समय अधिक दिखाई पड़ता है जब वे यूसुफ को वन में दी गयी यातना की बात सोचकर अधीर हो उठते हैं।[4] यूसुफ के मरण का समाचार सुनते ही पिता याकूब मूर्छित हो जाते हैं।[5] पुत्र वियोग की असह्य पीड़ा में वे घर-बार छोड़कर नगर के बाहर एक कुटी बनाकर दिन-रात रोते-रोते अंधे हो जाते हैं।[6]

सचमुच याकूब का पुत्र-प्रेम अविस्मरणीय है। इसके बावजूद याकूब में पैगम्बर के चरित्र की उच्चता नहीं मिलती। यूसुफ सौन्दर्यवान तथा गुणवान अधिक था। अतः याकूब का उसे अधिक स्नेह देना स्वाभाविक है, परन्तु इसी आधार पर अन्य पुत्रों की अवहेलना करना एक पिता के लिए उचित नहीं है।

याकूब भी स्वप्न-विचारक हैं। यूसुफ जब अपने स्वप्न में देखे गये ग्यारह नक्षत्र, सूर्य

---

१. शेख निसार, यूसुफ-जुलेखा, २६/४,६
२. वही, २/७
३. वही, २/७
४. वही, ३/५
५. वही, ५/३
६. वही, ५/७

एवं चन्द्रमा की बात याकूब से बताता है तब वह स्वप्न को शुभ जानकर उसका जो विश्लेषण करता है, वह पूर्णतः सत्य सिद्ध होता है।[1]

जुलेखा

नायिका जुलेखा सुलतान तैमूस शाह की पुत्री है। यह एक अपूर्व सुन्दरी, नव यौवना नायिका है।[2] उसका अंग-प्रत्यंग सौन्दर्य से परिपूर्ण है, अनुपमेय है।

जुलेखा सर्वांश में एक आदर्श प्रेमिका है। वह अपने प्रेमी यूसुफ के लिए सर्वस्व अर्पण कर देती है।[3] वह यूसुफ को पाने के लिए बादशाह की पुत्री होने के बावजूद वजीर के साथ विवाह के लिए तैयार हो जाती है। यूसुफ की छवि को हृदय में धारण कर वह ध्यानस्थ होकर उसे देखती रहती है। वह रो-रोकर अपने दुःख का वर्णन करती है और एक बार यूसुफ के दर्शन की कामना करती है।[4] उसके प्रेम की प्रगाढ़ता इससे और भी स्पष्ट होती है कि वह यूसुफ को पाने के लिए अनेक कष्ट सहते हुए यूसुफ की प्रतीक्षा में चालीस वर्ष तक कठिन तपस्या करती है।[5] विषम परिस्थितियों में भी वह अपने प्रेम-पथ से तनिक भी विचलित नहीं होती।

सामान्य दृष्टि से देखने पर कोई जुलेखा पर व्यभिचारिणी होने का आरोप लगा सकता है। क्योंकि, वह विवाहिता होकर भी अपने दास यूसुफ से शारीरिक सम्बन्ध बनाना चाहती है। अपनी मनोकामना पूर्ण होती न देखकर वह यूसुफ पर झूठा आरोप लगाकर उसे कैद में डलवा देती है। अन्ततः वह अपनी इस चरित्रगत दुर्बलता के कारण अपने पति अजीज द्वारा घर से निकाल दी जाती है। जबकि, वास्तविकता यह है कि यूसुफ जुलेखा का स्वप्न प्रिय है, जिस पर वह अपना जीवन अर्पित कर चुकी है। यही नहीं अजीज से उसका विवाह भ्रम के कारण होता है। वह जान जाती है कि उसका विवाह उसके सच्चे प्रेमी से नहीं हुआ है। इसलिए जुलेखा को व्यभिचारिणी कहना समीचीन नहीं है।

जुलेखा में व्यक्तित्त्व की दृढ़ता है। अपनी इसी दृढ़ता के बल पर वह यूसुफ को प्राप्त करती है। अनेक कष्टों के बावजूद वह अपने निश्चय से जरा भी विचलित नहीं होती। उसका दृढ़ निश्चय उस समय और भी स्पष्ट होता है जब उसे यह ज्ञात होता है कि यूसुफ मिस्र का रहने वाला है। और वहाँ के सुलतान का वजीर है। वह अपना दृढ़ निश्चय प्रकट करते हुए कहती है-

जिऊँ तो जाउँ मिसिर कहँ, मरूँ तो मारग माँह।
छार होहुँ उड़ि जाउँ अब, जहाँ बसै मोर नाँह।।८/२३

१. शेख निसार, यूसुफ-जुलेखा, ३/२
२. वही, ७/१
३. वही, २३/३
४. वही, १०/१८
५. वही, २३/३

ज्ञान प्राप्त हो जाने पर जुलेखा ईश्वर-चिन्तन में भी पूरी दृढ़ता से लीन होती है। इस प्रकार सम्पूर्ण कथा में जुलेखा के चरित्र की निश्चयात्मक एवं दृढ़ प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है।

जुलेखा के चरित्र का चरमोत्कर्ष एक अध्यात्म साधिका के रूप में है। विवाहोपरान्त वह ईश्वर की भक्त हो जाती है-"भई जुलेखा भगत अब।"[1] उसे ज्ञान प्राप्त हो जाता है कि मनुष्य से प्रेम करके मैंने इस जन्म को व्यर्थ ही नष्ट कर दिया। मैं उस ईश्वर से क्यों न प्रेम करूँ जिससे मुक्ति मिले।[2] यह ज्ञान प्राप्त होते ही वह अलख की साधना में लीन हो जाती है-"निस दिन लाग तपस्या करै।"[3] वह सब कुछ भूलकर रात-दिन उसी अलख के जप-तप में लीन रहती है।[4]

प्रबन्ध-योजना

शेख निसार कृत 'यूसुफ जुलेखा' मसनवी शैली पर लिखा गया महाप्रबन्ध है। भारतीय एवं फारसी दोनों ही साहित्य-परम्पराओं में प्रबन्धकाव्य के स्वरूप की प्रतिष्ठा देखने को मिलती है। 'यूसुफ जुलेखा' में दोनों ही साहित्य-सिद्धान्तों का सुन्दर सम्मिश्रण हुआ है। भारतीय एवं फारसी साहित्य शास्त्रों में प्रबन्ध-काव्य के जो प्रतिमान निरूपित हुए हैं वे अपने में सर्वांगपूर्ण नहीं है। अतः इनके समन्वय से हम सर्वांगपूर्ण प्रबन्ध की विशेषताओं को निम्नलिखित रूप में आसानी से समझ सकते हैं-

१. सानुबन्ध प्रवाहपूर्ण कथानक
   (क) आधिकारिक और प्रासंगिक कथाओं का सुसम्बद्ध होना।
   (ख) कथा में सम्बन्ध-निर्वाह का होना।
   (ग) कथा की प्रवाहमयता।
   (घ) काव्य की रोचकता।
२. जीवन के किसी सम्पूर्ण दृश्य का रसात्मक वर्णन।
३. पात्रों का चरित्र-चित्रण
४. पात्रों द्वारा भाव-व्यंजना ।

अतः प्रबन्ध के उक्त स्वरूप-सिद्धान्तों की कसौटी पर हम 'यूसुफ जुलेखा' के प्रबन्धतत्त्व की परीक्षा निम्नांकित रूप में कर सकते हैं।

सानुबन्ध प्रवाहपूर्ण कथानक

आचार्यों ने इसे प्रबन्धकाव्य का अत्यन्त आवश्यक तत्त्व माना है। सानुबन्धता पर विचार करते समय यह देखना पड़ता है कि आधिकारिक एवं प्रासंगिक कथाएँ एक दूसरे से कहाँ तक सुसम्बद्ध हैं। 'यूसुफ जुलेखा' में केवल एक आधिकारिक कथा मिलती है। इसके

---

१. शेख निसार, यूसुफ जुलेखा, २६/२
२. वही, २६/३
३. वही, २६/३
४. वही, २६/३

साथ कोई प्रासंगिक कथा नहीं चलती। यद्यपि वजीर की कथा का समावेश बीच में हुआ है, पर यह आधिकारिक कथा का ही अंग है। इसे प्रासंगिक नहीं माना जा सकता। अतः यहाँ आधिकारिक और प्रासंगिक कथाओं की सुसम्बद्धता का प्रश्न ही नहीं उठता।

प्रत्येक घटना में पूर्वापर सम्बन्ध और तारतम्य का बना रहना तथा कथानक की रोचकता प्रबन्ध रचना के लिए आवश्यक होता है। 'यूसुफ जुलेखा' के पूर्वार्द्ध में यूसुफ के जन्म के साथ उसकी माँ के निधन,फूफी के द्वारा उसके पालन-पोषण, तदुपरान्त फूफी के निधन, पिता याकूब की स्नेहछाया में यूसुफ के पलने तथा उसके भाइयों के हृदय में ईर्ष्याभाव उत्पन्न होने एवं उनके षड्यन्त्र से यूसुफ का बंजारों के हाथ बिककर मिश्र पहुँचने की कहानी है। यहाँ तक कहानी सीधी सरल और सपाट होने के बावजूद संगठित और सुशृंखल है। यूसुफ के मिस्र पहुँचने पर जुलेखा का सूत्र उससे जुड़ जाता है। स्वप्न दर्शन के माध्यम से यूसुफ उसके जीवन में प्रवेश करता है। वास्तव में यूसुफ के जीवन में जुलेखा का आगमन कथा के विकास हेतु आवश्यक था। वैसे भ्रम के कारण मिश्र के वजीर से जुलेखा के विवाह, यूसुफ का अपने पिता का स्मरण आते ही जुलेखा के पास से भाग खड़ा होने जैसी घटनाएँ ऊपर से बाधक लगने के बावजूद प्रमुख क्रिया-व्यापार को कहीं से क्षतिग्रस्त नहीं करतीं।

कथा की प्रवाहमयता प्रबन्धत्व का आवश्यक तत्त्व है। शेख निसार की इस कृति में कथा-प्रवाह निर्बाध दिखाई पड़ता है। इसका एक प्रमुख कारण एक आधिकारिक कथा का होना है। इसमें प्रासंगिक कथाएँ न आने के कारण मूल कथा में कहीं ठहराव नहीं आने पाता है। वह अपनी स्वाभाविक गति से आगे बढ़ती रहती है। यह कथा इतनी मधुर और रोचक है कि इसका प्रवाह कहीं भी बाधित नहीं होता। पाठक में आगे की कथा जानने की इच्छा सदैव बनी रहती है।

रोचकता प्रबन्ध के प्रवाह का प्राणतत्त्व है। 'यूसुफ जुलेखा' की सम्पूर्ण कथा में कवि ने नाटकीय परिवर्तनों और विषमताओं की योजना करने का भी प्रयास किया है। इस वृत्त की स्वाभाविकता को बनाये रखने के लिए कवि ने घटनाओं की सकारणता पर भी ध्यान रखा है। कवि ने घटनाओं की योजना इस प्रकार की है कि ये एक दूसरे से सम्बद्ध होने के साथ ही आगे वाली घटना को जन्म भी देती चलती हैं। उसने वर्णनों के सन्तुलन और सामंजस्य पर भी ध्यान दिया है। वह प्रारम्भ के 'आदि खण्ड' में इतिवृत्त प्रस्तुत करता है, किन्तु आगे का वर्णन विशेष रूप से रसात्मक है। जुलेखा वर्णन खण्ड, स्वप्न खण्ड, जुलेखा विरह खण्ड, यूसुफ जुलेखा मिलन खण्ड, आदि सभी रसात्मक हैं। षड्ऋतु वर्णन एवं बारहमासा इतिवृत्तात्मक होने के साथ ही रसात्मक भी कहे जायेंगे।

रस-परिपाक की दृष्टि से प्रबन्धकाव्य में शृंगार, वीर, शान्त में से कोई एक रस अंगी रूप में होना चाहिए। अन्य रस अंग रूप में। शृंगार रस 'यूसुफ जुलेखा' का अंगी रस है और उसका कवि ने पूर्णरूप से परिपाक दिखाया है। आदि से अन्त तक उसकी व्याप्ति मिलती है और वही रस-योजना के केन्द्र में है।

जीवन की सम्पूर्णता का रसात्मक वर्णन

जीवन की सम्पूर्णता का रसात्मक वर्णन प्रबन्धकाव्य के लिए आवश्यक है। 'यूसुफ जुलेखा' में सम्पूर्ण जीवन का दृश्य उपस्थित हुआ है। कवि ने नायक और नायिका के जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त की घटनाओं का चित्रांकन किया है, इस दृष्टि से भी यह निर्दोष प्रबन्ध काव्य सिद्ध होता है।

पात्रों का चरित्र-चित्रण

इस कृति में यूसुफ, जुलेखा, याकूब आदि का चरित्र-चित्रण मिलता है। यद्यपि कवि का लक्ष्य पात्रों का चरित्र-चित्रण करना नहीं रहा है, तथापि इसके पात्र अपनी चारित्रिक विशेषताओं के कारण अपनी पहचान कायम करने में समर्थ हैं। इनकी अपनी-अपनी विशेषताएँ कथा के विकास के साथ स्वयं ही निखर कर सामने आ जाती हैं।

यूसुफ का चरित्र सरलता, नम्रता, दया, त्याग, प्रेम, तपस्या, सहनशीलता और स्वप्न विशेषज्ञता के कारण विशिष्ट बन गया है। जुलेखा अपूर्व सुन्दरी, आदर्श प्रेमिका और अध्यात्म साधिका रूप में सम्पूर्ण काव्य-प्रासाद पर कलश की भाँति शोभित है। आदर्श पिता के नाते नबी याकूब के अन्तस में स्नेह, वात्सल्य, दया, करुणा और ममत्व के निर्झर झरते हैं।

पात्रों द्वारा भाव-व्यंजना

'यूसुफ जुलेखा' का सर्वप्रमुख भाव प्रेम है। निसार के यूसुफ और जुलेखा दोनों प्रेम के पुजारी हैं। उनका प्रेम अनेक विध बाधाओं के बीच मिलता है। कबीर के शब्दों में उनकी जुलेखा जानती है कि हँस-हँस कर प्रियतम को नहीं पाया जा सकता, जिसने भी पाया रोकर ही पाया। इसीलिए वह समस्त भोग-विलास छोड़कर यूसुफ के लिए चालीस वर्ष तक कठिन तपस्या करती है-

चालिस बरस जो जोग कमावा। तब प्रियतम हम तुम को पावा।।
दरब अरथ सब देहु लुटाई। जोबन रूप अनूप गँवाई।।२७/६

कवि ने जिन-जिन स्थायी भावों की व्यंजना की है, उनमें रति एवं शोक प्रमुख है। भय की भी व्यंजना कहीं-कहीं हुई है। जब नबी याकूब अपने पुत्र यूसुफ के शोक में तड़पते हुए घर-बार सब कुछ छोड़ देते हैं और पुत्र-वियोग में रोते-रोते उनकी आँखों की ज्योति चली जाती है, वहाँ एक पिता के पुत्र-शोक की वास्तविक मनः स्थिति उभर आती है-

रोवत नयन भये दोउ अंधा। फाट न हिया सँवर चित बंधा।।५/७

जुलेखा का यूसुफ के प्रति प्रेम होने और उसके वियोग में तड़पने की जो व्यंजना कवि ने प्रस्तुत की है वह एक प्रेमिका के मनोभावों को प्रकट करने में सक्षम है। जुलेखा के प्रेम का उदय उस समय होता है जब जुलेखा स्वप्न में अन्धकार विनाशक सूर्य के समान आभामण्डित यूसुफ को देखती है-

भइ बाउर तन सुध बुध त्यागी। चाहा जायसु घर ते भागी।।
प्रेम पीर ते भई अधीरा। होय व्याकुल तन फारे चीरा।।
उठि-उठि चले छाड़ि घर बारा। तन पर लागि चढ़ावै छारा।।८/२०

इस प्रकार 'यूसुफ जुलेखा' में भाव-व्यंजना बहुत ही स्वाभाविक और क्रमबद्ध है।

महाकाव्यत्व

यह मसनवी शैली पर लिखा हुआ महाकाव्य है। इसमें भारतीय महाकाव्य की विशेषताओं के साथ ही फारसी मसनवियों की विशेषताएँ भी सम्मिलित हो गयी हैं। यहाँ हम महाकाव्य सम्बन्धी भारतीय-शामी मान्यताओं के प्रकाश में 'यूसुफ जुलेखा' का मूल्यांकन करेंगे।

'यूसुफ जुलेखा' की कथावस्तु महाकाव्य की शर्त तथा मसनवी शैली दोनों के ही अनुरूप है। महाकाव्यों की दृष्टि से इसकी कथावस्तु को हम लोकप्रसिद्ध कह सकते हैं। 'यूसुफ जुलेखा' की यह कथा अपनी लोक प्रसिद्धि के कारण ही अरबी, फारसी, अंग्रेजी, उर्दू, सिन्धी, पंजाबी, कश्मीरी, बंगाली, हिन्दी, दक्षिणी हिन्दी आदि अनेक भाषाओं में मिलती हैं। मसनवी की दृष्टि से भी यह कथा सफल कही जायेगी क्योंकि मसनवियों के समान इसकी कथा प्रेम प्रधान है।

भारतीय लक्षणों के अनुसार महाकाव्य में आठ से अधिक और तीस के कम सर्ग होने चाहिए। मसनवियों में सर्गों की कोई निश्चित संख्या नहीं बताई गई है। अस्तु, सर्ग-विधान की दृष्टि से इसे महाकाव्य कहना अनुपयुक्त न होगा। सर्गों का नामकरण मसनवियों के ढंग पर किया गया है। प्रत्येक खण्ड का नाम कथा के प्रमुख पात्र या घटना के आधार पर रखा गया है। जैसे जुलेखा वर्णन खण्ड, स्वप्न खण्ड, जुलेखा विरह खण्ड, षड्ऋतु वर्णन खण्ड, यूसुफ जुलेखा मिलन खण्ड आदि। इसमें सर्ग के अन्त में छन्द परिवर्तन वाली बात नहीं पायी जाती। मसनवियों में इस नियम का पालन आवश्यक नहीं माना गया है। कदाचित् इसीलिए कवि ने छन्द-परिवर्तन नहीं किया। सम्पूर्ण महाकाव्य में प्रायः छन्दों का एक क्रम में ही पालन किया गया है। नौ चौपाइयों के बाद एक दोहा रखा गया है। यह क्रम सम्पूर्ण कृति में बिना किसी परिवर्तन के अपनाया गया है। इस दृष्टि से यह कृति हिन्दी की अन्य मसनवियों के अधिक नजदीक है।

वस्तु-संगठन की दृष्टि से 'यूसुफ जुलेखा' कथा के दो खण्ड दिखाई पड़ते हैं। प्रथम आदि खण्ड और दूसरा उत्तर खण्ड। आदि खण्ड की कथा में काव्यतत्त्व और कल्पना का सामंजस्य अधिक दिखाई पड़ता है, इसमें कथा-भाग गौण रह गया है। दूसरे खण्ड में कथा प्रमुख हो गई है। काव्य में दोनों खण्डों को इस प्रकार बाँधा गया है कि जिससे ये परस्पर अभिन्न लगते हैं।

नाटक की अवस्था और सन्धियों के अनुरूप महाकाव्य में भी कार्य की पाँच अवस्थाओं और पाँचों सन्धियों का निर्वाह आवश्यक होता है। कार्य की पाँच अवस्थाओं के नाम आरम्भ, प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति, और फलागम तथा उसकी सन्धियों के नाम मुख,

प्रतिमुख, गर्भ, अवमर्श, निरवहण हैं। इन पाँचों अवस्थाओं में क्रमशः पाँच संधियों का निबन्धन होता है। 'यूसुफ जुलेखा' की कथा में इन अवस्थाओं और सन्धियों का संधान करते समय हम देखते हैं कि इस नायिका प्रधान प्रबन्धात्मक काव्य-कृति में फल की कामना और विभिन्न अवस्थाओं से होते हुए फल की प्राप्ति यूसुफ को नहीं जुलेखा को होती है। स्वप्न दर्शन में पहली बार जुलेखा द्वारा यूसुफ को देखना और उसके अन्तस में यूसुफ के प्रति उत्सुकता का भाव जगना आरम्भ नामक कार्यावस्था और उसके अन्तर्गत मुख सन्धि है। यूसुफ को पहली बार स्वप्न में देखनेके बाद जब जुलेखा के हृदय में उसका नाम-पता जानने की कामना उत्पन्न होती है और तीसरे स्वप्न में नाम-पता ज्ञात हो जाने के बाद जब जुलेखा यूसुफ से विवाह करने का निश्चय करती है तब प्रयत्न अवस्था और प्रतिमुख सन्धि का विधान होता है। इसी प्रकार वजीर से जुलेखा के विवाह और उसके रूप में अपने स्वप्न प्रिय को न पाकर उसके साथ दाम्पत्य जीवन के सम्बन्ध से विरत रहने, यूसुफ को गुलाम के रूप में खरीदवाने, उससे प्रणय याचना करने, उससे अपनी कामना पूर्ति न होते देख उसे जेल भिजवाने, पुनः राजा के सम्मुख जाकर अपने दोष को स्वीकार करने और उसके परिणामस्वरूप घर से निष्कासित कर दिये जाने तथा एक लम्बे समय तक यूसुफ के लिए भटकते रहने के कारण असमय में वार्धक्य को प्राप्त होने में नायिका को जिन सम-विषम परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है उसमें फल का एकान्तिक निश्चय नहीं हो पाता। इसलिए यह कार्य प्राप्त्याशा अवस्था और उसके अन्तर्गत गर्भ सन्धि का समावेश हुआ। नाविक की सहायता से जब जुलेखा का यूसुफ से मिलना निश्चित होता है और दोनों की भेंट होने पर जुलेखा अपनी व्यथा-कथा यूसुफ को सुनाती है, यूसुफ उसे सुनकर करूणाद्र होता है तब जुलेखा को यूसुफ की प्राप्ति एकदम निश्चित हो जाती है। इसे नियताप्ति अवस्था और अवमर्श सन्धि के अन्तर्गत रखा जा सकता है। जुलेखा का यूसुफ से विवाह होना फलागम अवस्था और निरवहण सन्धि का उदाहरण है। इस प्रकार इस दृष्टि से भी 'यूसुफ जुलेखा' एक सफल महाकाव्य है।

मंगलाचरण की दृष्टि से शेख निसार ने यूसुफ जुलेखा का आरम्भ मसनवियों की पद्धति पर किया है। उसमें एक आदि स्वरूप का वर्णन किया गया है और उसकी महान कर्तृत्व-शक्ति का स्मरण किया गया है। यह विशेषता भारतीय महाकाव्य के लक्षणों तथा फारसी मसनवियों दोनों दृष्टियों से रेखांकित करने योग्य है। मसनवियों के अनुकरण पर शाहेवक्त के रूप में सुलतान शाहआलम का वर्णन किया गया है। इस दृष्टि से भी यह मसनवियों के अधिक समीप है।

महाकाव्य का नामकरण कवि, नायक अथवा वस्तु के आधार पर होना चाहिये। 'यूसुफ जुलेखा' का नामकरण इसके नायक और नायिका के नाम पर हुआ है। अतः ग्रन्थ का नामकरण उपयुक्त ही माना जायेगा।

महाकाव्य का नायक देवोपम व्यक्ति अथवा उच्चकुल में उत्पन्न धीरोदात्त गुणों वाला

व्यक्ति होता है। 'यूसुफ जुलेखा' में यूसुफ के जीवन का सविस्तार वर्णन है। वही इसका नायक है जो धीरोदात्त गुणों से युक्त देवोपम व्यक्ति है। पर इस बात को सदैव ध्यान में रखना होगा कि 'यूसुफ जुलेखा' एक नायिका प्रधान काव्यकृति है, जिसमें प्रारम्भ से लेकर फलागम तक की सभी अवस्थाओं में मुख्य पात्र की भूमिका में जुलेखा ही रही है।

रस और भावाभिव्यंजना की दृष्टि से यह महाकाव्य पूर्णतः सफल है। इसका अंगीरस शृंगार है। शृंगार के संयोग और वियोग दोनों पक्षों का मार्मिक उद्‌घाटन करने में कवि को पूर्ण सफलता मिली है। शृंगार के साथ ही इसमें भक्ति, वात्सल्य, करुण आदि रस भी मिलते है, परन्तु ये गौण रूप में ही वर्णित हैं। भावभिव्यंजना की दृष्टि से यह काव्य पूर्णतः सफल है।

अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि 'यूसुफ जुलेखा' मसनवी शैली पर लिखा एक सफल भारतीय महाकाव्य है। इसमें भारतीय काव्यशास्त्र और फारसी मसनवी में निरूपित महाकाव्य के प्रायः समस्त लक्षणों का निर्वाह हुआ है।

काव्य-रूढ़ि

कथावस्तु संगठन में कवि ने काव्य-रूढ़ियों का सधा हुआ प्रयोग किया है। असल में, कवि के सम्मुख कथानक रूढ़ियों के प्रयोग की एक लम्बी परम्परा थी, जिससे उसका प्रभावित होना स्वाभाविक था। 'यूसुफ जुलेखा' की कथा स्वयं एक प्रचलित काव्य-रूढ़ि है, जो 'बाइबिल', 'तलमूद', 'कुरान', से होते हुए अरबी, फारसी, उर्दू, सिन्धी, पंजाबी, कश्मीरी, बंगला, हिन्दी, दक्षिणी हिन्दी आदि दुनियाँ की विभिन्न भाषाओं में निरन्तर प्रयोग के कारण काव्य-रूढ़ि बन गयी है। 'यूसुफ जुलेखा' में नियोजित कुछ उल्लेखनीय काव्य-रूढ़ियाँ निम्नलिखित हैं-

१. स्वप्न में प्रिय-दर्शन और जागने पर उसका स्मरण कर दुःखी होना।
२. सच्चे प्रेम का प्रभाव।
३. स्त्री का परपुरुष प्रेम और विफलता के कारण क्रोध।
४. दैवीय पात्र के द्वारा संकट काल में सहायता।
५. स्वप्न के द्वारा भविष्य का पूर्वानुमान।
६. मानव क्रय-विक्रय।
७. भाइयों का दुर्व्यवहार और गृह त्याग।
८. वरदान और लौकिक प्रभाव।
९. पति की मृत्यु पर प्राण त्यागना।
१०. नाममुद्रा का प्रयोग।
११. सोलह शृंगार ।
१२. बारह आभरण।
१३. नख-शिख सौन्दर्यांकन।

१४. षड्ऋतु वर्णन।

१५. बारहमासा।

काव्यभाषा

'यूसुफ जुलेखा' जनसाधारण में प्रचलित अवधी में रचित काव्यकृति है। इसमें अरबी, फारसी तथा संस्कृत के तत्सम शब्दों की ओर झुकाव नहीं है, बल्कि इसमें तत्कालीन अवधी का रूप ही देखने को मिलता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य है-

यूसुफ रैन सपन एक देखा। बहुर पिता तैं कहा सरेखा।
जानहु गरह एकादस आए। रवि-ससि मिलि मोहिं सीस नवाए।।
सुन याकूब सु कीन्ह हुलासा। राज-पाट सुख भोग विलासा।। ३/२

यह अवधी पूर्वी अवधी क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाली पूर्वी अवधी है। इसमें बहुरि, सरेखा, जानहु, हुलासा आदि कुछ ठेठ अवधी के शब्द प्रयुक्त हैं। किन्तु ठेठ प्रयोगों का जैसा बाहुल्य जायसी की 'पद्मावत' में दिखाई पड़ता है वैसा यहाँ नहीं है।

इस रचना में यत्र-तत्र ब्रजभाषा का स्फुट प्रयोग हुआ है। यह प्रयोग सवैया छन्दों में मिलता है जिसे कवि ने कवित्त कहा है। 'षड्ऋतु वर्णन' और 'बारहमासा वर्णन' में ब्रजभाषा का आकर्षण विशेष रूप से दिखायी पड़ता है। एक नमूना देखिये-

बोलहिं मोर वियोग भरे, बन कोकिल कूक हिया निज झूलै।।
झूलहिं स्याम बिना घनस्याम, घमंड से मेघ चहूँ दिसि दूल्है।।
डोलहिं आसन जोगी जती के, निसार महारस घूँघट खोलहिं।।
घोलहिं मेघ वियोगिन को दुख, डूबहिं चातक बोल न बोलहिं।। १६/३

इस कृति में अरबी,फारसी के शब्दों का प्रयोग प्रायः नहीं है। पात्रों के नाम ही उस भाषा के प्रमाण हो सकते हैं। अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग न करना इसलिए स्मरणीय है कि रचनाकार मुसलमान है और उसने अपने काव्य के लिए शामी कथा का चुनाव किया तथा प्रथम पाण्डुलिपि फारसी लिपि में तैयार की। फिर भी, सम्पूर्ण कृति में नेस्त, सुलतान, दीन, दीवान, खिताब आदि अरबी-फारसी के एकाध शब्द ही मिलते हैं। यथा-

१. दूजे उमर खिताब सोहाये। २. नेस्त हेस्त सम करे सरेखा।
३. दीन नबी कर प्रोहित कीन्हा।

कवि की भाषा-नीति यद्यपि विशुद्धतावादी नहीं है, तथापि उनकी भाषा में अनुज, दुहिता, मंत्र, द्रुम, सावक जैसे सहज तत्सम शब्द भाषा के स्वाभाविक प्रवाह में दिखाई पड़ते हैं। लोकमानस की पकड़ के लिए पीरा, थोरा, मोख, मुकुति, सोग, अगिनि, सारग, सरवन जैसे तद्भव शब्दों के प्रयोग कवि ने मुक्त भाव से किये हैं। इन शब्दों पर ध्यान देने से लगता है कि जैसे प्रेम की आँच पाकर उनकी कोरें समाप्त हो गयी हैं।

काव्यगुण और शब्द-शक्ति की दृष्टि से 'यूसुफ जुलेखा' में प्रसाद और माधुर्य गुणों की प्रधानता है। ओजगुण का प्रायः अभाव है। फिर भी, जब यूसुफ के भाई उसको अपने साथ

वन ले जाने के लिए आग्रह करते हुए पिता याकूब को यूसुफ की सुरक्षा का आश्वासन देते हैं तब उनके कथन में ओज का समावेश हो जाता है। यथा-

हम यक-यक अस बल-बरबंडा। हैं गयंद बली भुज दंडा।।
भागैं सिंह हाँक जब मारैं। दसो बन्धु दस दिग्गज टारैं।।
मैमंत गयंद न आनहिं लेखैं। काँपहिं गैंडा सिंह विसेखैं।।
का हम सौंह जो करै सुआना। वृथा सोच तुम हिये समाना।।३/५

भाषा-सौष्ठव की दृष्टि से शब्द-शक्तियों को भी ढूँढा जा सकता है। अभिधात्मक कथन कहीं भी देखे जा सकते हैं पर लक्षणा और व्यंजना शब्द-शक्तियों के उदाहरण भी कम नहीं हैं। आलोच्य कृति में उपादान-लक्षणा के उदाहरण तो प्रायः नहीं मिलते पर लक्षण-लक्षणा के उदाहरण पग-पग पर मिलते हैं। शेख निसार अपने काव्य में लक्षण-लक्षणा का प्रयोग अधिक करते हैं। "निसि दिन रहै लगाये छाती।" तथा "सोय रहै नित मोती झरै।" जैसे उदाहरणों में लक्षण-लक्षणा का प्रयोग हुआ है। इसमें व्यंजना की भी प्रधानता है। यथा-

जानहु गरह एकादस आए। रवि ससि मिलि मोहिं सीस नवाए।।३/२

इसमें लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग भाषा के सहज अंग के रूप में दिखाई पड़ते हैं। इनसे जहाँ कविता में अर्थ गाम्भीर्य का समावेश हुआ है वहीं भाषा में उक्ति-वैचित्र्य और जीवन्तता भी आयी है। कुछ मुहावरों और लोकोक्तियों के उदाहरण निम्नांकित हैं-

मुहावरे- १. फाट न हिया सँवर चित बँधा। २. काटेव खाय सबहिं घर बारा।
३. दहकै देंह औ तपै करेजा। ४. भागे बैदन कह दिन गाढ़े।
५. हिया बजर का भयो हमारा।

लोकोक्तियाँ- १. बैरी छोट न जानिये, छोटै दिन औ रात।
२. जस दीपक संग फिरै पतंगा।

कवि ने आलोच्य कृति में पारिभाषिक शब्दों के प्रयोग बहुत कम किये हैं। फिरभी 'आदिखण्ड' के वन्दना प्रसंग में अलख, तुरिया, अनहद, निर्गुण, सगुण, मुक्ति जैसे कतिपय पारिभाषिक शब्द देखे जा सकते हैं। वास्तव में शेख निसार की काव्यभाषा चमत्कार प्रधान न होते हुए भी पाठक को दूर तक प्रभावित करती है और साथ ही कवि के भाषा विषयक उदार दृष्टिकोण को भी स्पष्ट करती है।

छन्द-विधान

इस कृत में कुल चार प्रकार के छन्दों के प्रयोग मिलते हैं- दोहा, चौपाई, सोरठा और सवैया। दोहा और चौपाई छन्दों का प्रयोग अवधी की प्रबन्धात्मक कविता की खास पहचान है। इन्हें सूफी कवियों ने अपने प्रेमाख्यानों में खुलकर अपनाया है। इसमें दोहा, चौपाई, छन्दों की प्रधानता है जो हर प्रकार से शास्त्र सम्मत है। इसमें सामान्यतः नौ चौपाई के बाद एक दोहे का प्रयोग किया गया है। उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

दोहा- भान सरूप तहँ आय गय, देखि रहै टक लाय।
लीन्ह प्रान तिन्ह कढ़िकै, रूप अनूप दिखाय।।८/१

चौपाई- यहि विधि निसि बीतै दिन आवै। सखिन्ह देख चख नीर छिपावै।।
अधिक विकल होय प्रान गँवावै। रोवत बैन न कहत सोहावै।।८/६

सोरठा और सवैया छन्दों का समावेश शेख निसार पर रीतिकालीन प्रभाव के रूप में देखा जा सकता है। सवैया के मत्तगयन्द और मदिरा दोनों ही रूप यहाँ मिलते हैं। 'बारहमासा' और 'षड्ऋतु-वर्णन' में सवैया छन्दों को जिस ढंग से कवि ने ग्रहण किया है वह सर्वथा रीतिकालीन कवियों के ढंग का है। आलोच्य कृति में सोरठा छन्द का प्रयोग सवैया, कवित्त छन्द के साथ ऊपर दोहे और नीचे सोरठे के क्रम में किया गया है। सोरठा एवं सवैया छन्दों के उदाहरण देखिये-

सोरठा-

दादुर मोर अँदोर, एक ओर घनघोर उत।
बसै पवन झकझोर, सूने मँदिल न जाइ रहि।।१६/३

मत्तगयन्द सवैया-

सूखि समुद्र गए रवि तेज सो, सूखि गई सलिता जलधारी।
सूखि गए पुहुमी रवि मंदिल, सूखि गए जल मेघ सुखारी।।
सूखहिं कूप तड़ाग लता द्रुम, बेलि बली, बन और फुलवारी।
सेख निसार अय बिरहानल, सूखै न ई अखियाँ दुखियारी।।१६/२

मदिरा सवैया-

छाय गयो जग सीत निसार, लगे खग केलि करै सरसों।
कैसे कटै यह रैन पहाड़ से, बेधे जोन्हाई हिया सरसों।।
देखैगो कौन बसंत समय, जब ढ़ाँख सती से बसे सरसों।
हेवंत के रितु में सखे, अब आँखिन फूलि गई सरसों।।१६/५

अलंकार-विधान

शेख निसार यद्यपि अन्यान्य सूफी कवियों की भाँति अलंकारवादी नहीं थे, तथापि वे कविता में अलंकार की महत्ता को भलीभाँति जानते थे और हिन्दी में अप्रस्तुत-विधान की पुष्ट परम्परा से जुड़े भी थे। उनकी काव्यकृति में 'शब्दालंकारों की छटा देखने के आग्रही विद्वानों को निराश होना पड़ेगा तथापि उसमें अभिव्यक्ति के प्रवाह में कुछ शब्दालंकारों के प्रयोग देखे जा सकते हैं। इन शब्दालंकारों से उनकी कविता के श्रीसौन्दर्य में कोई व्याघात नहीं पहुँचा है। चमत्कार की सृष्टि करने वाले श्लेष और वक्रोक्ति अलंकार के उदाहरण तो वहाँ ढूँढ़े भी नहीं मिलते। शब्दालंकारों में मात्र अनुप्रास और यमक के उदाहरण ही यहाँ

मिलते हैं। यथा-

अनुप्रास- चैत तरुवर फूल फूले, भँवर सब्ब भूले फिरैं।
पवन सीतल तन सिराने, केतकी पर अलि गिरैं।२४/१

यमक- छाय गयो जग सीत निसार, लगे खग केलि करै सरसों।।
कैसे कटै यह रैन पहाड़ सी, बेधे जोन्हाई हिया सरसों।।१६/५

शेख निसार ने अर्थालंकार के अन्तर्गत जुलेखा के रूप-चित्रण में सादृश्य और वैषम्यमूलक दोनों प्रकार के अर्थालंकारों को ग्रहण किया है। सामान्य रूप चित्रण में वे सादृश्यमूलक अलंकारों का प्रयोग करते हैं और सौन्दर्य की अनुपमेयता को प्रमाणित करने के लिए वैषम्यमूलक। सादृश्यमूलक अर्थालंकारों में शेख निसार को उत्प्रेक्षा और सांगरूपक का प्रयोग अत्यन्त प्रिय है।

उत्प्रेक्षा-

जुलेखा के नख-शिख वर्णन में जो ललित उत्प्रेक्षाएँ मिलती हैं उनसे कवि की मौलिक कल्पना और लोकानुभव की विशदता का ज्ञान होता है। निसार ने अपनी उत्प्रेक्षाओं में जो अप्रस्तुत चयन किया है, वह न केवल वर्ण्यविषय के साथ बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव से सम्बद्ध है, बल्कि अपने पाठकों को प्रभावित और चमत्कृत भी करता है। उत्प्रेक्षा का एक उदाहरण देखिए-

दुअ अँबिरित कै सुभग कटोरी। तामहँ सरब हलाहल घोरी।।
लहर-कटाछ न जाय बखाना। जिन देखा तिन निश्चय माना।।
दोउ खंजन सारद रितु माहीं। राका ससि निरभरै लड़ाहीं।। ७/७

रूपक-

शेख निसार का दूसरा प्रिय अलंकार रूपक है। यह सच है कि वे गोस्वामी तुलसीदास की भाँति लम्बे और सुगठित रूपकों का निर्वाह नहीं कर पाते हैं, पर यह अलंकार उनकी कविता के साथ हर समय लगा रहता है। विधाता द्वारा रचित जुलेखा के भौंह रूपी धनुष पर जब भृकुटी का बाँण चढ़ता है तब सारे संसार के प्राणी काँपने लगते हैं-

धनु भौहें बिधनै रच्यो, भृकुटी सनमुख बान।
देखि सरासन सिर चढ़े, काँपै जगत परान।।७/६

उपर्युक्त पंक्तियों में सांगरूपक अलंकार की जो योजना हुई हैं वह यद्यपि परम्परा मुक्त है, तथापि कवि ने उनका प्रयोग अत्यन्त सटीक किया है।

उपमा-

शेख निसार का औपम्य-विधान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। फिर भी उपमा अलंकार का प्रयोग उनके यहाँ उत्प्रेक्षा और रूपक की अपेक्षा कम हुआ है। कुछ उदाहरण देखिए-

(१) केस सीस मानो निसि कारी। प्रातकाल मुख कै उँजियारी।।७/४

(२) जस चम्पे की कली सुहाई ॥७/६

(३) नारंगी सो उरज कठोरा ॥७/१४

शेख निसार ने प्रतीप, व्यतिरेक, संदेह, अपह्नुति, विरोधाभास, असंगति, विभावना क्रमालंकार आदि वैषम्यमूलक अलंकारों के प्रयोग अधिक किए हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है-

व्यतिरेक-

चंद लिलाट न सोहै, पूरन जोत अपार।
वह कलंक निकलंक यहि, वह षट बुध लहि सार।॥७/५

प्रतीप-

अधर सुधाधर बरनि न जाई। भये अनूठि वे जूठन पाई।॥७/११

संदेह-

मुख पर लरहिं जो होइ बेकरारा। तब संदेह करै संसारा।।
कोउ कहै अहै तम राजा। सोहै तहवाँ जोत विराजा।।
कोउ कहै अहै दिनेस सोहावा। बरत हेत कालिंदी आवा।।
कोउ कहै कि नागिन कारी। दीन्ह छाँड़ि मन सो उजियारी।॥७/४

विरोधाभास-

जाकहँ लखै भये चख राता। मरि-मरि जियै रहै मदमाता।॥७/७

अक्रमालंकार-

नथ बेसर छबि खेल कराए। मोती डोलत हिया डोलाए।॥७/६

विभावना-

जब मुसकाय सखिन्ह से गोरी। झरहिं फूल औ होहिं अँजोरी।॥७/११

क्रमालंकार-

सेत साम औ अरुन सोहावा। विख अमरित मधु घोर दिखावा।।
जाकहँ लखै भये चख राता। मरि-मरि जियै रहै मदमाता।॥७/७

इन अलंकारों की विवेचना करते हुए किसी को ऐसा लग सकता है कि शेख निसार को अप्रस्तुत योजना के आधार पर श्रेष्ठ उद्भावक की संज्ञा नहीं दी जा सकती, पर इतना तो स्वीकार ही करना पड़ेगा कि उन्हें हिन्दी काव्यधारा का सम्यक् ज्ञान था और वे उसे भलीभाँति आत्मसात् भी कर सके हैं।

निष्कर्ष

शेख निसार कृत यूसुफ जुलेखा के विषय में निर्णयात्मक रूप से कुछ कहने से पहले आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय की वह टिप्पणी मानस-पटल पर उभर आती है, जिसमें उन्होंने 'यूसुफ जुलेखा' को बुझती हुई सूफी काव्य-परम्परा की भभक भर घोषित करते हुए कहा कि "इसमें वह बात नहीं है जो भारतीय वेषभूषा में परम प्रेम की दिव्य ज्योति जलाने और कटे

हुए हृदयों को मार्ग दिखाने वाली पूर्ववर्ती काव्य-कृतियों में थी।"[1] आचार्य पाण्डेय के इस कथन से मैं सहमत नहीं हूँ। सूफी काव्य परम्परा की इस अंतिम कड़ी का विशेष महत्त्व है। शेख निसार ने इस कृति में हिन्दू घराने की प्रेम कहानी के स्थान पर 'कुरान' में वर्णित यूसुफ-जुलेखा की कहानी को अपना कर भी इस काव्य कृति को स्थान-स्थान पर भारतीय प्रभावों से युक्त किया है। 'आदि खण्ड' में वर्णित कर्म-सिद्धान्त एवं नाथपंथी प्रभावों के अतिरिक्त याकूब द्वारा अपने पुत्रों को वेद पढ़ाना[2], यूसुफ द्वारा वेदान्त का अध्ययन करना[3], याकूब का मृत्युपरान्त शिवलोक जाना[4] आदि भारतीयता का प्रभाव है। 'उपसंहार खण्ड' में मृत्यु-शैया पर पड़ा शेख निसार का बाईस वर्षीय पुत्र लतीफ अपने दुःख विह्वल पिता को समझाते हुए कुरान में वर्णित याकूब एवं यूसुफ के प्रकरण के साथ मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के जीवन की याद दिलाता है।[5] यहाँ स्पष्ट रूप से पूर्ववर्ती सूफी संतों की उदारतावादी चेतना का शेख निसार पर प्रभाव है। हिन्दू घराने की प्रेमकहानी के माध्यम से सूफी धर्म-साधना का प्रचार करने वाले फकीरों ने अपनी रचनाओं में हिन्दू जीवन-दर्शन का वर्णन किया तो कौन बड़ी बात? 'कुरान' की कहानी को लेकर उसमें यदि हिन्दू धर्म-साधना के सूत्रों को पिरोया गया तो यह सचमुच बड़ी बात है, इसे पूरी तरह रेखांकित किया जाना चाहिये। निःसन्देह 'यूसुफ-जुलेखा' में शेख निसार ने भारतीय धर्म-साधना के अनेक तत्त्वों को समाहित कर उसे अभिनव रूपाकार देने में सफलता पायी है।

भाव और शिल्प की दृष्टि से 'यूसुफ जुलेखा' सूफी प्रेमाख्यान परम्परा में सबसे अलग पहचान कायम करने वाली कृति है। जिन ढेर सारे सूफी प्रेमाख्यानक काव्यों के माध्यम से हिन्दी प्रदेश में सूफी संतों का स्मरण किया जाता है उनमें इस कृति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पूर्वी अवधी में रचित इस काव्यकृति को भाषा वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना ही जायेगा, काव्यत्व की दृष्टि से भी इसे भुलाया नहीं जा सकता। एक तो इस कृति के रचनाकार के सम्मुख विशद काव्य परम्परा थी, जिससे उसने रस ग्रहण किया और दूसरी ओर उसकी कारयित्री प्रतिभा अपने पूर्ववर्तियों की रचनाओं में आयी हुई दुर्बलताओं से अपने को बचाने के लिए सचेष्ट थी। यत्र-तत्र कवि ने अपनी मौलिक उद्भावना का भी परिचय दिया है। अस्तु, इस अपूल्य कृति के प्रकाशन से सूफी साहित्य-परम्परा के परिपुष्ट होने के साथ ही हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि होगी।

---

१. आचार्य चन्द्रबली पाण्डेय, अनुराग बासुरी, भूमिका, पृ० ६
२. शेख निसार, यूसुफ जुलेखा, २/४
३. वही, १५/२५
४. वही, २६/६
५. वही, २८/३

यूसुफ़ ज़ुलेख़ा

आदि खण्ड

सुमिरौं प्रथम स्वरूप सुहावा। आदि प्रेम निज तन उपजावा।।
प्रेम अगिन अद्भुत उपजारा[1]। बहुरि पवन जल उपनेउ छारा[2]।।
अगिन ते पवन पवन ते पानी। पुनि पानी ते खेह उड़ानी।।
यह सबमें उपज्यो संसारा। धरती सरग सूर ससि तारा।।
चारि तत्त्व में सब कुछ साजा। पँचवें सन आकास विराजा।।
मुनि रिषि गन्धर्व दूत बिठाये। जंगम अस्थावर उपजाये।।
प्रेम अगिन तेहि काहुँ सँभारा। रचा मानुस बहु विधि विस्तारा।।
तेहि सौंपा वह प्रेमक थाती। दीपक माँह धरा जस बाती।।
तेहि बाती महँ आप[3] छिपाये। होय परछिन पुनि देह जराये।।

प्रभुताई के बीच ते, को गत लीखन पार।
कहाँ स उत्तम अंस वह, कहँ निकसत तेहि झार।।१।।

रचा मनुस तेहि रूप सोहावा। प्रेम अंस तेहि हिए छिपावा।।
अस गुनवन्त दयाल सयाना। तेहि निरगुन नर सब अग्याना।।
जाके रूप न रंग न रेखा। ताकी[4] रचना आव न लेखा।।
वहै रूप वपु प्रेमक साना। दीन्ह झार कहि अलख सुजाना।।
यहि विधि सब जग परगट कीन्हा। एक ते एक उदित कर दीन्हा।।
जब वह नेस्त करै पुनि सोई। एकते एक अलोपित होई।।
पानी खाइ खेह का लेई। पुनि पानी कहँ अगिन हरेई।।
पवन अगिन कहँ करै सँघारा। मिले आन तेहि अंस अपारा।।
वह के संग जगत कर लेखा। नेस्त-हेस्त सभ करे सरेखा।।

अलख अमर अविनासी, घट-घट व्यापक होय।
सरन गई सुखदायक, दुख भंजन है सोय।।२।।

वह पूरन चौदह खण्ड माँही। वह बिन जिया जंतु कोउ नाहीं।।
सब महँ आपु सु खेले खेला। नट-नाटक-चाटक जस मेला।।
ना वह मरे न मिटे न होई। अपरम मरम न जाने कोई।।
[5→]जाग्रत सपन तेहि अस्तुत जोगू[6]। रचा ताहि जो चीन्हे भोगू।।
गुंजत ग्यान औ भेद अपारा। अगम आव घट तन दहुँ सारा।।

पाठान्तर-१०- उतपति प्रेम अगिन उपजावा, २०- अंबुअ उपजावा, ३- आय, ४- ताकिय, ५→- जाकी रति में सुख नित साजा। तन तरिया महँ आय विराजा।। ६०- कहँ रसना तेहि अस्तुति तेहि अस्तुति जोगू।

कबहूँ आप[1] अकेला रहई। कबहूँ यह रचना चित चहई।।
नाटक खेल रच्यो संसारा। जाकहँ देख ज्ञान बल हारा।।
एक रूप चारिहु दिसि देखा। दूसर अवर न जाय विसेखा।।

अगनित बार सँवारा, यहि जग अगम अपार।
जहाँ अलख संसार सब, जहँ जग तहँ करतार।।३।।

वहि कर दरस दुओ जग पूरा। नर बाउर सो गिनहि अधूरा।।
वह निरगुन-सरगुन[2] दोउ[3] रूपा। परघट गुपत सो दुओ अनूपा।।
जो निरगुन कहँ चाहिय देखा। अलख अमूरत जाय न लेखा।
जो सरगुन तो रूप विसेखे[4]। रूप अपार यही[5] जग देखे।।
पै जब आप देखावै चाहिय। दिव्य दृष्टि नर[6] पावै ताहिय।।
पूरन चहुँ दिसि जोति अपारा। बिना दृष्टि कोउ लखै न पारा।।
जो यह जग वह रूप न देखा[7]। वह जग केहि विधि जाय विसेखा।।
अनहद सबद सुने सब कोई। काहे दरस दिये न सोई।।
कत सरवन सुन वचन हुलासा। काहें ते नयन सो रहे निरासा।।

सुनै सबद सब कोऊ, अनहद दस परकार।
ताकर रूप न देखें, कारन कवन विचार।।४।।

ते दयाल सुखदायक राजा। जिन अस मोहिं गरीब निवाजा।।
हतेउँ नेस्ति अति हीन मलीना[8]। तैं करतार रहे मोहिं कीन्हा।।
मूरख हतेउँ कीन्ह सज्ञाना। गुन विद्या सब कीन्ह निधाना।।
कोरी कुलीन वंस अवतारा[9]। दीन्ह स्वरूप रूप[10] उजियारा।।
तिन मोहिं दीन्ह सदा सुख भोगू। तिन का देहुँ अहहुँ केहि जोगू।।
संकट गाढ़ पड़े जब सहाई[11]। तिन पल महँ हर लेहि गुसाई।।
मैं तो अधम पातकी आहा। तै निरमान कीन्ह जस चाहा।।
कोटि विपति ते हरी दयाला। सब कुछ दीन्ह औ कीन्ह निहाला[12]।।
जग महँ विदित कीन्ह मोर नाऊँ। तै सुख दीन्ह औ सम्पत्ति ठाऊँ[13]।।

गुंजत ज्ञान गिरा अनेक, दीरघ दया अपार।
तोरे गुन कहँ लहि कहे, तैं दाता करतार।।५।।

पाठान्तर—१- आय, २- सौगुन, ३- सोउ, ४ᵒ- चौसर गगन तो रूप विसेषे। ५- हिये, ६- निरभावै, ७-लेखा, ८ᵒ- हतेउँ नेस्ति आधीन मिले ना। ९ᵒ- गौरी सहन वंस अवतारा। १०-भाउ, ११-सहहीं, १२,१३*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है।

बरनौ ताहि आदि जिहि[1] साजा। तेहिके जोत जगत उपराजा।।
आदि साज तेहि अनत पठावा। बोहित साज सो पार लगावा।।
तेहिके जोति सब सिष्टि सँवारा। जिया-जन्तु जेहि[2] आर[3] न पारा।।
जो अस पुरुष न जगमहँ आवत। ऊँच-नीच को पार न पावत।।
जग बोहित वह खेवक[4] देवा। केहि गुन पार उतारे खेवा।।
जेइ[5] अवतार सों लीन्ह[6] सरेखा। कोउ निरगुन कोउ सरगुन देखा।।
अस अवतार काहु नहिं लीन्हा। जिन निरगुन-सरगुन दोउ चीन्हा।।
कोटि कला तप करे जो भावै। बिन वह नाम मुकुति नहिं पावै।।
वह कर नाम लिये एक बारा। पावे मोख-मुकुति[7] निस्तारा।।

आदि जोति जाके रचे, तेहि ते सब कुछ दीन्ह[8]।
मोख मुगति[9] गति[10] पावै, जब नाम मुहम्मद लीन्ह।।६।।

चार मीत जस चार गरन्था। चारिउ सभा चारि सो पंथा।।
पहिले अबूबकर मग चीन्हा। नबी परापत राज जेहि कीन्हा।।
दूजे उमर खिताब सोहाये। लिख सुपन्थ इबलीस पुराये।।
तीजे उसमान पूरन लाजू। आदि करी चढ़ि कीन्हेउ राजू।।
अली बली गुन कीरत भारी। आदि[11] इमाम सो पर उपकारी।।
खण्ड-खण्ड जेहि खण्ड-अखण्डा। दीन्ह नवाइ बली भुज दंडा[12]।।
दीन नबी कर प्रोहित कीन्हा। मारि सत्रु कहँ सब जग लीन्हा।।
पुनि[13] इमाम जग खेवक आये। पाप हरे तिय पार लगाये[14]।।
हसन हुसेन महा जग तारन। दीन्ह सीस उम्मत के कारन।।

होय असहाब सो करि चढ़े, वहि दीन सो प्रोहित कीन्ह।
आदि अन्त लहि जगत सब, अगम निगम करि दीन्ह।।७।।

आलमसाह हिन्द सुलताना। तेहिके राज यह कथा बखाना।।
देहली राज करै ऊ नीता। उमरावन तेहि कीन्ह अनीता।।
कादिर खान सो अधम रुहेला। सो अपराध कीन्ह बड़ पेला[15]।।
पातसाह कहँ आँधर कीन्हा। सुत औ नारि सबहिं दुख दीन्हा[16]।।
कीन्ह अपत तैमूर घराना। राज प्रताप अधम नहिं जाना[17]।।

पाठान्तर- १- बेहि, २- जोहि, ३- वार, ४- सेवक, ५- जिन, ६- सबहिं, ७-मुगति, ८- कीन्ह, ९- मुगत, १०-गुन, ११-आद, १२०- लीन्हाँ दंड मंड भुज दंडा। १३-तिन, १४०- पाप हरे गुन पाप लगाये, १५०- सो अपराध कीन्ह बर फेला, १६*- सुत उतारि सब दुख तेहि दीन्हा, १७*- तेहि माना।

वह चण्डाल अधम अन्याई। पातसाह तैं कीन्ह बुराई।।
जस वै कीन्ह नेक फल पावा। दइय चरित खेल दिखरावा।।
नेह विटप पुनि जहर मिलाये। पातसाह सर छत्र भराये।।
अंध-धुंध सभ जग करि दीन्हा। तस आपुन देहलीपति कीन्हाँ।।
कीन्ही राज प्रताप जुत, रहिअ उतै कछु नाहँ।
तब सेवक साईं भये, साईं दुखित जग माहँ।।८।।
चहुँ दिसि अन्ध-धुन्ध जग छावा। अवध देस कहँ ईस बचावा[1]।।
यहियाखान आसफुद्दौला। जासु सहाय रहे[2] नित मौला।।
हिन्दू सचिव वह बली[3] नरेसा। तेहिके धरम सुखी सब देसा।।
दुऔ गुन ताह सो धर्म विधाना। धरम नीति जग इन्द्र समाना।।
करै नीति कुछ और न भावै। धरम दान को सरबर पावै।।
तेहिकी[4] राजनीति जग छाई[5]। लवा सचान[6] न सकै सताई[7]।।
पंवन खेह ना सकइ उड़ाई। पानी आग न सकइ बुझाई[8]।।
रहै सदा नव्वाब हमारा। जुग-जुग राज करै संसारा[9]।।
धरम नीति सब जग करे, परजा सुखी सरीर।
जुग-जुग[10] रहे सुदेस महँ[11], यहि नव्वाब वजीर।।९।।
सेखपूर उत गाँव सुहावा। सेख निसार जनम तहँ पावा।।
चारिउ ओर सघन अमराई। अगम अथाह चहूँ दिसि खाई।।
सेख हबीबुल्लाह सोहाये। सेखपूर जिन आन बसाये।।
बादसाह अकबर सुलताना। तेहिके राज कर जगत बखाना।।
अवध देस सूबा होय आये। बीस बरस लहि रहे सुहाये।।
तेहिके सेख मुहम्मद वारा। रूपवंत भू पर अवतारा[12]।।
ता सुत गुलाम मुहम्मद नाऊँ[13]। सो हम पिता सो ताकर गाऊँ।।
तेहि घर हौं विधिनैं अवतारा। चारि दीप जस चौमुख बारा।।
सभै बली सुपुरुष सज्ञाना। रूपवंत औ विद्यामाना।।
वंस मौलवी रूम के, सेख हबीबुल्लाह।
जेहिकी मसनवी जगत महँ, अगम-निगम अवगाह।।१०।।

पाठान्तर–१*- अवध देस काँ दियो बहावा, २. अहइ, ३. बाली, ४. तेहिके, ५. छाये, ६*- सूर सुजान, ७. सताये, ८*- करै न नीत धरम सुन्हि होई। मनुष समान सो परगट होई।। ९,१०*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है। ११. जेग, १२. भौ, १३*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है। १४*- तेहि के शेख मुहम्मद नाऊँ।

अंबिली बिरिछ न जाइ बखाना। द्वारे पर जस तँबुआ ताना।।
ताकी छाँह जो बैठे कोई। कैसो सूर कि सायर होई।।
अति उत्तम औ सीतल छाहाँ। पंछी बहुत रहहिं तेहि माहाँ।।
दहियल नित बोलै भिनसारा। पिउ-पिउ पपिहा करै पुकारा।।
धौराहर पर सोवन जाई। सुनत कूक वह नींद हेराई ।।
पीव कहाँ जब चातक बोलै। कपट कपाट हिये कर खोलै।।
पंछी नित सँवरे वह नाऊँ। करै खोज पिउ कै सब ठाऊँ।।
हम बाउर भूले जग माहीं। पिउ की खोज करहिं कुछ नाहीं।।
छिन इक हिये चोट अस लागी। पुनि सो ग्यान ध्यान सो भागी।।

खोजत पिउ पावै नहीं, चहुँ दिसि करै पुकार।
पंछी नित सँवरै पिउ, भूला फिरै निसार[1]।।११।।

अब आपन गुन करौं बखाना। हौं निरगुनैं कुछ भेद न जाना।।
सबहे गुरू कर गुरू सुहावा। सो हम गुरू वह जग महँ आवा।।
जेहि सो गुरू के दोउ जग आसा। अवर गुरू के भूख न प्यासा।।
चहै गुरू वह पार लगावै। चहै तो बार-बार भटकावै।।
वहकर प्रेम हिये महँ गोवा। अवर प्रेम सब चित तन खोवा।।
अच्छर एक पढ़ावा[2] सोई। बहुरि गुरू वह कियो बिछोई।।
भयो हिया जस समुद अपारा। किये गरंथ अनूप सँवारा।।
झूठ कथा कहि रैन बिहाये। अब वह समैं भोर कै आये।।
तब जब चेत भयउ ऊ ग्याना। साँच कथा अब करउँ बखाना[3]।।

वंस मौलवी रूम के, मो लै लावा पंथ।
सोय[4] सिद्ध बुध मसनवी, निरगम-अगम गंरथ।।१२।।

सात गरंथ अनूप बनाए[5] । हिन्दी औ पारसी सोहाए।।
संसकिरत तुरकी मन भाये। सभै प्रेम रस भरे सोहाये[6]।।
मेहर निगार की कह्यो कहानी[7]। रस मनोज रस कवित बखानी[8]।।
औ दीवान मसनवी भाखा। सोदी नस्र फारसी राखा।।
संसकिरत तुरकी औ ताजी। औ पारसी नसराब जो साजी[9]।।
वारि वयस महँ कथा बनाये[10]। मेहर निगार[11] अनूप सोहाये।।

पाठान्तर– १*– दोहा संख्या -११ तथा उसकी चौपाइयाँ नूर अली की प्रति में नहीं है। २. पठावा, ३*– यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है। ४. होय, ५. सोहाये, ६०– अरबी और फारसी सोहाये। ७०– हीर निकरि के गेहूँ खाने। ८०– कर दोइ नसर पारसी राखा। ९*– यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं हैं १०*– बार वेस, ११*– हीर निकारि।

रस मनोज रस कवित[1] सोहावा। सभै बातकर भेद बतावा।।
हंस जवाहिर प्रेम कहानी। कहा मसनवी अमृत बानी।।
इंसा[2] कहे जहाँ लह भेदू। ओ सब कथा जहाँ लह वेदू।।
झूठि जानि सबते मन भागा। अब यह साँच कथा चित लागा।।
तीन[3] नग्न एक मसनवी, औ नसाब दीवान।
सरोदय मेहर निगार पुनि[3], रस मनोज रस खान।।१३।।

हिजरी सन बारह सै पाँचा। बरनेउँ प्रेम कथा यह साँचा।।
अठारह सै सैंतालीसा[4]। संवत विक्रम सेन नरेसा।।
सतरह सै बारह पुनि साका। पूष मास पून्यौ ससि राका[5]।।
सत्तावन बरख बीते आऊ। तब उपजेउ यह कथा के चाऊ[6]।।
सात दिवस महँ कीन्ह समापन। दुरमति नाम अहो यह संवत[7]।।
गयो तरुन को तेज उमंगा। साथी गये छाँड़ि सब संगा।।
पाहुन अस यहि जगके माहीं[8]। भरहिं[9] दिवस अब कुछ रस नाहीं।।
बीता[10] जनम सो गोरख धंधा। अबहुँ न समझे यह मन अंधा।।
बारि बैस औ तरुन सोहावा[11]। गयो बीत तीसर पन आवा।।
बजै नगारा कूच का, करहु सुचेत सँभार।
अगम पंथ साथी नहीं, केहि विधि उतरब पार।।१४।।

विरिध बयस महँ कीन्ह विचारा। केहि विधि होय मोर उद्धारा।।
कह्यो सोतंत्र कथा अति साँचा[12] । जो कुरान माँ सुना औ बाँचा।।
सभ भाषा महँ कथा सोहाई। बरनेन भाँति-भाँति करवाई।।
इबरी औ अरबी सुरियानी[13]। पारसी औ तुरकी मिसरानी।।
भाषा मा काहू नहिं भाखा। मोरे अंस देव[14] लिखि राखा।।
सो अब कथा कहौं चितलाई। जेहि तन भोख मुकुति होइ जाई।।
यूसुफ नबी विदित जग आवा। तारागन महँ चन्द्र सोहावा।।
जहँ लहि महासिद्ध अवतारा। सब महँ रूप दीन्ह उजियारा।।
कथा अनूप जगत महँ सोई। प्रेम भगति सत धरम समोई।।
यूसुफ नबी अनूप जग, प्रगट भये संसार।
जाकी कथा सोतंत्र[15] अब, बरनउँ भजि करतार।।१५।।

पाठान्तर–१. गीत २- इंशा, ३°- सर दुई हीर निकार तिन। ४- सताईसा ५°- सतरह सै नब्बे ईसा का। ६- बँचाऊ ७- सम्मत ८°- बाएँ अंस उठि के जग माहीं। ९- बिरिध १०-बिना ११°- बारबंस औ तरुन सोहावा, १२°- कह्यो सो तंत्र कथा उत साचाँ। १३- सुरयानी, १४- दइव, १५-तंत्र

जो यह कथा[1] भजै चित लाई। नासै पाप पुन्नि अधिकाई।।
बाँझिन सुनै सो संतति पावै। उकट तरुन्ह[2] माँझहिं फर आवै।।
निरधन सुनै[3] होय धन आकर। निरगुन सुनै होय गुन सागर।।
दुखी सुनै तौ सुख अधिकाई। बंदी सुनै तो मोख होइ जाई।।
बिछुरि[4] परे सो देय मिलाई। रोगी सुनै रोग हरि जाई।।
निरदायी कहँ दाया आवै। जोगी सुनै जोग अधिकावै।।
कैसहु विपति गाढ़ जौ होई। सुनै कथा बुध डारै खोई।।
सुनै सती दिन-दिन सत बाढ़ै। बिरही बिरह दीन दुख दाढ़ै।।
प्रेमी सुनै प्रेम अधिकावै[5]। पंडित सुनै महा रस पावै[6]।।

जो कोइ सुनै पढ़ै लिखै, होय सिद्ध संसार।
वंस सुनत सुख पावै[7], देइ असीस निसार।।१६।।

कथा अनूप अहै जगमाहीं। दूसर कथा सो यह सम[8] नाहीं।।
नबी लागि यह कथा सुहाई। सरग लोक तिन दैव पठाई।।
एक दिवस जिबरैल जो आये। हसन हुसैन को दुख सुनाये।।
मारिन्ह तिन्ह बैरिन निरदाई। पानी बूँद न दीन्ह कसाई।।
सुनि कै मरन नबी दुख माना। रोवै लाग दुखित होइ प्राना।।
जब जिबरैल कथा यह लाये। आन अरथ तब बाँच सुनाये।।
जो इमाम कहँ उम्मत मारिन्ह। यूसुफ बन्धु कूप महँ डारिन्ह।।
कथा सत्त अब कहौं सुहाई। जेहि विधि सरग लोक तेहि आई।।
चूक होय तौ लेहु सँभारी। सुद्ध-असुद्ध सो लिखहुँ विचारी।।

बरनौ कथा[9] अनूप अब, प्रेम भरी औ साँच।
मोख मुकुति गति पावहिं, जो रे सुनावै बाँच[10]।।१७।।

पाठान्तर- १- सुनै, २-६८-अकट तरुनि, ३-होय, ४-विछुरे, ५-अधिकावें, ६-पावें, ७-पावे, ८-सँध, ९-कहा, १०-पाँच

दो

यूसुफ-जन्म खण्ड

किना नगर जो नूह बसावा। तहाँ नबी याकूब सोहावा।।
जग महँ महासिद्ध अवतारा। पूजै ताहि सकल संसारा।।
लूत नबी की सुता सुहाई। सो बियाहि इसहाक के आई।।
भए इसहाक के दुइ सुत संगा। एक उदर दुइ रवि ससि रंगा।।
एक ईस याकूब सो दूजा। जप तप विद्या कोउ न पूजा।।
महासिद्ध ता कहँ विधि कीन्हा। इसराइल[1] नाम तिन्ह दीन्हा[2]।।
उपजे साम देस दोउ भाई। रहे किना याकूब सोहाई।।
भेजे ताहि अलख संदेसा। लावै निगम पंथ सब देसा।।
नीच ऊँच कहि मारग लावै। औ गुरु मुख सब भेद बतावै।।

करै[3] तपस्या रैन दिन, जप-तप व्रत औ नेम।
जिबराइल आवहि तहाँ, आन बढ़ावै प्रेम।।१।।

सात इसतरी[4] सुखद सोहाई। बारह पुत्र दई अधिकाई।।
रुबिया औ राहेल सुहाये। दोउ दुहिता सुत लूत के जाये।।
दौहित विधिनै नारि कुलीना। पाँच सहेली सुघर नवीना।।
दुइ-दुइ पुत्र दुहूँ के भये। आठ पुत्र दासो सन कहे।।
बहुत गरंथ माँह अस हेरी। दोइ नागर तेहिके दुइ चेरी।।
धरम दीन्ह राहेल स्वरूपा। महासती औ ज्ञान अनूपा।।
तेहिके कोख लीन्ह अवतारा। यूसुफ इब्न अमीन दुइ बारा।।
प्रथम दुहिता दुनियाँ नाऊँ। पुनि यूसुफ अमीन[5] तेहि ठाऊँ।।
यूसुफ नबी जनम जब लीन्हा। परगट जोत जगत महँ कीन्हा।।

दुइ अंसा यूसुफ नबी, पायो रूप अपार।
एक अंस विधि रूप महँ, दीन्ह सबै संसार।।२।।

विधि[6] सरूप जब उतपति कीन्हा। दुइ अंसा यूसुफ कहँ दीन्हा।।
एक अंस महँ सब जग पावा। धनि वह रूप जो दइय बनावा।।
यूसुफ नबी लीन्ह अवतारा। घर बाहर होइगा उँजियारा।।
जो उपमा कवि दीन्ह बखानी। रूपवन्त जस यूसुफ सानी।।

पाठान्तर–१- इसराईल, २- कीन्ह, ३- करे, ४- इस्तरी, ५- मानै, ६-बुध,

तेहि सरूप कर कहौं बखाना। जेहि विधिनै किये रूप निधाना[1]।।
जब तिन जन्म सो यूसुफ लीन्हा। अलख सबहि सुख जिन्ह सो दीन्हा।।
सत्रु अनेक भयो जरि छारा। औ इमलाक यहूदी मारा।।
बड़े वंस सब बली सोहाये। एक तें एक सरिस अधिकाये।।
सैन धनी[2] गहि गदा पँवारहिं। बन महँ सौंह सिंह कहँ मारहिं।।

दस दिग्गज दस बन्धु वै, दल गंजन बलवान।
सेवा करैं सु तात कै, जगत काज सज्ञान।।३।।

दस भाई सब[3] तरुन जुझारा। दुइ भाई लखि बालक मारा[4]।।
इब्न अमीन जब लीन्ह अवतारा। माता मुई छाँड़ि दुइ बारा।।
निस दिन रखै नबी निज पासा। छिन बिछुड़ै मन[5] होय उदासा।।
बहु विद्या औ ग्यान सोहावा। पितै पुत्र का सभै पढ़ावा।।
और पुत्र जो एक छिन आवैं। वेद पढ़ाय सो काज पठावैं[6]।।
यूसुफ कहँ दिन-रात पढ़ावै। छिन नैनन नहिं ओट करावै।।
जब राहेल[7] प्रान तजि दीन्हा। तब यूसुफ कहँ फूफिहिं लीन्हा।।
प्रान ते अधिक रखै दिन-राती। निस दिन रहैं लगाये छाती।।
औ याकूब चहै मनमाहीं। फूफिहिं एक छिन छाड़हिं नाहीं।।

बहुत समय यूसुफ लिये, जाय भूलि तप जोग।
तेहि कारन विधि कोप कै, दीन्हा पुत्र वियोग।।४।।

भगिनी बन्धु रहै अस रीती। दोउ बाउर सम यूसुफ प्रीती।।
बसन एक इसहाक सोहावा। बाँधहि फाँट सो लीन्ह कढ़ावा।।
एक दिन सोवत माह छिपाये। यूसुफ फाँट जो फेंट बँधाये।।
ऊपर और दुकूल पिन्हावा। औ याकूब के पास बिठावा।।
लाय सो फूफिहिं[8] फेंट कै चोरी। लीन्ह बन्धु ते बरबस छोरी।।
फूफिहिं[9] तेहि बहु सुख ते पाला। नैन ओट छिन होय बेहाला।।
एक दिन यूसुफ बैठ्यो पाटा। रूप तेज मनु बरै लिलाटा।।
काहू केर मुकुरनी लीन्हा। तब अभिमान हिये महँ कीन्हा।।
जो मोहिका बेचै लै जाई। को लै सकै दरब कहँ पाई।।
उदय अस्त लहि दरब बटोरा[10]। मोरे मोल जोग सब थोरा।।

पाठान्तर- १०- जेहि कर रूप सो कीन्ह बखाना, २- धेनी, ३- जो, ४- बारा, ५-जब, ६-बढ़ावै, ७- राईल, ८- भूलि, ९- भूलहिं, १०- पटोरा,

यूसुफ कहँ निस दिन पिता, राखै प्रान समान।
प्रान[1] ते अधिक सपूत सुत, सुन्दर सुघर सुजान।।५।।

नीक न लाग दइअ कहँ बाता। काहुक गरब न रखै विधाता।।
एक दिन यूसुफ रिस अधिकारा। कोपित भयो दास कहँ मारा।।
औ लातहिं मारा तिन दासा। भयो हिये वह दास निरासा।।
औ याकूब मियाँ के मारे। बोध न कीन्ह सो दास पुकारे।।
करता कोप हिये महँ आने। दास होय तब यूसुफ जाने।।
आयो एक सो रंक[2] भिखारी। आन बार याकूब पुकारी।।
कहा नबी तुम आसन करहू। पावहुँ भोग छुधा कहँ हरहू।।
कहि यह बात सो गयो भुलाई। यूसुफ प्यार मतै विसराई।।
ताके भूख रहे सुध नाहीं। दीन्ह सराप तपा हिय माहीं।।

बरस चारि महँ फूफिहिं,[3] जब कीन्हा सरग पयान।
तब पावा याकूब तेहि, हिया अधिक हुलसान।।६।।

वह मनभावन रूप सोहावा। ओ जेहि दीन्ह रूप जग पावा।।
आन स्वरूप हेत जब लाये। वह मनभावन ताहि सुहाये।।
औ याकूब सिद्ध अवतारा। निस दिन यूसुफ रूप निहारा।।
अलख सहाय क्रोध तब कीन्हा। यूसुफ विरह सोग तेहि दीन्हा।।
आँखी ओट पिता नहिं करई। छुधा तृषा मुख देखत हरई[4]।।
निस दिन रखै प्रान सम पासा। और पुत्र मन रहै उदासा।।
आवहिं पुत्र करहिं सब सेवा। काहुके ओट न देखै देवा।।
चालिस सहस मेष चुनि लीन्हा। तिन-तिन[5] सहस सब्हन कहँ दीन्हा।।
सात सहस यूसुफ कहँ दीन्हा। सो दूने सब महँ चुनि लीन्हा।।

सब्हन हिये लखि क्रोध भा, देखि पिता कर प्यार।
लघु बालक कहँ दून तिन, दीन्ह अंस अधिकार।।७।।

निसि याकूब सपन इक देखा। जागत दुखित सो भयउ सरेखा।।
मनु दस बिग यूसुफ कहँ घेरा। कोउ सहाय नाहिं वह केरा।।
तेहि महँ इक बिग भयउ सहाई। सभय बिगन्ह सो लीन्ह बचाई।।
अब नौ बिग तेहि मारन चाहा। यूसुफ हिये भयउ दुखदाहा।।
फटी भूमि सो तहाँ समाना। रहेउ तीन बिग तहाँ छिपाना।।

पाठान्तर–१- आन, २- सुरेश, ३-भूलहिं, ४- रहई, ५-तिर-तिर ।

जब याकूब सपन लखि जागा। भयउ सोच मन महँ वैरागा।।
नैन ओट नहिं ताकहँ करई। छिन बिछुरै नहिं धीरज धरई।।
जब सोवै निज पास सोवावै। हाथ उसीसन रखि कल पावै।।
पढ़ि-पढ़ि मंत्र पुत्र कहँ झारै। वह दयालु सभ औगुन टारै।।
कर दाया दयालु तुहि, राखु सरम औ लाज।
विनय करत कर जोरिकै, तुहि से नबी महराज[1]।।८।।

प्रथम मता आपुस महँ कीन्हा। यूसुफ कहँ चाहिय दुख दीन्हा।।
सुत अमलाक जो भेज सँदेसा। दीना ब्याह का चाह नरेसा।।
सो याकूब नबी नहिं माना। सुत अमलाक सो सुनत रिसाना।।
आवै इहाँ साजि दल भारी। जूझ करन कै होइ तयारी।।
कहेन पिता ते होइ इक रंगा। यूसुफ कहँ भेजै हम संगा।।
सुत अमलाक जो चढ़ि कै आवा। कीन्ह साज याकूब सोहावा।।
पुत्रन्ह कहा जूझ कहँ जाही। यूसुफ कहँ हम संग कराही।।
तब याकूब कहा कत होई। वह बालक कुछ जान न सोई।।
कहा कि संग रहै वह बीरा। करहिं जूझ हम तेहिके तीरा।।
तब याकूब चला लै, यूसुफ कहँ धरि काँध।
लरहु बीर बैरी सबहँ, है यूसुफ तुम राँध[2]।।९।।

नबी के आँगन इक द्रुम सुहाया[3]। कलपवृक्ष सम ताकर छाया[4]।।
जब याकूब नबी सुत पावै। सुन्दर लता वृक्ष उपजावै।।
ज्यों-ज्यों पुत्र होइ वहि वारा। त्यौं-त्यौं बढ़ै वृक्ष कै डारा।।
बालक तरुन होय सुख पावै। काटि डार वह छड़ी बनावै।।
यहि विधि तेहि विकसे[5] दस साखा। दसो पुत्र पायो वैसाखा।।
यूसुफ जनम लीन्ह जग माहीं[6]। निकसी लता द्रुम के नाहीं।।
कह्यो बात[7] तिन पुत्र सोहाये। सबहिं बंधु कहँ छड़ी सोहाये।।
कस न दइउ मोहिं आसा दीन्हा। तब अरदास नबी[8] विधि[9] कीन्हा।।
आये जिबराइल कै आसा। हरियर रतन साख कैलासा।।
सो आसा यूसुफ नबी, पावा अभय हुलास।
लखि भाइन्ह कहँ क्रोध भा, जरै हिये आभासा।।१०।।

पाठान्तर– १,२*- दोहा सं० ८ तथा ९ एवं उसकी चौपाइयाँ नूर अली की प्रति में नहीं है। ३- सुहावा, ४- छावा, ५- निकसे, ६०- लोना द्रुम महँ निकसे नाहीं, ७-तात, ८- दई, ९- तें।

तीन भ्रातृ षड्यंत्र खण्ड

हत्यो जो बन्धु यहूदा नाऊँ। गये बन्धु सब तेहिके ठाऊँ।।
हम सब पितैं करहिं बड़ काजू। दिन-दिन बढ़े सो ओकर राजू।।
दिन भर रहैं सघन बन माहीं। भूख प्यास कुछ जानहिं नाहीं।।
यह बालक कुछ करे न काजू। इन्हें दीन्ह दून कर साजू।।
कछु दिन महँ सौंपे घर-बारा। हमहिं रहहिं सेवक तिन्ह हारा।।
बालक कुटिल पितैं बौरावा। तेहिते करन्ह सो बेग उपावा।।
अबहिं विरिक्ष न मूल सँभारे। डारहिं उत्पत ताहि उखारे।।
जब वह मूल करै विस्तारा। कैसेउँ कटै न कोटि कुठारा[1]।।
देख अनुज कहँ कोपित ताता। बोला मरद यहूदा बाता।।

वह बालक वै विरिध मैं, वै सौं पिता वह भाय।
दोऊ कै दुख हिये महँ, दोऊ जगत नसाय।।१।।

यूसुफ रैन सपन एक देखा। बहुर पिता तैं कहा सरेखा।।
जानहु गरह एकादस आए। रवि ससि मिल मोहिं सीस नवाये।।
सुन याकूब सु कीन्ह हुलासा। राज-पाट सुख भोग विलासा।।
जग महँ होहु महीधर राजा। सुद्ध-बुद्ध नित आगर साजा।।
पै यह सपन सुनै नहिं भाई। नाहिन होहिं सत्रु दुखदाई।।
मुखते[2] बात निसारे कोई। अनत भेद वह परगट होई।।
का होनहार अनुज सों कहा। करहु विचार सपन कस अहा।।
बंधुन कहा खोंट यह बारा। पितैं ताह मुहँ लाय बिगारा।।
रवि ससि मात पिता निरमाई। नखत ग्यारह हम सब भाई।।

कीन्ह मता दस बंधु मिलि, डारहिं ता कहँ मार।
नाहि तो हम सब दास सम, वह ठाकुर घरबार।।२।।

पिता आदि हम सब सिर नावहिं। सपन झूँठ कहि नेह बढ़ावहिं।।
भयो[3] निरिप इमलाक हठीला। देव कहावे सुघर नवीला।।
पिता सदा सो तासें लड़हीं। औ कबहूँ सरबर न करहीं।।
ताहि यहूदैं छिन महँ मारा। धर कोपहिं महँ सिला पवारा।।
जो अस वज्र न टारे टरई। ताहि मारि निहचिन्त सो करई।।

पाठान्तर–१०- कैसेउँ कहै न चूक कुल्हारा, २-तिन, ३-हत्यो,

ताहि सो पुत्र कर आदर नाहीं। यूसुफ हित राखैं हिय माहीं।।
बसीकरन जो पितहिं पढ़ावा[1]। सोइ पिता पर मंत्र चलावा।।
जो यह झूठ कहत है बाता। जानहिं साँच सो ताकहँ ताता।।
हम को[2] दिन जो बात सुनावे। उनहीं कू परतीत न आवे।।
तेहि यूसुफ कहँ मारिये, जहाँ न पावै नीर।
रक्त पिये मिट जाय रिस, जो कुछ क्रोध शरीर।।३।।
करिकै मत आपस महँ सारा। पिता पास आए भिनसारा।।
जो राउर हम आज्ञा पावहिं। लै यूसुफ कहँ बनै सिधावहिं।।
जेहि बन महँ नित मेष चरावैं। यूसुफ देखि हिये सुख पावैं।।
बालक देख सो मन हुलसाहीं। वे खेलहिं हम मेष चराहीं।।
कहा जाउ तुम भेड़ चरावै। यूसुफ का कहुँ बिक लै जावै।।
मोर हिये उपजै यह संसा। जिन लै जाहु संग यह मंसा।।
तब सब्ह मिलि यूसुफ पहँ आए। खेल कूद कै बात सुनाये।।
यूसुफ जाय पिता तिन कहा। हम हिय बहुत लालसा अहा।।
सब भाइन्ह संग बनहिं सिधावैं। दिन भर खेल कूद घर आवैं।।
औ यूसुफ याकूब सन, बालक सम हठ कीन्ह।
दसो बंधु दस ओर नित, उत अँदोर कहि लीन्ह।।४।।
हम यक-यक अस बल बरबंडा। हैं गयंद बली भुज दंडा।।
भागैं सिंह हाँक जब[3] मारैं। दसो बन्धु दस दिग्गज टारैं।।
मैमंत गयंद न आनहिं लेखैं। काँपहि गैंडा सिंह विसेखैं।।
का हम सौंह जो करै सुआना। वृथा सोच तुम हिये समाना।।
यूसुफ तात सो बहु हठ कीन्हा। होय व्याकुल तन आज्ञा दीन्हा।।
अपने हाथ सों केस बनाए। और पितै बागा पहिराए।।
बार-बार लै हिये लगावा। माया ते चख जल भरि आवा।।
चले तात यूसुफ के संगा। जस दीपक संग फिरै पतंगा।।
करै विदा तेहि हिये लगावै। बिछुड़े प्रान महादुख पावै।।
केहि बन महँ लै जाहि तोहि, मन न धरै अब धीर।
कोमल गात गुलाब सम, सहै सो घाम सरीर।।५।।
लागहि क्षुधा जो बन के माहीं। तिरखा ते तुम अधर सुखाहीं।।

पाठान्तर– १-पठावा, २*- कोटिन, ३-एक

तुम बालक वह बन अँधियारा। वृक जम्बुक है भूत बैतारा।।
पवन तेज ते तन कुम्हिलाई। धूप देख काया मुरझाई।।
लागहिं प्यास जो बारमबारा। होय धाम देखि बिकरारा।।
खड़े-खड़े मुह दूभर भारी। होय कंठ सो प्रान दुखारी।।
आयहु वेग न लावहु बारा। होइहि तात सो दुखित तुम्हारा।।
चारि याम होय जुग चारी। साँझ परै सुठ होब दुखारी।।
कहा पुत्र उपदेस हमारे। गाढ़ परै जिन दिहेउ बिसारे।।
मन संसय कछु होय जो ताता। सँवरहु एक निरंजन दाता।।

कहा पिता राहेल[1] ते, सौपहुँ तुम्हें परान।
दिन आछत लै आयहु, कियहु न साँझ निदान।।६।।

जो विधि लिखा आन सो पूजा। करि न सकै कोऊ अब दूजा।।
महासिद्ध अस[2] भये अधीरा। भूला अलख दयाल गंभीरा।।
नीर छीर दुओ भाजन भरा। सभउँ कहँ दीन्हो चित हरा।।
जब वह प्यास लगै तब दीन्हों। ओ आरति बहु भाँति सो कीन्हों।।
बाहर नगर विरिछ एक अहा। द्रुम विछोह नाम तेहि कहा।।
परदेसी जो कहूँ सिधारे। कुटुंब हितू तेहि लग पग धारे।।
रोय-रोय समधै तेहि लोगू। चख जल सीचहिं विरिछ वियोगू।।
तहँ याकूब जो रोदन कीन्हा। लै[3] यूसुफ उठि[4] मारग लीन्हा।।
बहुत बेर लै ठाढ़े रहै। तरवर विरह बात जस कहै।।

आगम विरह विछोह को, दीन्ह विरिछ जनाय।
रोम-रोम दुख व्याप्यो, लाग हिये पछताय।।७।।

डारहिं डार औ पातहिं पाता। सुना वृक्ष तिन विरह के बाता।।
सुनि याकूब सो व्याकुल भये। रोवत मंदिल माहिं चलि गये[5]।।
काहू अनुज सीस पर लीन्हा। काहू आपु कहँ वाहन कीन्हा।।
कोउ चूमै कोउ हिये लगावै। कोउ चूमै कोउ काँध चढ़ावै।।
काहूँ पीठ पर ताहि चढ़ावा। जस तुरंग लै चहुँ दिसि धावा।।
कोउ कहै सिरताज हमारा। कोउ कहै हम प्रान अधारा।।
जब लहि पिता दृष्टि भरि हेरी[6]। आरति[7] कीन्ह झूँठ बहुतेरी[8]।।[9]

पाठान्तर-१- रुबैल, २- अब, ३- ओ, ४-जल, ५*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है।
६- हेरे, ७- आरल, ८-बहुतेरे, ९*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में ऊपर प्रथम चौ० के नीचे दी गयी है।

जब लै गये दिष्टि के ओटा। सिर से डारि दीन्ह जस मोटा।।
कोउ मारै कोउ बाँधै हाथा। कोउ साँसै[1] बहु कोप के साथा[2]।।
तुम बालक अस निडर भये, रचि-रचि वचन अनेक।
हमते पिता विमुख रहे, यह तुम कीन्ह न नेक।।८।।

रचि-रचि बचन पितैं बौरावा। तुम बालक अस विख विखरावा।।
बहि-बहि[3] मरहिं करहिं सब काजू। घर[4] बैठे तुम[5] विलसहु राजू।।
अब सु कहौ का करौं उपाई। टूक-टूक कै देयँ बहाई[6]।।
जब मारहिं चहु दिसि निरदाई। रोवै एक-एक पहँ जाई।।
मारहिं[7] लात परहिं तेहि दूरी। धावहिं लै निकारि कै छूरी।।
लै पँवारि उन काटि बहावा। नांगे पाँव नबी दौड़ावा।।
कँवल चरन महँ परै फफोला। प्यास ते जीभ भई जस ओला।।
यूसुफ नबी बन्धु के आगे। साँसत देख सो रोवन लागे।।
बंधु तुम्हार अहौं[8] लघु भ्राता। तुम्ह सो तात सम सौपेहुँ ताता।।
मोहि मारे तुम दोख है, पिता मरहि तेहि रोय।
तेहिते अब दाया करहु, धरहु क्षमा रिसि खोय।।९।।

चहुँ दिसि तिन भाइन्ह तेहि मारा। भयो पियास तें बहु विकरारा।।
यूसुफ तबहिं पाय के आसा। गयो भाग रोहेल के पासा।।
मोहिं पितैं सौंपि तुम्ह दीन्हा। कौने दोख क्रोध तुम कीन्हा।।
मारि लात उठि दूर पँवारा। कहा बोलावहु एकदस तारा।।
चंद सुरज जिन तोहि सिर नाए। तेहि सँवरहु जो होहिं सहाए।।
तब सभऊँ ते माँगा पानी। रोय दिखावा जीभ सुखानी।।
भाजन दीन्ह भूमि महँ डारी। क्रोधवंत होय मुख महँ मारी।।
गात गुलाब सछत करि डारा। बहा रकत भा मुख रतनारा[9]।।
छुरा काढ़ि सिर काटन लागा। तब यूसुफ लागे[10] तहँ[11] भागा।।
होय तरास लाग्यो कहै, जिन काटहु तुम सीस।
देहुँ डारि मोहिं कूप महँ, करै जो कछु जगदीस।।१०।।

लातै मारि जो दीन्ह पवारी। गयो प्रान[12] कहँ ठाढ़ पुकारी।।
तुम्ह पानी कर अहो पियासा। हम प्यासे तोहि रकत[13] कै आसा।।

पाठान्तर- १-साँसा, २*- भै भै, ३-औ, ४-चुप, ५*- टूक टूक करि दै हियँ भाई। ६-मरतहिं, ७-अहँ, ८*- क्रोधवंत होइ मुख महँ मारा, ९-लादे, १०-पहँ, ११-पान, १२-खून

वे निरदई न दाया करहीं। जीना सबै सपन करि देहीं ।।
छुरा[1] देखि जब यूसुफ काँपा। धायउ दीन हिये महँ चाँपा[2]।।
यूसुफ होइ के बहुत निरासा। धावै सब भायन के पासा[3]।।
कहे बन्धु मोहि पानी देहू। मरौं पियास से धरम सो लेहू।।
चाहा देहि यहूदा पानी। ढरकावा सभयूँ रिस मानी।।
सबहि बन्धु बोलहिं बिखबानी। चन्द्र सूरज ते माँगहु पानी।।
गरह एकादस लेहु बोलाई। जो तोहिं पानी देहि पिलाई।।
नौ भाई कोपित भये, कहै बन्धु सन बात।
बैरी छोट न जानिये, छोटै दिन औ रात[4]।।११।।

सभऊँ इक टीले पर ल्यावा। चाहेसि गीव पर छुरी चलावा।।
एक सिंह बहु रिस में ताता। गरजा सौंह कहा यह बाता।।
तुम बिन मतैं करहु यह काजा। दोउ जग कै आवत नहिं लाजा।।
तुम याकूब नबी के बारा। नाउँ तुम्हार सो जाइ निसारा।।
पिता मरै हत्या तुम काँधे। वहि जग परहु नरक महँ बाँधे।।
सहज न जानहु बन्धु सँघारा। होइहौं पाप ते सभ जरि छारा।।
जो भाई मारै जग माहीं। तेहि सम और पातकी नाहीं।।
भला जानि कीन्हेउँ उपदेसा। सभ संघिन कर कहौं संदेसा।।
जहँ लह सिंह मिरिग बनमाहीं। हौ सभकर पति संसय नाहीं।।
सभ सिंहन तें बैर बेसाहौं। जो तुम छुरी यूसुफ पर बाहौं।।
सुनि सभऊँ त्रासित भयउ, लीन्ह छुरी कहँ टार।
जस इसमाइल बचावा, वह दाता करतार[5]।।१२।।

कोउ कहै यहि डारहु मारी। पियहिं रकत रिस मिटै हमारी।।
कोउ कहै विष घोरि पिलावहिं। कोउ कहै बन छाड़ि सिधावहिं।।
कहा यहूदा बन्धु के मारे। होय विनास नरकहिं[6] कुल सारे।।
पुनि मत कीन्ह सो होइ इकठाई। डारहिं कूप माहँ बरियाई।।
बन महँ[7] कूप अहै अँधियारा। चला जाय जो परै पतारा।।
कुरता काढ़ि रकत महँ भरहीं। पिता पास चलि रोदन करहीं।।
कहहिं कि बिक यूसुफ कहँ खावा। कहा तुम्हार सो आगेहि आवा।।

पाठान्तर–१-* गुफलालून जाद के पासा। कहै बंधु मै अहौ पियासा।।, २,३*- ये दोनों चौपाइयाँ नूर अली की प्रति में नहीं है।, ४*- न छोटे दिन रात, ५*- यह दोहा तथा चौपाइयाँ नूरअली की प्रति में नहीं है, ६- नरसहिं, ७-माँ

यह कुरता लोहू कर भरा। हेरा बहुत सो पावा परा।।
दिन दस पिता करहिं दुख सोचू[1]। पुनि मिट जाय पुत्र कर सोजू।।
बनजारा कोउ आइहिं, लेइह ताहि निसार।
लेइ जाइहि[2] परदेस कहँ, मिटै अँदेस हमार।।१३।।
यही मता आपुस महँ कीन्हा। कुरता काढ़ि अंग तै[3] लीन्हा।।
यूसुफ नबी जो रोदन करहीं। निरदाई कुछ दया न करहीं।।
मोहि कहँ नगन करहु जिन भाई। बसन समेत मोहिं देहु बहाई।।
मृतक देह बसन सब कोई। मोहि नगन मारे का होई।।
रस्सी तासु गले महँ पिरोई[3]। बहु बिनती नहिं माना कोई।।
आधे कूप जो पहुँचा बारा। सभयू काट गुनी वहि डारा।।
भाई सत्रु कूप महँ डारी। चलै सुचित होय काज बिगारी।।
दीन्ह काटि जब गुन निरदाई। तब जिबरैल सँभारेहु आई।।
लै सो कूप महँ ताहि उतारा। भये जिबरैल पिता अनुसारा।।[4]
कहा कि जिन चिंता करहु, धरहु हिये संतोष।
सिद्ध कीन्ह करतार तोहि, करिय सबहि विधि पोष।।१४।।

पाठान्तर– १-सोचू, २- तिन, ३- पिरई, ४-अनुसारा।

चार जिबरैल प्रबोध खण्ड

किये प्रबोध भोग फल धरै। बसन पिन्हाय सोच सब हरै।।
यूसुफ नबी पिता कहँ देखै। रुदन कीन्ह औ पिता विसेखै।।
करुना कीन्ह पिता हिय लाये। तब जिबरैल सो उठ्यो छोहाये।।
जो निस दिन तुम्ह जोयहु गाता। सो सब कीन्ह रकत रंग राता।।
अधर पीत जामुन सम किये। गात रक्त नील सो भये[1]।।
नंगे[2] चरन धरनि[3] दौरावा। रस्सी बाँध कूप लटकावा।।
करिकै नगन कूप महँ डारा। सगरे दिन प्यासन महँ मारा[4]।।
जेहि भाई पहँ रोवै जाई। मारि लात वह दूर पराई।।
आधे कूप जो पहुँच्यो जाई। दीन्हा काट गुनी निरदाई।।

जस दुख दीन्ह सो बन्धु मोहिं, बैरिहु नाहीं देय।
गात सछत करि डारा[5], प्यास प्रान हरि लेय।।१।।

सुनि जिबरैल न कियो सँभारा। लागे बहै नैन जलधारा।।
मैं न होहुँ याकूब सोहावा। हौं जिबरैल सरग तैं आवा।।
बाँध्यो हिये सत्त औ धीरा[6]। एक दिन दैव लगावहिं तीरा।।
दुख बैराग बीत सब जाई। औ याकूब ते देइ मिलाई।।
करइ बंधु तोरिय सेवकाई। होहु नबी जग राज कराई।।
सब दुख हरै करै तोहि राजा। बंधु दास होय करिहैं काजा।।
जो करतार करहिं निज दाया। का सो करै वैरिय निरमाया।।
कोटि सत्रु जो कीन्ह उपाइय। इब्राहिम कहँ लीन्ह बचाइय।।
बैरी सबहि किये संहारा। भयहु तात फुलवारि[7] अँगारा।।

दिये बहुत दुख संत कहँ, करै बहुरि उद्धार।
जैसे कंचन कीजियै, खरा अगिन महँ डार।।२।।

करिकै नगन अगिन महँ नावा[8]। इब्राहिम कहँ कुरता आवा।।
सो कुरता ना याकूब सुहावा। चित्र समान सो बसन बनावा।।
जंत्र समान भुजा महँ बाँधा। भूत बयारि न आवै राँधा।।
जब जिबरैल नगन तेहि देखा। भये दुखित लखि नगन सरेखा।।

पाठान्तर–१-६८ गात लोग बदभेल सो भये, २-नाँगे, ३- धरमि, ४*- यह चौपाई इस प्रति में नहीं है, ५*- गये डारि, ६*- बाँधहु सत्त हिएँ औ धीरा, ७-फुलवरी, ८-तावा।

तब कुरता बाजू तन खोला। पहिरायौ सो बसन अमोला।।
चौकी एक अनूप लै आया। तेहि पर यूसुफ कहँ बैठाया।।
जो अमरित ना सुना न देखा। सो यूसुफ कहँ दीन्ह सरेखा।।
करहु[1] भोग सँवरहु करतारा। हरै दुख सो वेग तुम्हारा।।
सबु दुख हरै औ करैं निबेरा। पार घाट लावै तेहि बेरा[2]।।

महासिद्ध तुम होहु कै, महाराज जग माँह।
मात-पिता हत बंधु कुल, करहु तो सब पर छाँह।।३।।

पाठान्तर– १-कहहु, २*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है, इसके स्थान पर दूसरी चौपाई दी गई है जो इस प्रति में 'याकूब पुत्र वियोग खण्ड' की प्रथम चौपाई है।

पाँच याकूब पुत्र-वियोग खण्ड

कै[1] परबोध सो सरग सिधारा। यूसुफ तिन सो कह्यो कै बारा।।
अजया[2] मार रकत रँग धारै। कुरता लै सो चलै हत्यारै।।
विरह विछोह सो नगर निसारा। तहाँ ठाढ़ याकूब दुखारा।।
औ यूसुफ कै भगिनी दीना। पिता संग वहि हती मलीना।।
भइय साँझ नहिं यूसुफ आये। केहि कारन तेहि विलंब लगाये।।
बार-बार वहि बाट निहारी। औ यूसुफ कहँ पिता पुकारी।।
यही समय आये हत्यारे। रोदन करत झूठ वै सारे।।
सुनि रोदन यह भा विकसारा। हिरदै मनहु बान अस[3] मारा।।
दुनिया कहै कुसल है नाहीं। बिरन मोर नाहीं उन्ह माहीं।।

बिन बीरन यह नगर सब, भयो सूँन अँधियार।
पिता मुए घर ऊजरा, काह कीन्ह करतार।।१।।

लखि दुनिया सो छार चढ़ाई। कहाँ छाँड़ि आयो मोर भाई।।
रोय-रोय दुनियाँ गोहरावा। आवहु यहाँ पिता दुख पावा।।
रोवै लाग देखि कै ताहाँ। सब्ह आयो मोर बीरन काहाँ।।
रोवत गये पिता के पासा। बहु विलाप वह किय परगासा।।
कहा कहै कछु कहा न जाई। हम सब गये सो छाँड़ि चराई।।
पसुन पास वह खेलत अहा। तहाँ सो आन भेड़हिं वह गहा।।
ढूँढ़त फिरै सभै वन झारा। तबलहि बिक तेहि कीन्ह अहारा।।
रकत भरा कुरता वह पावा। देख हिये करुना होइ आवा।।
तेहिते पिता करो संतोखू। हम काहू कर आहि न दोखू।।

बात तुम्हारे जीभ कै, कैसे विरथा जाय।
विधि कर लिखा को मेटै, यूसुफ कहँ बिक खाय।।२।।

सुनि याकूब सो मुरछित भयऊ। मानहु प्रान काल लै गयऊ।।
जिबराइल धर्‌यो मुख हाथा। भरे[3] साँस लखि धूमिल माथा।।
खाय पछाड़ यहूदा रोवा। वृथा प्रान पिता कर खोवा।।
का अस करम बन्धु तुम कीन्हा। पिता सिद्ध कै हत्या लीन्हा।।

पाठान्तर—१-करि, २-अवया, ३-हरै।

रोय-रोय दुनिया[1] सिर फोरा। भयो कठिन दुख रोय अँदोरा।।
दिन भर बाट विलोकत हारे। गये बार तजि[2] बार सिधारे।।
व्याकुल पिता पुत्र कै काजा। सिर पर पड़े अचानक गाजा।।
दिन भर रहै विलोकत बाटा। साँझ भये तेहि आयो घाटा।।
भये साँझ यह दुख कै कारी। को मेटै यह निस अँधियारी।।
बीरन मोर कहाँ पहँ गयऊ। जेहि बिन घर अँधेर सब भयऊ।।

वह बीरन जेहि बिन भयो, घर बाहर अँधियार।
दहुँ आये तजि सघन[3] बन, कै दहुँ कूप महँ डार।।३।।

अस अज्ञान न कुरता फारा[4]। लहू लाय ते आये सारा।।
ज्ञानी लोग जो कुरता देखैं। करहिं विचार सो झूँठ विसेखैं।।
जो बिक खात रहत कत सारा। टूक-टूक होय जात नियारा।।
निस भर रहै विकल बेसँभारा। आयो प्रान होत भिनसारा।।
जब जागै तब यूसुफ कहा। कहैं लोग कत यूसुफ रहा[5]।।
तब रोवहिं अस छाँड़ डफारा। सरग दूत रोवहिं एक बारा।।
औ[6] जिबरैल भूमि पै आये। तब[7] याकूब नबी समझाये।।
अब संतोष किये बनि आवै। रोदन किहे कोउ न पावै।।
तुम्ह अवतार सिद्ध कर लीन्हा। सहौं दुख जो साँईं दीन्हा।।

पुत्र गये संतोष करि, प्रान देहु जिन रोय।
रोदन करहु सदा हिय, पुत्र जो कियो विछोह।।४।।

तब याकूब सुचित सँभारा। रोवै लाग सँवर करतारा।।
कहा कि कहो पुत्र का भयऊ। प्रान न गयो प्रान कत गयऊ।।
तुम्ह कछु मरम दुखी कर जाना। करहु बोध कत[8] सत्त[9] बखाना।
जियत अहै कि मिरतक भयऊ। जेहि बिन घर अँधियार होय गयऊ।।
कहा कि मैं कछु भेद न जाना। बिन आज्ञा का करहुँ बखाना।।
मरन जियन जानै यमराजू। कै जानै जिन जग उपराजू।।
तब याकूब कहा सिर नाई। पूँछहु तुम यमराज ते जाई।।
कहो जाय याकूब सँदेसा। जहाँ होय यमराज नरेसा।।
बोला जम यूसुफ कर प्राना। मोरे पास न दूतन आना।।

पाठान्तर– १-दुनियन, २- खिज, ३- सुथन, ४-मारा, ५-कहा, ६-तब, ७-तो, ८-कर, ९-सिस्ट

तब जिबरैल सुनावा, दै[1] संदेस अपार।
जेहि सौंपा तुम्ह पुत्र कहँ, तेहि सौ माँगहु बार।।५।।

सुनि याकूब डरै मन माहीं। अलख त्रास ते सुटि बिलखाहीं।।
डरै हिये सिर भुइँ दै मारा। मोहिं ते चूक भई करतारा।।
मैं बाउर बड़ अवगुन कीन्हा। चहौं दुख जो उत दुख दीन्हा।।
कहा कि अब कीजै संतोषा। सुमिरहु[2] ताहि करहिं जो मोषा।।
तब याकूब सो कुटी बनावा। बाहर नगर तहाँ चलि आवा।।
घर औ बार छाँड़ि सब लोगू। निस दिन करै कुटी महिं जोगू।।
काहू दरस न[3] देय सोहावा। औ कोऊ तहँ जाय न पावा।।
रोदन भवन नाम तेहि राखा। यूसुफ नाम करै नित भाखा।।
जो सोए तो यूसुफ कहै। जो जागै यूसुफ मुख छहै।।
यूसुफ कहै भूख जब लागै। यूसुफ कहै प्यास तन भागै।।

नींद भूख औ प्यास महँ, यूसुफ नाम अधार।
सँवर-सँवर मुख पुत्र का, रोदन करै अपार।।६।।

नींद भूख तज साधहिं जोगू। करहिं तपस्या विरह वियोगू।।
नित कुरता वह नैन लगावै। औ यूसुफ कहि-कहि गोहरावै।।
रोवत नयन भये दोउ अंधा। फाट न हिया सँवर चित बंधा।।
गये नयन दोउ पुत्र वियोगू। जोगउ ते साधा तब जोगू।।
यह विध देख पिता कर हाला। भये पुत्र सब हिए बेहाला।।
रोदन जब याकूब करेई। सरग दूत कर जाप हरेई।।
जब याकूब रोय जिय खोवहिं। जाप भुलाय दूत सब रोवहिं।।
कहाँ प्रान तोहि भाइन्ह डारे। कहाँ छाँड़ि आये हत्यारे।।
केहि दिसि जाउँ कहाँ तेहि हेरौं। कौन बाट नाम कहि टेरौं।।

निस-दिन हिये लगाय, मैं तोहि सोवत पास।
सब निस जाग भयावन, रहौं विचारत साँस।।७।।

मुख तुम्हार अब देखत नाहीं। पापी[4] प्रान रखै घट माहीं।।
एक घड़ी जो दरस न पाऊँ। रोवत फिरौं चहूँ दिस धाऊँ।।
जबलहि नाव लिये ना कोई। तबलहि जीवन दूभर होई।।
अब तोर कौन सुनाइय नाऊँ। तोहि बिन सून भयो सब ठाऊँ।।

पाठान्तर—१-वै, २-समरहु, ३-ना, ४- ताते।

भयो भवन तोहि बिन अँधियारा। काटेव खाय सबहिं घर बारा।।
केहि बन महँ तुम्ह का परहेले। तुम्ह बालक कत फिरहु अकेले।।
मोरे साथ रहे मन माहीं। सुख तुम्हार कुछ देख्यौ नाहीं।।
केहि दिसि[1] करौं सो खोज तुम्हारी। कवन देस होय जाउँ भिखारी।।
अब केहि विधि दिन बीतहिं मोरा। केहि विधि रैन बिहाइहि भोरा।।

यूसुफ नाम रैन-दिन, लेत रहै याकूब।
दिन भर पलक न लावे, पुत्र बिछोह अनूप।।८।।

केहि सो साँझ लै हिये लगाउब। भोर होत केहि लाल जगाउब।।
केहिके सुनब मधुर रस बाता। केहिकर हिये लगाउब गाता।।
केहिके देखब चाल सोहाई। जेहिका देखि हंस मुरझाई।।
केहिते भेंट करब दिन राती। केहिका देखि सिराइह छाती।।
जब याकूब सो होहिं अधीरा। आवहिं जिबराइल तिन्ह तीरा।।
कहहिं कि तुम रोउब जिय खोवहिं। काँपे सरग दूत सब रोवहिं।।
तुम अवतार कि सिद्ध सरीरा। ऐसे दुख जनि होहु अधीरा।।
तब याकूब सो छाँड़ि उफारा। कहा कि काह करूँ करतारा।।
अस सुपुत्र काहे कँह दीन्हा। मन हरिया फिर कस हर लीन्हा।।

दया कीन्ह अनेक विधि, दीन्ह पुत्र अस मोहिं।
देखि रूप गुन बिसुध भयो, तब मोहिं दीन्ह बिछोहिं।।९।।

तब काहें का अस चित आवा[2]। जो अब हाथ रहा पछतावा।।
अलख छाँड़ चित आनहिं[3] सो लावै[4]। ताकर फल मानुष अस पावै[5]।।
दीन दयाल करै जो[6] दाया। दिये अनूप बिखै कर माया[7]।।
दीन[8] दयाल कहँ दइय बिसारे। देखे निस-दिन नष्ट बिचारे।।
फुलवारी बहु फूल बनाये। एक ते एक सुरंग बसाये[9]।।
जो मन पुहुप एक तिन लावै। जाय सूख कुछ हाथ न आवै।।
चित्र अनेक जो रच्यो चितेरे। मोहित होय रूप रंग हेरे।।
आवे चित्र काज कछु नाहीं। चित्रकार सँवरहु मनमाहीं।।
काहे न चित्र चितेरे लावहु। चित्र विचित्र रूप निरमावहु।।

जो कुछ रहे न हाथ महँ, तेहि चित दीजिए काउ।
जो न मरे नहिं बीछुड़े, तेहिते प्रीति लगाउ।।१०।।

पाठान्तर– १-बन, २- लावा, ३- उन, ४- लावे, ५-पावे, ६-अस, ७०- दिये अनूप सुखी करि साथा , ८-तेहि, ९-बनाये।

यक अजया याकूब पहँ आई। मानुख बोल सो रोइ सुनाई।।
सहसन जंगम बन महँ अहिये। हमहिं दोख केहि कारन कहिये।।
कत कुरता यूसुफ कर सारा। रँगा रुधिर महँ अजया मारा।।
पुत्र तुम्हार हमहिं दुख दीन्हा। रकत हमार सो दूखित कीन्हा।।
कुरता सोइ रकत कर भरा। तुम अपने नैनन पर धरा।।
राउर नैन जोति हरि गई। यह हत्या महँ सिर पर भई।।
जनम-जनम यह औगुन दोखा। केहि विधि करै दई हम मोखा।।
तब याकूब बाँध तेहि कीन्हा। तुम कहँ दोख दई नहिं दीन्हा।।
दोख ताहि जेइ तुम कहँ मारा। यूसुफ बसन रकत रंगदारा।।
तुमहिं दोख कुछ नाहिंन, वै दोखी हत्यार।
जोइ यूसुफ कहँ मोते, कीन्ह विछोह निसार।।११।।[1]

भोर होत फिर बन कहँ गये। अनुज सँघार सुचित मन भये।।
यूसुफ भयातीत[1] मन भयऊ। चोरिय एक यहूदा गयऊ।।
जाय कूप महँ ताहि पुकारा। कह्यो बीर का हाल तुम्हारा।।
यूसुफ नबी कहा विकरारी। कहा यहूदा रोय पुकारी।।
का पूँछो अब हाल हमारा। परे अकेल कूप अँधियारा।।
बिच्छू साँप भरे तिन माहीं। दिन एक जियन भरोसा नाहीं।।
जब लग सुदिन न दीपक बारा। जाय न देइ पिता तिन बारा।।
का अवगुन अस कीन्ह तुम्हारा। जो अस कूप अंध महँ डारा।।
कूप अंध दुख भयो सँघाता। का पूछौ दुखिया कर बाता।।
परे अँधेरे कूप महँ, कोउ न संघी भाय।
बिच्छू साँप भरे तहाँ, केहि विधि कुसल कराय।।११।।

मात-पिता केहि सुख ते पाला। भाई अंध कूप महँ डाला।।
कह्यो पिता ते जाय संदेसा। पुत्र तुम्हार गयो परदेसा।।
मरत नाम जिन कह्यो सुनाई। मरैं पिता निज प्रान नसाई।।
कियो पिता की बहु विधि सेवा। तेहिते[2] पार लगे तुम खेवा।।
छुधा तृषा जब लागे भाई। भूख हमार न दिह्यो भुलाई।।
जब दुख पड़े विपत अवगाहा। सँवरहु बंधु ओ किह्यो विचारा[4]।।

पाठान्तर–१-भया भीत, २-जेहि ते, ३-> एसन दीन तन नगन हमारा। सँवरहु बधुओ कि हयो विचारा।।, ४-> भोर दुख दाहा।

सेवा किहेउ पिता कै भाई। जेहिते हम दुख जाय भुलाई।।
जब मिरतक कोइ देख्यौ भाई। सँवरेहु मूरत मोर सुहाई।।
सुन यूसुफ उपदेस यहु, रोय यहूदा भाय।
कहा कि सँवरहु अलख कहँ, जो दुख माँह सहाय।।१२।।

सभयू बहुरि पकरि बिक लावा। करिमुख बिकते रकत लगावा।।
लैके ठाढ़ पिता पहँ कीन्हा। यूसुफ खाय यही बिक लीन्हा।।
आयो आज फेरि वह ठाऊँ। लायो ताहि पकरि कै पाऊँ।।
तब याकूब सु छाँड़ि डफारा। कहै लाग का तोर बिगारा।।
यूसुफ मुख लखि दया न आई। केहि विधि लीन्ह सो तेहि कहँ खाई।।
कैसे मन पतिआयौ तोरा। लीन्ह सु खाय परान तुम्ह मोरा।।
औ याकूब सीस भुइँ लावा। अय दयाल सुखदायक रावा।।
आज्ञा होय कहे बिक बाता। यूसुफ रकत अहै मुख राता।।
पूँछि लेहुँ सभ अरिन्ह अपारा। तिन्ह यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा।।
भय आज्ञा जगदीस कै, बोला बिक धरि सीस।
कह्यो अरथ यूसुफ कर, लेहु हमार असीस।।१३।।

यूसुफ कहँ खायौं केहि ठाऊँ। देहु बताय तहाँ चलि जाऊँ।।
यूसुफ केस तहाँ एक पाऊँ। लेऊँ सुदान बैन महँ लाऊँ।।
लाखन अजा मेख हमारे। का तोहि मिला प्रान के मारे।।
वह मुख देख दया नहिं लागे। उठे न घात मया के आगे।।
कहै लाग सुन बिक नरनाँहा। दोस न लाग कछु हम माँहा।।
जहँ लै सिद्ध औ साधु सरीरा। तेहि मानुष दुखित हम पीरा।।
तुम आज्ञाँ तिन संघ न देखै। वहै पुत्र परान विसेखै।।
यूसुफ रूप देख सर नावहिं। तेहि कैसे हम खाय उड़ावहिं।।
हमते घात भये कछु नाहीं। देहु असीस घरहु अब जाहीं।।
सावक मोर बिछुड़ गयो, ढूढ़त फिरौं बेहाल।
पुत्र तुम्हार पकरि कै, लाय कीन्ह मुख लाल।।१४।।

तब याकूब तेहि सँवरन लागे। बिकते पूँछन लाग सुभागे।।
तुम यूसुफ कर खोज बतावहु। कहौं सत्त संदेह मिटावहु।।

लाल हमार कहाँ लै डारा। जियत अहै कि मारि सँघारा।।
सावक तोर दई तोहि दिये। यूसुफ सुधि कह्यो जस लिये।।
तब बोला बिक भुइँ धरि माथा। का हमसे पूछहु नरनाथा[1]।।
पिसुन सरूप धरे मुख रहहीं। हम काहो कर दोख न करहीं।।
दोस होय अवगुन के आए[2]। पाप परावा परे सुनाए।।
आन उपाय कहै जो कोई। पातक तासु ताहि सिर होई।।
औ हम का जाने फिर भेदा। जानै सोइ रच्यो जिन छेदा[3]।।

तुम्ह सुअंस करतार के, आवहिं दूत तोहि पास।
का पूँछहु हमसे विथा, पूछौं दइय जो आस।।१५।।

बिक टीले चढ़ि जाय पुकारा। किन्ह यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा।।
यूसुफ बंधु सो हत्या लावा। कहहिं कि बिक यूसुफ कहँ खावा।।
है याकूब नबी रिस माहाँ। रोदन करै मरै नरनाहाँ।।
जो वह सराप देइ करतारा। सब बिक मरहिं होहिं जरि छारा।।
मैं करिया देइ भयौं अँदोखा। अब ढूँढहु तुम आपन मोखा।।
सुनि सारे बिक आरन केरे[4]। आन बार याकूब सु घेरे।।
कहा कि तुम नाहिंय कछु दोखा। करै अलख तुम सब कर मोखा।।
कुटिय के आस-पास चहुँ ओरा। मरहिं कूक औ करहिं अँदोरा।।
सुनि अँदोर याकूब दुखारा। आयो निकसि बिरह कै मारा।।

चहुँ दिस बिक रोवत चले, देखि नबी कर रोज।
कहै चलहु अब कीजिये, यूसुफ नबी कर खोज।।१६।।

यक अजया याकूब पहँ आई। मानुख बोल सो रोइ सुनाई[5]।।
सहसन[6] जंगम बन महँ अहिये[7]। हमहिं[8] दोख केहि कारन कहिये[9]।
पुत्र तुम्हार हमहिं[10] दुख दीन्हा। रकत हमार सो[11] दोखित कीन्हा।।
कुरता सोइ रकत कर भरा[12]। तुम अपने नैनन[13] पर धरा।।
राउर नैन जोति हरि गई। यह[14] हत्या हम्ह सिर पर भई।।
जनम-जनम यह[15] औगुन दोखा। केहि विधि करै दई[16] हम मोखा।।
तब याकूब बोध तेहि कीन्हा। तुम[17] कहँ दोख दई[18] नहिं दीन्हा।।

पाठान्तर–१-नरनाहा, २- लाये, ३- भेदा। ४-करे, ५*- बिक अजया याकूब पहिं आई। रोवै लाग सीस भुइँ लाई।।, ६- सहस, ७-अहे, ८-हमें, ९-कहे, १०-हमें, ११-सु, १२०- सो कुरता लोहू कर भरा, १३-नैयनन्ह, १४-यहि, १५-मैं, १६-दैव, १७-तुम्ह, १८-दइय

दोख ताहि जेइ तुम कहँ मारा[1]। यूसुफ बसन रकत रंग धारा।।
कत कुरता यूसुफ कर सारा। रँगा रुधिर महँ अजया मारा[2]।।
तुमहिं दोख कुछ नाहिंन, वै दोखी हत्यार।
जेइ यूसुफ कहँ मोते, कीन्ह विछोह निसार।।१७।।

सुनि यूसुफ कर रूप बखाना। सिद्ध एक मन माहिं लुभाना।।
ऐ दयालु अब दाया करेहू। यूसुफ कर दरसन मोहिं देहू।।
जब लह दरस न देहु दयाला। तब लह मोहिं न आवै काला।।
कहा कि जो तुम दरसन चाहौ। रहै कूप महँ निज मन डाहौ।।
हुतेउ कूप महँ सिद्ध सरेखा। यूसुफ रूप कूप महँ देखा।।
कहा कि धनि करुना सुखदाई। मम इच्छा तुम सिद्ध कराई।।
अब मोहिं और लालसा नाहीं। देहुँ मिरुत यहि कूप के माहीं।।
देहँ छाँड़ि वह सिद्ध सिधारा। तेहि दूतन्ह गात-पत्र करिडारा।।
धनि करता कै केल अपारा। मानुख ग्यान सुनत तेहि हारा।।
यूसुफ देखि सो सिद्ध कहँ, भा रोदन अधिकार।
मिरतक देखि हिये महँ, भयउ अधीन निसार[3]।।१८।।

पाठान्तर– १°- दोष ताँह जो तुमका मारा, २°- अजया मार रकत सौं भारा, ३*- यह दोहा तथा चौपाइयाँ नूर अली की प्रति में नहीं है।

छः यूसुफ-बनजारा खण्ड

एक गरन्थ माहँ अस कहा। मालिक जो नायक भा महा।।
सदा मिस्र कहँ जाइ सो नायक। उतरै वह बन महँ सुखदायक।।
एक बार तेहि सपन देखावा। यहिय कूप बन तोहि सुख पावा।।
यही कूप बन तें धन पावहु। जग नायक सब देस कहावहु।।
मालिक सपन देखि कै जागा। हिये सो धन चक-चौहर लागा।।
सदा आइ तहँ बासा करई। कहै कि अब विधि चिन्ता हरई।।
सदा आइ वह बन महँ रहई। हिये सपन कै आसा गहई।।
औ मन महँ निसचय वै कीन्हा। पावै सपन माहिं जस दीन्हा।।
तेहि कारन वह बन महँ आवै। रहै तहाँ औ आसन नावै।।

जो आसा तोहि दीन्हा, वह दाता करतार।
सो परगट अब कीन्हा, यूसुफ नबी निसार[1]।।१।।

सात दिवस दुख भयो अपारा। उतरा[2] तेहि बन माँ बनजारा।।
मालिक नाम महा अस नायक। जात मिसिर कहँ वहि सुखदायक।।
आगे वे[3] सपना महँ देखा। होय लाभ यह बन उन देखा।।
सदा आप नायक यह आसा[4]। करै सो वही बनै महँ बासा।।
तेहि[5] महँ आये एक बनजारा। जल हित डोल कूप महँ डारा।।
यूसुफ नबी डोल गहि लीन्हा। रोवत ताहि हाँक पुनि दीन्हा।।
डारि डोल भागा डर खावा। औ नायक तें जाइ जनावा।।
जंतु एक है कूप के माहीं। डोल अडोल है डोलत नाहीं।।
तब नायक वहँ आप[6] सिधावा[7]। तेहिके सँघ मानुस बहु आवा।।
अंध कूप तें ताह निसारा। होयगा बन सगरो उँजियारा।।

पानी खोज जो कूप महँ, डारा डोल निसार।
तहँ यूसुफ कहँ पावा, धन नायक को पार[8]।।२।।

नायक देख परान अस पावा। होय मोहित लै चला सोहावा।।
लै यूसुफ कहँ चल्यो[9] चलाई। तब लहि पहुँचे वे[10] दस भाई।।
भाय[11] आन सब कीन्ह पुकारा। कहाँ जाव[12] लै दास हमारा।।

पाठान्तर-१*- यह दोहा तथा चौपाइयाँ नूरअली की प्रति में नहीं है। २-उतरे, ३-वै, ४-बासा, ५-तोहि, ६-आपसि, ७-धावा, ८-व्योपार, ९-चल्यौ, १०-वै, ११-धाय, १२-जाँव

दिन पाँचक ते भाग परावा। खोजत फिरौं कहूँ नहिं पावा।।
यूसुफ चहा कहै निज बाता। नायक तें बरनैं दुख भ्राता।।
तब सभयूँ इबरी महँ कहा। बोल न[1] बचन जो जीवन चहा।।
यूसुफ नबी मौन तब साधा। लाग्यो कहै बंधु दुख बाधा।।
भागे सदा दास बिन मारे। करे न काज भये हम कारे।।
भोग न करै रहै नित रूसा। कबलहिं रखें सो घाल मँजूसा।।

दास हमार वो चोर है, सुन नायक निज बात।
मोल देहु लै जाहु तुम, मिटै कोप दिन रात।।३।।

मनमहँ कहै लाख लहि देहू। यह बालक कहँ पुत्र करेहू[2]।।
मालिक कहा कहौ सो देहीं। यह सुदास दोखी कहँ लेहीं।।
वह यूसुफ कर मोल न जाना। थोर दाम माँगा अज्ञाना।।
तीन दोख यह महँ बड़ भारे। भागे चोर रोय बढ़[3] कारे।।
कहा लेउँ मैं दोषी दासा। जाय सो जाय रहे तो पासा।।
मोर[4] पास रोकर[5] है थोरा। विसह्यों मोल हस्ति औ घोरा।।
बसन अतर औ पाट पटंबर। मृग-कस्तूरी केसर अम्बर।।
कहा कि रोकर होय सो देऊ। यह सुदास दोषी कहँ लेऊ।।
तीन दरम रोकर हम पासा। सो तुम्ह[6] लेहु देहु यह दासा।।

अस केरे[7] हम दास तें, भय नायक दिन रात।
जो तुम्ह[8] देउ सो लेब हम, अवर न अब कहु बात।।४।।

कहा कि जो कछु देहु सो लेहीं। का दोषित कर मोल करेहीं।।
तुरतेहि दीन्ह न लायसि बारा। तब यूसुफ पुनि कीन्ह जोहारा।।
मालिक कहा दाम भर लेहू। लै मोहिं कहँ कागद लिखि देहू।।
तब सभयूँ कागद लिख दीन्हा। मालिक मोल यूसुफ कह लीन्हा।।
हम सब मोल दाम पर पावा। दास चोर कहँ बेंचि उड़ावा[9]।।
लै कागद यूसुफ कहँ चला। कहा कि करम हत्यों मोर भला।।
लागे कहै कि भागे दासा। रखियो बँद महँ निस-दिन प्यासा।।
जो वह भागि जाय कहुँ नायक। हमें न दोख दियो दुख[10] दायक।।
तेहिते डारि देहु पग बेरी। ऊँट चढ़ाय फिरहुँ चहुँ फेरी।।

पाठान्तर– १- ब, २-करेऊँ, ३-बद, ४- मेरे, ५-रोकट, ६-तुम, ७-कोरे, ८-तुम, ९-अड़ावा, १०-सुख,

गिव[1] साँकर पग बेरी, हाथ हथकड़ी नाय।
टाट झूल पहिराय के, फिरहु सो ऊँट चढ़ाय।।५।।

कँवल चरन महँ बेरी नवावा। कुसुम्ह बाहँ हतकरी पिन्हावा।।
टाट झूल यूसुफ कहँ दीन्हा। वसन अनूप काढ़ तिन्ह लीन्हा।।
जब वह बेंचि[2] चले निरदाई। यूसुफ रोय उठा अकुलाई।।
आज्ञा देहु जाउँ उन[3] पासा। आवै कुमुद[4] सो अस सो आसा।।
नायक कहा मया तोंहि आई। वे जस सत्रु अहैं निरदाई।।
कहा कि करत कोटि अनरीती। मोरे हित[5] ये जाय न प्रीती।।
पहने टाट झोल अस भारी। बेरी पकरि चला बनवारी ।।
यूसुफ बिदा होय तहँ कीन्हा। एक-एक कहँ अंकम[6] दीन्हा।।
वह रोवै वे हँसैं निरदाये। टाट झूल लखि मन रहसाए।।
भूँख प्यास दुख मृत्यु महँ, भूलि न जायहु मोह।
सँवरेहु सदा हिये मोहिं, हम दुख विरह विछोह।।६।।

अनुज दास कहँ सँवरेहु भाई। तुमहि सपथ जनि दिहेहु भुलाई।।
अब हम जाहिं कहाँ किन देसा। कत रे मिलन कत जियन अँदेसा।।
दास चोर बँधुआन बनावा। दहुँ आगे का चहिय दिखावा।।
अब हम कहाँ, कहाँ तुम्ह भाई। जनम संघ देइ विधि बिलगाई।।
तात चरन सिर लायहु भाई। मोरे ओर तें कहेउ सुनाई।।
पिता न दिहेउ प्रान तुम्ह रोई। देहु[7] असीस भेंट जेहि होई।।
मोर मिरुतु जिन्ह ताह सुनायहु। फेरि[8]-फेरि सिर चरनन्ह लायहु[9]।।
मरहिं न पिता करेउ अस काजू। नाहित होय दुओ जग लाजू।।
रोइ-रोइ सब बरनि सुनावा। तब नायक तेहि बोलि भेजावा।।
मात पिता जन परिजन, लोक कुटंब परिवार।
यूसुफ चला विदेस कहँ, किनआँ नगर जोहार।।७।।

रोवत चला ऊभि लै साँसा । रहे न पिता मिलन की आसा।।
चलै फेरि देखहिं उन्ह ओरा। मकु भाई पूँछहिं दुख मोरा।।
भाइन्ह कहा विलम्ब जिन लावहु। नायक संघ विदेस सिधावहु।।
यूसुफ नैन मघा झरि[10] आई[11]। नायक संग चला बिलखाई[12]।।

पाठान्तर—१-गयऊ, २-बेंचि, ३-उन्ह, ४-समुद, ५-हितयें, ६-अंकाम, ७-हेहु, ८-फिर-फिर, ९-लै लायहु, १०-झर, ११-लाये, १२०- नायक पास गयो बिलखाये।

यूसुफ हिये सँवर यह बाता। मुकुर देख मुख आपन राता।।
ऐसा[1]रतन सेंत[2] वह[3] पाया। चला बेगि नहिं बार लगावा।।
मनमहँ जस कीन्हे अभिमाना। तस सुमोल आपन हम जाना।।
तेहि अवगुन यह दुरगत भयऊ। दास चोर बँधुवा होय गयऊ।।
चला संग लै नायक, यूसुफ ऊँट चढ़ाय।
फिरि-फिरि करै जुहार वह, किनआँ देस सिर नाय[4]।।८।।
नायक पंथ मिसिर[5] का लीन्हाँ। चहै दास यूसुफ सँग कीन्हा।।
लियै जात सँग वै निरदाई। मात कबर[6] पर पहुँचा जाई।।
यूसुफ नबी नैन भरि हेरा। रोय-रोय माता कहँ टेरा।।
लखि माता की कबर सुहाई। होय बिकरार गिरा मुरझाई।।
पुत्र तुम्हार जात परेदसा। भयउ दास देख्यो नहिं भेसा।।
वे चरनन महँ देखहु बेरी। टाट झूल जो कबहुँ न हेरी।।
लोटै पड़ा कबर पर रोई। खाय पछार जीव कत खोई।।
देखि कबर पर दास अभागा। क्रोधवन्त होइ मारन्ह लागा।।
[7]→ बेचनहार सत कहा, भागि जाय यह दास।
मस्तक मारि सो लै चला, पकरि सो नायक पास।।९।।
जब सो दास यूसुफ कहँ मारा। माता कबर काँपि एक बारा।।
प्रान हमार भयो तुम दासा। मारि तुम्हें करि दास निरासा।।
पदुम बरन जो चरन तुम्हारा। तेहि चरनन महँ बेरी डारा।।
कौन देस तोहिंका[8] लै जाहीं। जहाँ सुमात पिता कोउ नाहीं।।
काँपै कबर औ यूसुफ रोवा। दास पुत्र ते मात बिछोहा।।
आँधी उठी भयौ अँधियारा। सूझि परै नहिं हाथ पसारा।।
घन गरजै बादर चढ़ि आए। दामिनि कौंध चमक दिखराए।।
आवै चमक जो नायक पासा। लखि मालिक मन भयो तरासा।।
मैं तो दोष कीन्ह कछु नाहीं। केहि कारन दामिनि डरपाहीं।।
बार-बार जो आवै जाई। मालिक देखि हिए डर खाई।।
कौन पाप मोहि परगट्यो, कीन्ह दइय अस कोप।
जानि परै अँधकार महँ, सब मिलि होब अलोप।।१०।।

पाठान्तर– १- ऐस, २-संपत, ३-उन्ह, ४*- फिर-फिर करै जुहार वह, किनआँ देस सिर नाय।
५. मिसर, ६-गोर, ७→- यहि अवगुन यह मोल, बिकाने। अबहूँ त्रास हिये नहिं भाने।। ८-कहँ।

तब एक दास आगे चलि आवा। औ मालिक तें भेद जतावा।।
दास जो मोल कीन्ह[1] तुम आजू। भयो कोप विधि तेहिके काजू।।
जैसे तेहि मारा बिन दोखू। तेहि सुदास ते माँगहु मोखू।।
हत्यो कबर पर रोवत दासा। तेहि मारत अँधेर चहुँ बासा।।
तब मालिक यूसुफ पहँ आवा। नाय सीस कर जोरि मनावा।।
करहु क्षमा औ देहु असीसा। जेहिते क्षमा करै जगदीसा।।
तब यूसुफ दोउ हाथ पसारा। मिटिगा गरज कौंध अधियारा।।
कीन्ह बहुत हठ बेचन हारे। तेहि कारन बेरी पग डारे।।
बेरी पाँव ते काटि बहावा। करि असनान बसन पहिरावा।।

मालिक देखि अधीन भा, कीन्ह बहुत अरदास।
जैसे पकरि मँगाय कै, सौंपि दीन्ह सो दास।।११।।

लै आए यूसुफ कै पासा। कहा कि है दोषी यह दासा।।
जो तुम कहौ सो साँसति करहीं। जेहितें सबहि दास तोहिं डरहीं।।
यूसुफ नबी बोल यह चेरा। निज बाहुन तेहि आनन फेरा।।
हत्यो जो रंग स्याम अँधियारा। चाँदी सम होयगा उँजियारा।।
मालिक देखि सो अचरज कीन्हा। वह सुदास यूसुफ कहँ दीन्हा।।
पुत्र समान रखै तेहि लागा। कहै कि भाग मोर अब जागा।।
नित नवीन बागा पहिरावै। अपने संग सो भोग खवावै।।
यूसुफ नबी करै नित रोवा। सँवर-सँवर याकूब बिछोहा।।
मालिक भेद बहुत निरमावै। छुटि सुदास नहिं और बतावै।।

मालिक साज समाज के, चला मिसिर के देस।
कहूँ बिरह दुख ताकर, कीन्ह जो मिसिर परबेस।।१२।।

पाठान्तर–१-लीन्ह।

सात जुलेखा रूप-वर्णन खण्ड

अब बरनौं यह कथा सुनावा। जासु विरह तेहि मिसिर लै आवा।।
मगरिब देस सो नगर बखाना। तहँ तैमूस साह सुलताना।।
सब कुछ ताहि दीन्ह करतारा। राज पाट सब कटक सँवारा।।
संतति और न दीन्ह गोसाईं। सुता एक अछरी कै नाईं।।
सो कन्या हुत बार कुमारी। नाम जुलेखा दई सँवारी।।
भई तरुनि जग बास बसानी। रूप अनूप जगत सब जानी।।
देस-देस के नृप सुलताना। कीन्ह चाह सुलतान न माना।।
दुहिता जोग रूप कहँ पावा। जेहिते होय सँजोग मेरावा।।
कहँ यह जोग जगत महँ कोई। जो यह कन्या कर बर होई।।

सात दीप से चाह उत, लागे आवे जाय।
काहू देय न उतर नृप, तौ लै गरब सुभाय।।१।।

जब तरुनी भै राजकुमारी। काम उतंग अनंग संचारी।।
रूप उमगि भयउ उछाहा। भूखन रचि तन कन्द्रप लाहा।।
निसि-दिन सखिन साथ फुलवारी। करै कुलाहल कूद घमारी।।
काम प्रवेस हिये महँ कीन्हा। प्रेम सुरंग रंग करि दीन्हा।।
देखि सरूप सखिय ललचाहीं। पवन वास तेहि पावत नाहीं।।
धाइ खेलाई सखी सहेली। तेहिके संग करै सुख केली।।
साजि सिंगार औ अभरन जोरा। रूप गुमान न काहुहि जोरा।।
मात-पिता की आन अधारी। विस्मय-सोच न जानै बारी।।
उर उकसाहिं नैन तिरछाहीं। कहि नितम्ब उन्नति अधिकाहीं।।

भइ बाला सो बारी, सदा रूप अधिकाइ।
मातु-पिता वहि तरुनि लखि, लागे हिये लजाइ[1]।।२।।

अब नख-सिख बरनौं तेहिकेरा। बाउर होय जो दरसन हेरा।।
प्रथम कहौं माँग कै रेखा। सूरसती जमुना बिच देखा।।
खरग धार वह माँग सोहाई। सेंदुर तहाँ न रकत लगाई।।
औ तामहँ गूँथे गज मोती। राहु केत महँ नखत के जोती।।
दुआदस[2] घन बादर जस छावा। मध्य कौंध चमकै दिखरावा।।

पाठान्तर–१*- उपर्युक्त दोहा तथा चौपाइयाँ नूरअली की प्रति में नहीं है। २-दुओ।

दामिन अस वह माँग सोहाई। केस घमंड घटा जस छाई।।
जस जमुना के नदी अपारा। माँग बाँध तिन्ह सुघर सँवारा।।
सेत बंध तस माँग सोहाई। बिरही नैन पार[1] जनु पाई।।
जो न होत वह माँग अनूपा। डूबत नैन स्वरूप सरूपा[2]।।
माँग सुहाई सुख बँधी, भाग अधिक तेहि दीन्ह।
राहु केतु दोउ दस तहाँ, मनहु किरन रब कीन्ह।।३।।

केस सीस का करौ बखाना। तक्षक देखि सो ताहि लजाना।।
मुख पर लरहिं जो होइ बेकरारा। तब संदेह करै संसारा।।
कोउ कहै अहै तम राजा। सोहै तहवाँ जोत विराजा।।
कोउ कह अहै दिनेस सोहावा। बरत हेत कालिंदी आवा।।
कोउ कहै कि नागिन कारी। दीन्ह छाँड़ि मन सो उँजियारी।।
कोउ कहै स्याम अलि मोहा। पुहुप पराग आय तेहि सोहा।।
पुहुप चित्र महँ मृग मद बारा। खींची चित्र चितेरन्ह मारा।।
केस सीस मानो निसि कारी। प्रातकाल मुख कै उँजियारी।।
केस रचत तज आस न पासा। को तेंहि जाय सो पावै बासा।।
सिरिस फूल तहँ सोभा देई। औ चोटी लखि मन हरि लेई।।
बेनी गूँथी लरी सी, जग नागिन बन लीन्ह।
मूँगा चौकी पीठ पर, भान छाड़ि तेहि दीन्ह।।४।।

अब लिलाट बरनौ सुखहारी। राका ससि तासों उँजियारी।।
कनक खोर सो टीका दीन्हा। ससि गुरु कमल अंध ग्रह कीन्हा।।
मंगल बूँद सुरंग सोहावा। ससि गुरु भस्म[3] एक ग्रह पावा।।
राहु केत गज दोउ दस कारे। मध्य सोम पूरन उँजियारे।।
तहाँ सो झलक किनारी देखा। जस ससि महँ दामिन परवेसा।।
इत अवरोध उधुंध सुहावा। दुओ दस राहु गुपुत दिखरावा।।
गुर सुर कुज ससि कै यक ठाईं। सोहैं सदा लिलाट सोहाईं।।
गिरिवर गढ़ सोहै तिन्ह सारा। होय विकल तेहिं देखन हारा।।
जोत कहिय मन झूँठिकै जाना। उनकै अंग विकल भै आना।।
चंद लिलाट न सोहै, पूरन जोत अपार।
वह कलंक निकलंक[4] यहि[5], वह षट बुध लहि सार।।५।।

पाठान्तर–१-बार, २-अनूपा, ३-भुम्म, ४-बिकलंक, ५-नहिं।

भौंह धनुक का बरनै कोई। जाय सो ग्यान तहाँ लखि खोई।।
बरनै सर वह धनुख समाना। ताहि देख जग डरपै प्राना।।
भौंह कमान चढ़ै नित रहै। सर संधान सो मारन्ह चहै।।
गाछ गाछनै सुन्दर सोहैं। लखि भृकुटी सो सुर मन मोहैं।।
इन्द्र धनुक तेहि देखि लजाना। खीन बान होइ बेगि बिलाना।।
धनु महँ जीव आप परबेसा। दुओ दिसि[1] केस सोहावन केसा।।
भौंह सरासन भृकुटी बाना। नैन बान इत बना[2] बंधाना[3]।।
देखि ताहि थिर रहै न ग्याना। जाय भूलि सब सुद्धि पराना।।
तिन्ह बेंदी कोटिन छवि देई। धनि मानहुँ जीवन हरिलेई।।

धनु भौहें विधनै रच्यो, भृकुटी सनमुख बान।
देखि सरासन सिर बढ़ै, काँपै जगत परान।।६।।

नैन देखि मन होय बेहाला। जासु कटाछ हिए महँ साला।।
सेत साम औ अरुन सोहावा। बिख अमिरित मधु घोरि दिखावा।।
जाकहँ लखै भये चख राता। मरि-मरि जियै रहै मदमाता।।
अंबुज बरन दिधिग अरुनाई। भानु बरन होय गयो लुभाई।।
अंजन जोर सदा मतवारे। घूमहिं निस दिन प्रेम अखारे।।
द्वौ बोहित दोउ नैन सँवारा। लाज सनेह बोझ दोउ भारा।।
दुअ अँबिरित कै सुभग कटोरी। तामहँ सरब हलाहल घोरी।।
लहन कटाछ न जाय बखाना। जिन देखा तिन निश्चय माना।।
दोउ खंजन सारद रितु माहीं। राका ससि निरभरै लड़ाहीं[4]।।

दोउ[5] सुनैन जग में किए, जाल सितासित साज।
लाय बिछावा मधुर विधु[6], मनमोहन के काज।।७।।

दोउ सरवन दुइ सीप सुहाये। मोती भरा सदा दिखराये।।
करनफूल औ[7] पात सोहाये। बाली तहाँ[8] अधिक छबि आये।।
बरनि न जाय सर्व[9] रस ताके। प्रेम बचन सुनि निसि दिन जाके।।
प्रथम प्रेम कर सरवन बासा। बिन नैनन कर करहिं पियासा।।
बहुरि हिए महँ करि परबेसा[10]। करहिं ताहि बाउर कै बेसा।।
पुनि सरूप सरवन सुखदाई। करन-करन का बरन सोहाई।।

पाठान्तर–१-दस, २-बाँधहिं, ३-बाना, ४-दुओ, ६-विध, ७-और, ८-तेहाँ, ९-सरब, १०-बर,

भावसाम्य– ४- खेलत मनसिज मीन जुग, जनु विधि मंडल डोल– गोस्वामी तुलसीदास,

कान अनूप सो प्रेम नगीना। कानन ते उपज्यो नित हीना।।
कान न करहिं सो कान सोहाए। सुनहिं बचन सो वह मनभाए।।
सरवन अधिक सोहाने, दुओ[1] दस रूप अनूप।
बिन कटाक्ष करतार कहँ, दुओ दस रतन सरूप।।८।।
नासिक रसिक सदा रस गाहक। बास सुबास लिए जेहि लायक[2]।।
नथ बेसर छबि खेल कराए। मोती डोलत हिया डोलाए।।
मानहु हाथ सिकन्दर केरा। रूप भँवर ते लहरन फेरा।।
मोती पड़सि अधर पर आई। चिनगी मनो चकोर चुगाई[3]।।
सभ मुख कै सोभा वह नासिक। सब रस लीन्ह औरहिं सो वासुक।।
जस चपै की कली सोहाई। खड़गधार तेहिमन बिकसाई।।
नासिक रसिक महा सुकुमारा। निरखहिं मनुस अनेक अपारा।।
धनि नासिक की रीति सोहाई। गुन अवगुन सभ दीन बताई।।
सभै बदन कर अहै सिंगार। बाँधै काम खरग कै धारा।।
नासिक सोभा का कहैं, सब मुख सोह बढ़ाय।
तापर ऊँच सुहाए, उत समुद्र अधिकाय।।९।।
अब कपोल बरनौं सुखदाई। गात गुलाब देखि मुरझाई।।
सबहि कपोल सुरंग सुहावा। देखत काम ताहि छबि आवा।।
कँवल कपोल न जाइ बखाना। कहँ ससि पर जग ताहि समाना।।
बेसर देख सो ज्ञान लजाए। कहँ तेहि सम जेहि उपमा लाए।।
तामें दसन अनूप सोहावा। तिल कपोल छबि बरनि न आवा।।
बिसुकरमै लखि सुधर कपोला। दीठ परै तिल दीन्ह अमोला।।
ईंगुर जान कपोलन साना। उत सुरंग तिन्ह भँवर भुलाना।।
सिहर सुहावन बोल अनूपा। जाय रूप लखि जाय सरूपा[4]।।
रचा चतुर बिधि सुधर[5] चितेरा।। परी बूँद खसि केरिन हेरा।।
कँवल कपोल सोहाने, तिन सोहै तिल स्याम।
जस अलिन्द अरबिन्द पर, आन कीन्ह बिसराम।।१०।।
अधर सुधाधर बरनि न जाई। भये अनूठि वे जूठन पाई।।
अँबिरित सम देवतन कर जूठा। वह तो[6] अधर पुहूप अनूठा।।
जानि न परहिं अधर उत खीने। नित भाखै वै मधुर नवीने।।

पाठान्तर–१-दुअ,२-लाहक, ३-चुगई, ४-सुरूपा, ५-सुधर, ६-सो, ७-अधारा।

सुनत बचन वै अधर सोहाए। ऊख पियूख बनूख सुखाए।।
अधर सजीवन मूर सुहावा। सुधा पिडाक बिरंचि बनावा।।
अधर खोलि जब वह मुसकाई। खान सजीवन की खुलि जाई।।
जब मुसकाय सखिन्ह से गोरी। झरहिं फूल औ होहिं अँजोरी।।
अरुन मृदू औ अमिय सुधारा। रहत अधर पियूख अखारा[1]।।
जो वह अधर मधुर मुसकाई। तो मिरतक कहँ देत जियाई।।

अधर सुधाधर मधुर अति[2], कीन्ह सुरंग सुखभाग।
जेहितें बोलें ओ हिये, सदा सजीवन पाग।।११।।

चिबुक सो ताहि का बरनै कोई। सिद्धि सदन महँ कूप सो होई।।
देखत कूप होय बिकरारा। बूड़ै मरै जियै इकबारा।।
प्यारे बदन सिद्ध करतारा। तहाँ कूप महँ चिबुक अपारा।।
चहै दिष्टि मुख देखै लागै। पड़े कूप महँ जाय सो भागै।।
भँवरन पड़ै डीठि वह जाई। एक टक रहे सो थाह न पाई।।
चिबुक गाड़ अति सुडौल सँवारा। मज्जहिं जग मानुस बिसतारा।।
वह सुझलक जेहि उपमा नाहीं[3]। बूड़हि तड़पहिं चित तेहि माहीं।।
परे जबहिं डूबहिं उतराहीं। पार घाट तेहि पावत नाहीं।।
गाड़ अनूप बार विस्तारा। चमकै सुभग सो दई सँवारा।।

चिबुक सुहावन सुन्दर, गाड़ अनूप अपार।
को तिन महँ बूड़हिं तरहिं, कबहुँ[4] न पावै पार।।१२।।

गिवँ अनूप बरने का कोई। देखत पाप जाय तेहि धोई।।
गीव सुहावन सुभग अनूपा। जातरूप डरिजाय[5] सरूपा।।
कुंदन चाक चढ़ाय बनाए। देहि अदेहिन गार सुहाए।।
चमकै अरुन सुहावन गीऊ। कनक खोट लागै[6] लखि जीऊ।।
बिसुकरमैं अति सुन्दर साजा। गीवा देखि हिए महँ लाजा।।
लखि सुगीव थिर रहै न ज्ञाना। साँचे ढार रचा सज्ञाना।।
चंपक[7] कली उर बसै अनूपा। कहँ भूखन जो गिव रस रूपा।।
सभै अंग विधि आप सँवारे। सभ ऊपर वह गीव निवारे।।
कंठ अमोल गोल उत सोहा। मुनि गंधरब रिषि ता लखि मोहा।।

पाठान्तर–१-अधारा, २- उत, ३-पाही, ४-कतहुँ, ५-जाइ, ६-जेहि, ७-चंपक।

गीव उठाने गरब ते, पड़ै कूप अभिमान।
रंभा सिंध औ उरबसी, रमा मनोज लजान।।१३।।
उर चमकै जस उदित जुन्हाई। तिन्ह उरोज दुइ मुरति सुहाई।।
कोमल कछु[1] बन्यो धरिनीसा। बरन लरै फल रंग महीसा।।
नारंगी सो उरज कठोरा। और कछू तेहि जाय न जोरा[2]।।
उर कुंदन पानी जस डारा। दुइ मूरति महँ आप उतारा।।
दोउ लाल कै मूरति साजा। देखि सो लाल रंग वह लाजा।।
कुंदन बागन क्यारि बनाई। दुइ अँबिरित फल तहाँ सुहाई।।
कँवल कोबिदहि उरज सोहाई। चख अलिन्द रस लीन्ह लुभाई।।
मुरत मनोज देखि कै हारा। निज अँवधाय सो रख्यो नगारा।।
घुँघची सम तेहि रंग सुहावा। तहाँ स्यामता अति छवि पावा।।
तहाँ हार औ मोहन माला। होय परान हाल बेहाला।।
कुच कठोर देखत हरै, सुर नारी एक बार।
काम-कला पूरन तहाँ, कीन्ह आप बैपार।।१४।।
छतिय अनूप दुइ लहै सँवारा। पान फूल कै रहै अधारा।।
रोमावलि रेखा तहँ[3] सोहै। नैनन्ह देखि ताहि मन मोहै।।
अँबिरित कुंड सो नाम सुहाई। रहै नागिनी मुख लपटाई।।
देखि गरुड़ वह चकिरित भई। नागिन ठहकि तहाँ रहि गई।।
अँबिरित कुंड नाभि मुख पूरा। रहि पाछे मुख फेरि न मोरा।।
छतिय निहारि सखिन्ह ललचाहीं। सुर नर मुनि कोउ देखा नाहीं।।
जो देखे वह छतिय सोहावा। पूरन काम सो आन सतावा।।
ता पर पीठि अनूप सँवारा। होय मलीन दीठि कै मारा।।
कोमल विमल पेट निरमाया। रोमावलि बेनी कै छाया।।
रोमावलि बेनी बिरह, सोहै छत्र अनूप।
गात सोहावन अति[4] विमल, छाया अतुल सरूप।।१५।।
का बरनै भुज सोभा कोई। रचा चित्र महँ चित्रित सोई।।
भुज ते कर अँगुरिन लहि सारा। चढ़ा उतार सुचित्रित धारा।।
पुहुप छत्र वह दंड सोहावा। काम चितेरै चाक फिरावा।।
भुज भूखन कर भूखन सोहै। अँगुरिन मुंदरि लखि मन मोहै।।

पाठान्तर–१-कुच, २- कुछ उपमा तेहि जाय न जोरा, ३-तिन्हँ, ४- उत,

दोउ कर सोहै ललित कलाई। भले देख अच्छ पाय अछाई।।
वह सावक चंदन कै साखा। लपटे रहैं करैं अभिलाषा।।
कर भुज ते अति[1] सुन्दर साजा। रोम-रोम छबि सिस्ट बिराजा।।
भुज भूखन नौ रतन सोहावा। कर पहुँची न जुरत छबि पावा।।
चित्त हरा लखि पावन रूपा। धनि पावन कर रूप अनूपा।।
इंदु बुद्ध अरु मेंहदी, रतनक जनु तेहि बान।
तेहि ईंगुर छबि देखि कै, रहै मोहि मन मान।।१६।।

पीठहिं तेहिकर गोल बेयारी। तापर परी जो चोटी कारी।।
मूँगे की चौकी छबि देई। तिन बैठे नागिन छबि लेई[2]।।
पीठ के तन को सकै निहारी। डँसै डीठ महँ नागिन कारी।।
वह सो पीठि जेहि तजै न डीठी। देखा करै सदा वह पीठी।।
देखत रहै पीठ चख हारी। पाछ परे रह डीठि न पारी।।
सुन्दर पीठ कनक रँगधारा। बिसुकरमैं जस साँचै ढारा।।
पीठि देखि मन चक्रित होई। कुसल छेम लखै का कोई।।
दुअ दस पीठि अपूरब देखा। सोहै बुद्ध कनक कइ रेखा।।
सो रेखा लखि ज्ञान हेराई। कदलि रेख के पटतर लाई।।
पीठि दीठि देखत सदा, होय हिए बिकरार।
नागिन बेनी तिन्ह बसी, डँसी पीठि एक बार।।१७।।

निसंक लंक बरनि नहिं जाई। डीठि भार कत सकै उठाई।।
रहैं सखी[3] अचरज कै माहीं। कोउ कह आह कोऊ कह नाहीं।।
बार चाह कटि कोमल बेनी। देखि न सकै सो डीठि बिहूनी।।
नागिन[4] संग जहाँ पग धारा। लचि-लचि जाय बार कै भारा।।
चलत नारि मन संग करेई। दुमची लचि धनु हिया डरेई।।
कनक तार अस लंक सोहाई। कोप दीठि सो रहै डराई।।
धन चरित्र वह सुघर सँवारा। सहैं नारि सम तिनकै भारा।।
सभ तन देखै नैन सुहाए। अंग संग लखि तेहि डर खाए।।
कटी भाग छबि देइ अपारा। मोहहिं सुर मुनि तेहिं झंकारा।।
निरगुण सरगुण पाव जस, तस कटि परै न देखि।
अवर अंग देखै नयन, भागहिं लंक बिसेखि।।१८।।

पाठान्तर–१-उत, २-देई, ३-मखी, ४-नारिन

जंघ तंत का करौं बखाना। कँवल अमोल सुभग सुर ताना।।
भारी जंघ तंत सोहावा। पिंडुरी तहाँ[1] अधिक सुख पावा।।
भूँगा की यह जंघ सुहाई। तस पिंडुरी अस चाक चढ़ाई[2]।।
का बरनै ताकै सुकुमारी। सभ तन सौंह तासु अधिकारी।।
औ पिंडुरी सोहै उत गोरी। नैनन भार होय अति[3] थोरी।।
पिंडुरी जंघ लखि रहै न ज्ञाना। लखि तंत जंघ तजहिं सब प्राना।।
जैसे तंत तस जंघ सोहाए। तस पिंडुरी अस चाक फिराए।।
चाक चढ़ाय सँवार्‌यो ताही। होय अधीर नैन लखि जाही।।
तिन्ह पायल पैजनी सुहाई। घुँघुरू बिछिया बुद्धि हेराई।।

जंघ सोहावन देखि कै, सत्त धरम भजि जाहि।
पिंडुरी निरखत पाप दुख, हरै पला छिन माहि।।१६।।

नख अमोल कछु बरनि न जहहीं। कँवल बरन लखि संपुट गहहीं।।
जस अरविन्द सुरंग सुहावा। तस वह चरन अनूप बनावा।।
देखि कमल होय रंग बिहीना। वह सुचरन सुख रँग रस लीना।।
चरन बरन तेहि जाहिं सोहाए। देखत पाप सोभाग हेराए।।
औ अँगुरिय तेहि सुन्दर आनी। मेहँदी ईगुर ही के पानी।।
यक नूपुर बिछिया उत सोहै। कोकिल सुनत सबद वह मोहै।।
रूपौ चरन सब सोभा साथा। देखत चित्त रहे तेहि हाथा।।
उत कोमल एँड़ीय सोहाई। देखि महाउर हिए लजाई।।
जब तरुनी भइ राजकुमारी। काम अनंग अंग संचारी।।

उत एँड़ी सुकुमार तेहि, अँबिरित लाल लगाय।
धरत पाँव वह बालके, बासुकि देखि लजाय।।२०।।

सखिन्ह सो[4] चाहें पाँव पखारा। चक्रित ज्ञान रंग लखि सारा।।
रूप अधिक तैं हिए उछाहा। भूखन रचि तिन गँधरब लाहा।।
निस दिन सखिन्ह संग फुलवारी। करै कुलाहल कोट घमारी।।
मदन प्रवेस हिए महँ कीन्हा। प्रेम[5] सुरंग अंग महँ दीन्हा।।
देख सरूप सखिन्ह ललचाहीं। पवन बास तिन्ह पावत नाहीं।।
धाइ खिलाई सखिय सहेली। तेहिके संग करहि सुख केली।।
साज सिंगार औ अभरन जोरा। रूप गुमानन काहु न जोरा।।

पाठान्तर–१-जहाँ, २-सुहाई, ३-मति, ४- जो, ५-पेम,

मात[1]-पिता के प्रान अधारी। सभय[2] सोच नहिं जानै नारी।।
और रोग तेहितै मुरझाहीं। गात तंत उन्नत अधिकाहीं।।
भय बालापन बारी, सदा रूप अधिकाय।
मात-पिता वहि तरुनि लखि, लागै हियै लजाय।।२१।।

अंग अनूप विरंचि सँवारा। कल्प बिरिछ कै सुन्दर डारा।।
धरै चरन जब भुइ महँ गोरी। तीन भुवन महँ होइ अँजोरी।।
चाल मराल देखि कै भागा। हस्ती खेह मिले तेहि लाजा।।
कोयल कोकि जरहिं सुनि बोला। खंजन मृग सो नयन अमोला।।
कँवल गुलाब रेख लखि लाजै। घूँघट देखि सुरी ही भाजै।।
कोक कीर लखि उर औ नासा। चिबुक कूप जस सेव सुबासा।।
देखि सुबन्द विधुन्तत भयऊ। नवै गरह गरहित होइ गयऊ।।
चौदह रतन देखि सभ हारा। अमृत झूँठ न जाइ बिचारा।।
सोन जुही लखि तन सुकुमारा। अधर बिम्ब लखि अमृत हारा।।
चारि फूल फल चारि पन, चारि मिरिग खग चार।
चारि सुभग जो कहहिं लखि, दीरघ चारि विचार[3]।।२२।।

पाठान्तर–१–मता, २–समय, ३*– दोहा संख्या २२ तथा उसकी चौपाईयाँ नूर अली की प्रति में नहीं है।

जुलेखा स्वप्न-खण्ड

एक रात जो आइ[1] सोहावन। प्रेम स्वरूप बिरह उपजावन।।
प्रेम भरी रजनी उँजियारी। सखिन साथ सोवै सो नारी।।
आधि रात लहि जाग कुमारी। प्रेम कै बात सुनत सुखकारी।।
आई नींद सुमुखि[2] अलसानी। सोइ गई सब सखी सयानी।।
सोवा पहरु औ कोतवारा। सोवा सो उत घंट बजावन[3] हारा।।
सोवैं सुखी दुखी नर नारी। सोवैं खग मृग कीट[4] करारी।।
सब सोवा कोउ जागत नाहीं। जागत एक प्रेम जगमाहीं।।
सोवै लागि[5] तेहि समय जुलेखा। यूसुफ कहँ सपने महँ देखा।।
मीठी नींद सबै लग सोवा। प्रेम बीज हिय जामहँ गोवा।।

भान सरूप तहँ आय गय, देखि रहै टक लाय।
लीन्ह प्रान तिन्ह काढ़ि कै, रूप अनूप दिखाय।।१।।

देखत नारि विमोहित भई। निरख रूप बाउर होइ गई।।
नैन बान ते बेधा हीया। बात न आइ[6] मौन भइ तीया।।
छिन एक ठाढ़ रहा रँगराता। पुन मुसकाय कीन्ह अस बाता।।
हम तुम्हका चाहा चित लाई। तुम्ह हियते जिन देहु भुलाई।।
कहि यह बात चहा उर लावा। जागि परी कछु दिष्टि न आवा।।
जागत कै चकचोंहट लागा। जस पंछी करते उड़ भागा।।
हिरदै लागि प्रेम की गाँसी। भयो सुज्ञान हानि तन नासी।।
सोवत सुख जागत दुख पावा। रोम-रोम तन विरह अकुलावा।।
मूरत एक सुदिष्ट दिखाई। हिये माहि जस गई समाई।।

प्रेम फंद अरुझाने, गई ग्यान मति भूल।
सँवर रूप अकुलाय मन, उठै हिये महँ सूल।।२।।

उठि बैठी मुख सँवरत सोई। नई लगन कहि सकै न कोई।।
जब सँवरै मुख तब बिलखाई। पै[7] सुलाज तें रोय न जाई।।
बिरह बान बेधा एक बारा। रोम-रोम व्याकुल तेहि छारा।।
चिनगी बिरह आगि कै लागी। सुलगै लाग हिये महँ आगी।।
सखिन्ह देखि धन बदन मलीना। मन व्याकुल तन सुध बुध हीना।।

पाठान्तर–१-करै, २- तमसि, ३- बजनूहार, ४-खेत, ५-लगि, ६-आइ, ७-लै,

पूँछै कत तुम्ह चित्त उदासा। कवन सोच तुम हिरदै बासा।।
तुम्ह सबकर जग प्रान अधारा। काहे लाग भई बिकरारा।।
सब[1] सुख तुम्हहिं विधाता दीन्हाँ। मन मलीन केहि कारन कीन्हाँ।।
पान न खाउ न सूँघहु फूला। अभरन अवर सिंगारहु भूला।।
दिन भर मौन किये रहै, भूख प्यास गये भूल।
पान न खाय न रहि सकै, काँट भए सब फूल।।३।।
भूखन रतन उतारि जो डारा। दुख दायक भये सबहिं सिंगारा।।
मन महँ सोच करैं मुरझाई। लैगा प्रान स्वरूप दिखाई।।
नाउँ ठाउँ कछु जानत नाहीं। कहाँ सो खोज करूँ जगमाहीं।।
नियरे ठाढ़ि रहै वह मूरत। जेहि बिन तन मन प्रान विसूरत।।
रूप दिखाय सो चेटक लावा। मधुर बचन कहि अधिक लुभावा।।
सेज परै जागै फिर लखै। लखै न रूप उठै फिर रोवै ।।
ना वहि मूरत ना वहि ठाऊँ। कौन हत्यो वहका नहिं नाउँ ।।
छूटै आँसु चलै जस मोती। कहै कि अय मनभावन जोती।।
कहाँ गयो वह रूप दिखाई। नट नाटक चाटक[2] अस आई।।
तोहिं संपति वहि दइ किये, जिन्ह कीन्हाँ तोहि भूप।
एक बार फिरि आवहु, आनि देखावहु रूप।।४।।
ज्ञान हेराय तो मुरत हेरानी। लागत आगि न बरसै पानी।।
जातवेद होय सेज जराही। जानि वेध सब वेद भुलाई।।
पावक झर से पवन जो लागे। रोम-रोम लै सरागन दागे।।
खिन उठ सेज परै विकरारा। खिन उठकै बैठे बेसँभारा।।
खिन तम डहै से अगिन उदाना। खिन बरसै चख उदक झराना।।
खिन सो उठै बिरह कै ज्वाला। खिन मुख सँवरत होय बेहाला।।
कहै कि ए बैरी दुख देवा। का मैं कीन्ह चूक अस खेवा।।
खिन रोवै खिन नैन छिपावै। खिन सोवै पै नींद न आवै।।
विकल सरीर भयो जस पारा। बिरह अगिन तें सुठि विकरारा।।
खिन चख बरसै अगिन जल, करत न बनै पुकार।
कल न परै पल ना लगै, सहै दुकूल न भार।।५।।
यहि विधि निसि बीतै दिन आवै। सखिन्ह देख चख नीर छिपावै।।

पाठान्तर–१-सम, २-चाटक शब्द नहीं है।

अधिक विकल होय प्रान गँवावै। रोवत बनै न कहत सोहावै।।
बैठिह मौन साध बैरागी। हिये सँभार विरह कै आगी।।
उठ धाई सभ सखी सहेली। करत सदा जस कूकत बेली।।
देखा आप सो[1] प्रान पियारी। सखिन्ह होंह अधिकौ विकरारी।।
निस दिन खोज करै सभ कोई। कँवल भेद का जानै कोई।।
धाई लखा प्रेम[2] कै[3] पीरा। चरचा देखि मलीन सरीरा।।
जब सु एकँत भई तब कहा। केहि विधि अंबुज संपुट गहा।।
कहौ भेद धनि आपन, जो कुछ विरह वियोग।
करौं उपाय सो रोग कै, लै मेरऊँ तेहि जोग।।६।।

मैं तोकहँ[4] केहि चाह सो[5] पाला। दिन-दिन देखि सो होहुँ निहाला[6]।।
बालापन तोहि हिए चढ़ाये। फिरौं चहूँ दिसि तोर फिराये।।
पख्यों सो तन छीर अधारा। प्रान ते अधिक सो प्यार तुम्हारा।।
नित छाती पर तोहि सोलावा। नैन ओट मोहिं चैन न आवा।।
तोर सो दुख हरेउ[7] मोर चैना। कैसे दुखी[8] लखौ निज नैना।।
सुनि यह बात चरन सिर लावा। आपन अरथ सो बरनि सुनावा।।
तुम माता ते अधिक पियारी। तोहि छुट अवर न हितू हमारी।।
औ तोहि सम कोउ नाहिं सयानी। तोहि सब बेद भेद जग जानी।।
पै दुख मोर कठिन है धाई। जेहि दुख कर कोउ नाहिं सहाई।।
मोहौं दूत अपछरा,[9] कहु मानुष केहि मान।
जेहिके[10] नित मोहि आस है, कत दुख सहै परान।।७।।

कह्यो लाज तें कहा न जाई। जो न कहौं कत प्रान रहाई।।
प्रान जात का भेद छिपाऊँ। कहौं विथा जो औषध पाऊँ।।
धाय कहा तुइँ प्रान अधारा। तोरे लाग तजौं घर बारा।।
जौ देखो तोहिं चित्त उदासा। कहाँ मोहिं अब रहै हुलासा।।
सो जानहु हम गुन अधिकारी। कस न करहु[11] तुम भेद उघारी।।
जानहु प्रेम कीन्ह तन रेखा। काहुन कहँ तुम नैनन देखा।।
तेहिकर करौं सो ओसद[12] खोजू। कहौं[13] सकल दुख डारौ रोजू।।
कहा जुलेखा सुन मोर बाता। मोर हिया कुठाउँ सुराता।।
सपने महँ वह रूप विसेखा। जो कबहूँ ना सुना न देखा।।

पाठान्तर—१-जो, २-पेम, ३-कै, ४-तोहिका, ५-से, ६-बेहाला, ७-हरयो, ८-दुखो, ९०- कहा हौं, मोह्यो अछरी, १०-जेहि कै, ११-कहहु, १२-ओखध, १३-हरौं

करौ जतन अब धाय, न तो मरौं जिय खोय।
कहा भेद मैं तुम्ह तें, सुने न दूजा कोय।।८।।
तेहिकर बिरह बान मोहिं लागा। लागत रोम-रोम तन जागा।।
चहहु प्रान तो करहु उपाऊ। हौं पंखिय जेहि पंख न पाऊ।।
मोहि बारे विधि हिये सँवारा। लाजन मरौं न जाय उघारा।।
जो निलज्ज होय प्रान लुटावहुँ। जन परिजन महँ लाज गवावहुँ।।
धाई सुना प्रेम कै बाता। उपज्यो रोम-रोम दुख गाता।।
कहा विरह पद कठिन अपारा। जेहिके प्रेम बार नहिं पारा।।
भये सपने लखि प्रान उदासा। पूँछि न लिह्यो नाउँ औ बासा।।
नाउँ ठाउँ जेहिकर कछु नाहीं। को जानै कछु उन जग माहीं ।।
कै दहुँ सरग लोक कर कोई । दैगा दुख दिखाय मुख सोई।।
कै तुहुँ कछु चाटक देखरावा। झूँठ साँच कोउ जान न पावा।।
कहा करौं कत जाउँ चलि, कासों[1] कहौं दुख रोय।
बिना नाउँ औ ठाउँ कर, का जाने को होय।।९।।
सुनि यह बात सो भई अधीरा। बाढ़ै अधिक प्रेम कै पीरा।।
भई अधीरज औ अज्ञाना। कहा कि कौन अहै सुलताना।।
अहै सो मोर जीव लेनहारा। देउँ प्रान तो वहि हत्यारा।।
आई सखी धाय चहुँ ओरा। लिये भोग औ कनक कटोरा।।
बैठी रहै मौन की नाईं। सखिन्ह खवावहिं भोग वरियाईं।।
वह जिय अवर भोग कै जोगू। विरह विथा औ प्रेम वियोगू।।
भूला खेल औ भोग विलासा। भूला सुख औ खेल हुलासा।।
भूला बेद औ कथा कहानी। प्रेम के पंथ बँधहु अरुझानी।।
भूला अभरन राग सुहागा। सखिय भई दारुन बिछनागा।।
भूला खेल कोलाहल, सुख संपत गय लूट।
प्रेम[2] फंद अरुझाने, अवर फंद सब टूट।।१०।।
चार जाम दिन यहि विधि खोई। बोलत बात सखिहि मुख जोई।।
निस का सेज बिछावै रोगी। धाय पड़ै पट ओढ़ वियोगी।।
चलै आँसु जस झल-झल सेजा। रोय बुझावै तपन[3] करेजा।।
सखिन्ह पाँव जो चापै बैसे। बेधहिं बान सुदारुन ऐसे।।

पाठान्तर-१-कसों, २-प्रेव, ३-तपत,

कहैं कथा जो सखिन सयानी। चित्त वियोग को सुनै कहानी।।
फूल सो आन बिछावन सेजा। दहकै देंह औ तपै करेजा।।
चंदन आनि बदन महँ लावैं। लागि आगि तन दुगुन दुखावैं।।
भवन भासक[1] अस धर खायें। अभरन तनु जस काल डँसाये।।
रोम-रोम जारै दुख दीन्हाँ। भा तन फाँस बरन वह नेहाँ।।
होय व्याकुल बिलखाय, पल न लगे बेहाल।
तज धीरज चख मूँदिकै, विनवै दीनदयाल।।११।।

बूड़हि देहु थाह मँझधारा। बिछुड़े तोहिं मिलावन हारा।।
कहाँ मूरत औ ताकर बासा। कवन हतो जिन कीन्ह उदासा।।
का तेहि नाँव-ठाँव तेहि कीन्हीं। कलपौं नाथ जाउ मैं दीन्हीं[2]।।
कहाँ रूप उपज्यो करतारा। कहाँ सो अहै जीव लेनहारा।।
पियुखन के अस बचन बतावा। लैगा प्रान सो बोल सोहावा।।
केस सीस वै कहाँ बनाये। कवन जाल[3] तिन्ह प्रान फँसाये।।
यहि विधि रोवत जोवत आसा। सब निसि जात भरत ऊसाँसा।।
निसि बीते यह दग्ध अपारा। बिरह बिहाय होय भिनुसारा।।
कहाँ नैन औ रसभ कपोला। कहाँ सो अधर सुधाधर बोला।।
मरै जियै लाजय डरै, करै न बिरह उघार।
जेहि पर परे सो जाने, लगन कै अगिन अपार।।१२।।

दिन भर सखिन्ह संग मुख जोवै। निसि एकंत होय झल-झल रोवै।
भीजे सेज औ पाट बिछावन। सँवरै हिये रूप मनभावन।।
नींद भूख संगरो परिहरै। सोय रहै नित मोती झरै[4]।।
छुट रोदन औषदहिं अपारा। और न कुछ तेहि नींद अहारा।।
बिरह बिथा हिय अंदर राखै। लाज खोय न काहू ते भाखै।।
यहि विधि दिन बीतै निस आवै। रात दिवस धन रोय गँवावै।।
देखैं सखी कँवल कुम्हिलानी। पै कछु भेद परै नहिं जानी।।
पूछे भेद कहै कछु नाहीं। बैठी रहै भवन कै माहीं।।
कहाँ नैन[5] वह चैनक होई। जो फिर दरस दिखावे कोई।।
दिन भर रहै सो बंद महँ, सूर जरावत दीन्ह।
दिन ते पीर बढ़ो सखि, निसि तें बढ़ै सनेह ।।१३।।

बीता बरख हरख तन त्यागा। रह्यो अकेल विरह बैरागा।

पाठान्तर–१-भाकस, २-ताही, ३-जल, ४-झरै, ५- रैन।

भए अस दुखित छूटिगा भोगू। जोगउ ते साधा सुठ जोगू।।
चरचै विरह सो सखी सयानी। जेहिके मरम परै नहिं जानी।।
माता देखि भई बिन प्राना। कौन तुसार कँवल कुँभिलाना।।
लीन्ह बुलाय हिये महँ लाई। लाय हिये महँ धीर बँधाई।।
माता भेद सखिन्ह से पूँछे। का वो कहै भेद सो पूँछे।।
डरहिं सखिय तेहि देखि सुभावा। रहा निकट दुख कठिन नियावा।।
निस दिन जरै बिरह कै जारे। उतपत प्रेम भये सुखकारे।।
देखि सुता जननी अकुलानी। आरत करै आप सुग्यानी।।
चढ़ै[1] माइ[2] कैलास पर, भोग दई से हाथ।
सेवा करै अनेक बिधि, राखै निस-दिन साथ।।१४।।

कोटि जतन कै हारी सोई। एक दिवस विधि आन सँजोई।।
मूँदि चहै हिय परगट केरा। खोलन चह हिय केर अहेरा।।
सोवै तन जागै वह जीऊ। हिये नैन ते देखै पीऊ।।
जेहिं विधि आदि परघट भो सोई। आवा फेर न[3] जानै कोई।।
धाय नारि पाँव लै परी। हाथ जोरि आगे भइ खरी।।
कहा कि प्रीतम लेहु न प्राना। देहु विछोह किहेउ तन हाना।।
तोरे दरस-परस कै आसा। रह्यो आस घट पंजर साँसा।।
तुम अस कंत भुलायो मोहीं। मैं नित जरयों सपन लखि तोहीं।।
निस-दिन सीस चढ़ायों खेहा। भसम बिरह तोहि अंबुज देहा।।
तुम अस निठुर विछोही, बहुरि न लीन्ह्यो चाह।
मुयौं सो विरह विछोह तें, अब कछु करहु निबाह।।१५।।

कहा कि अस मोहिं उपज्यो सोगू। तुम्हते अधिक सो बिरह वियोगू।।
तुम पर कौन बिथा अस बीती। हौं जस सहौं सो प्रेम पिरीती।।
तोरे बिरह भयो अग्याना। छाँड्यो देस औ नगर अपाना।।
तोरै लाग भयो परदेसी। मिला न कोई प्रेम सँदेसी।।
सो तुम मोहिं भुलावहु नाहीं। राख्यो प्रीति सदा हिय माहीं।।
सदा मोहिं तुम नियर बिसेखी[4]। दूजे पुरुख और जनि देखी[5]।।
जो चाहो हम दरसन राता। दूजे तें जिन बोलहु बाता।।
जब सँवरों तब हौं तुम पासा। हम तुम्ह पास[6] रहौं तोरे आसा।।

पाठान्तर–१-चढ़ी, २-माय, ३-ना, ४-विसेखो, ५-देखो, ६-आस,

होय विलम्ब सोच जनि भानहु[1]। प्रेम न कतहुँ अविरथा जानहु।।
मोहिं भूल्यहु जिन प्यारी, औ सँवरहु दिन-रैन।
करो सदा वैराग चित, तब पावहु सुख चैन।।१६।।

कहि यह बात चहा उर लावा। जागि परी कछु दिष्टि न आवा।।
वहै सु सेज वहै सो नारी। अधिक भई व्याकुल बेकरारी।।
उठी[2] बैठि[3] औ लागी देखै। देखै सभै न ताहि विसेखै।।
कहा कि अरे प्रान पत मोरे। बँध्यो प्रेम फाँस मैं तोरे।।
कब देखहिं भरि नैन अघाई। केहि दिन हिय की प्यास बुझाई।।
कब वह घड़ी सो पल फेरि आवै। जेहि दिन दरस-परस उन पावै।।
मैं बाउर कछु सुध ना कीन्हाँ। नाउँ औ ठाउँ[4] पूँछ नहिं लीन्हाँ।।
केहिते[5] कह्यों सो आपन हारा। पूँछ न लिह्यौ सो अरथ अपारा।।
प्रेम आय हिय में बसा, बसा सो आठो अंग।
दिन-दिन वह बिरहिन दहै, कौन सुचरचै संग।।१७।।

दिन भर रहै मौन की नाई। रैन जाग औ रोय बिहाई।।
दरसन[6] भयो जो सपने माहीं। नाउँ-ठाउँ कछु जान्यों नाहीं।।
अबकी बेर फेर तोहि पाऊँ। बरुनि सजल पग साँकर नाऊँ।।
राखौ नैन घालि बिलभाई। मूँदौ पलक देहुँ नहिं जाई।।
आवत लख्यो न गोपित देखा। भयौ मोर बाउर कै लेखा।।
कहँ विधना अस करै सुभागा। मिलौं कनक जस कोटि सुहागा।।
तोर जोति मोर हिये समानी। दूसर और कहा मैं जानी।।
पिउ आए मैं पापिन छूँछी। नाउँ ठाउँ कछु लेहु न पूँछी।।
जब लहि आवागमन करेहूँ। तब लहि अधिक बिरह दुख देहूँ।।
यह विधि बीती रैन सब, भयो चराचर रोर।
धाई आइ निकट उठि, और सखिन चहुँ ओर।।१८।।

तब धाई ते कना उघारी। सपने दरस फेर चख चारी।।
कहा कि दरस[7] भयौ परकासा। पूँछि न लेउँ नाउँ औ बासा।।
रखै लाग चित अविरम जोगू। भये मोहित लखि विरह वियोगू।।
चित बैराग औ हिये उदासा। रही लूटि होय नाउँ कै आसा।।
वहिके हिये सो विरह वियोगू। जानहि लोग भयौ कुछ रोगू।।
औषद देहिं पिलावहिं मूरी। और[8] सुख चैन दीन्ह तिन दूरी।।

पाठान्तर~ १-मान्हु, २-उठि, ३-बैठी, ४-ठाऊँ, ५-कहि, ६-परसन, ७-औ,

माता देखि भई बैरागी। तन-मन उठै कोख कै आगी।।
दुहिता रोग सुना सुलताना। औ' सब नगर देस कुल जाना।।
भयौ प्रगट सभ जगत महँ, दुहिता रोग बिराग।
बेल अंकुरे हिये महँ, बाढ़ि सरग कहँ लाग।।१६।।

भइ बाउर तन सुध-बुध त्यागी। चाहा जायसु घर से भागी।।
पातसाह तब बैद बुलाये। होय व्याकुल नाड़िका दिखाये।।
औषद भाँति-भाँति कै कीन्हा। काढ़ा औ चूरन रस दीन्हा।।
तेहिते अधिक बिथा तेहि बाढ़े। भागे बैदन कहि दिन गाढ़े।।
प्रेम पीर ते भई अधीरा। होय व्याकुल तन फारे चीरा।।
उठि-उठि चले छाड़ि घर-बारा। तन पर लागि चढ़ावै छारा।।
पातसाह तब लाज लजावा। दुहिता पग बेरी लै आवा।।
बेरी परी न मानै नारी। निसि-दिन सखी रहैं रखवारी।।
कहै कि ए मनमोहन प्यारे। पग साँकर देखौ अनियारे।।
मोरे मन सँकरी परी, तन सँकरी केहि मान।
निज नैनन देखौ निरख, यह तन मन कै हान।।२०।।

यक दिन पहरु धौराहर सोये। सँवर-सँवर मुख व्याकुल होये।।
सँवरै वही सरूप अमोला। दुख तें नैन जल परलै खोला।।
कहा कि ऐ मोरे प्रान अधारा। भल दिये दरस बिछोहन मारा।।
कहिके सपथ अय प्रीतम प्राना। जिन्ह तोहि दीन्ह रूप औ ग्याना।
नाउँ-ठाउँ अब देहु बताई। एक बार फिर दरस दिखाई।।
कै किरपा औ सहसन दाया। निज दासी पर फिर कर माया।।
तोरे बिरह मरौं अब रोई। सोऊँ सेज रकत जल बोई।।
सखी सहेली न जिऊँ सोहाई। मात-पिता कुल कान गँवाई।।
छाँड़यों भोग भुगत तोरे नेहा। छाँड़ि सिंगार चढ़ायों खेहा।।
छाँड़यो सब सुख दुख सह्यो, किह्यो जोग तेहि लाग।
एक बार फिर आवहु, आनि बुझावहु आग।।२१।।

एक रैन फिर आइ तुलानी। आई सुमुखि नींद अलसानी।।
तीसर सपन फेर वै देखा। वहै रूप जो आद बिसेखा।।
जानहु आप फेर अस बोला। अमी कुंड अधरन तैं खोला।।
मैं तोहि लाग तज्यौं घर बारा। पर्‌यों कूप महँ मोहि निसारा।।

पाठान्तर-१-और,

मोर तोर प्रीति आदि लिखि राखा। करहु सो अंत भोग अभिलाखा।।
तब दुख हटै होय सुख सारा। जब पाऊँ मैं दरस तुम्हारा।।
यह सुन नारि भई तब ठाढ़ी। अरुझी बेल प्रेम की गाढ़ी।।
अबकी बेर जाय नहिं देहूँ। जब लहि नाउँ पूँछ नहिं लेहूँ।।
अब लहि यहि जिव निकसि न गयऊ। जो फिर दरसन प्रापत भयऊ।।
नाउँ-ठाउँ बतलावहु, पठऊँ जहाँ संदेस।
होय जोगिन वैरागिन, चलि आवहुँ वहि देस।।२२।।

तब मुसकाइ कहा सुन प्यारी। मिस्र देस महँ बास हमारी।।
मिस्र साह कर सचिव सोहावा। आवहु वहँ तव होय मेरावा।।
सचिव नाम जगत नित सोहै। और नाम विरला कोउ कहै।।
मैं अपने बस महँ हौं नाहीं। आवहु बेगि मिस्र कै माहीं।।
कुछ दिन सहौ विरह दुख दाहू। बिन दुख प्रेम न प्रापत काहू।।
जो दुख तें नहिं होय उदासा। अंत होय सुख भोग विलासा।।
जस चाहौ तुम मो कहँ प्यारी। तस चाहौं तोहि अनत कुँवारी।।
सपने महँ सुनि भई हुलासा। जागि परी कोउ आस न पासा।।
रोय उठी गहबर अकुलानी। नाउँ-ठाउँ सुनिकै बिलखानी।।
जिऊँ तो जाउँ मिसिर कहँ, मरूँ तो मारग माँह।
छार होहुँ उड़ि जाउँ अब, जहाँ बसै मोर नाँह[1]।।२३।।

जोगिन होउँ जाउँ वहिं देसा। जहाँ बसै मोर प्रान नरेसा।।
लाज जराइ करहुँ उजियारा। जाउँ मिस्र कहँ पवन अधारा।।
जब लह विरह हलाहल खाऊँ। जाउँ मिसिर तब मिसिरी पाऊँ।।
देखहिं सखी कँवल कुम्हलानी। दिन-दिन बेलि सो जात झुरानी।।
तब धाई तिन कहा बोलाई। पूँछेसि का उपजेउ दुख आई।।
आपुन भेद सो कहै उघारी। भइहु आज कस बहुत दुखारी।।
आवहिं देस-देस के पायक। लै संदेस जो जेह जस लायक।।
पातसाह नहिं बात बनाई। काहुहिं उतर न देइ सोहाई।।
तुम आपन यह हाल बनावा। दिन-दिन जोवन रूप नसावा।।
मोहिं सपने महँ पिउ मिलेहु, भयउ सभै सुख अंग।
जागि परी रोई मरी, बिछुरि गयउ जब संग।।२४।।

भावसाम्य- १- यह तन जारौं छार कै, कहौं कि पवन उड़ाव।
मकु तेहि मारग उड़ि परै, कंत धरै जहँ पाव।।
जायसी, पद्मावत, नागमती वियोग खण्ड,

नौ जुलेखा-वजीर विवाह खण्ड

मिसिर सचिव मोहि नाउँ बतावा। अब धाई कछु करहु उपावा।।
मो कहँ देहु मिसिर पहुँचाई। तब तुम होहु अछोदर धाई।।
देखहु दरस रहै घट जीऊ। जेहि सो देस बसै मोर पीऊ।।
पातसाह तब बोलेउ धाई। अरथ देस कर बरनि सुनाई।।
सात दीप के नृप सुलताना। कीन चाह सुनि रूप बखाना।।
सो तुम दुहिता यहँ चलिजाहू। एक-एक कै बरनहु चाहू।।
धाई आइ जुलेखा पासा। लागी करै बुद्धि परगासा।।
रूम साम औ चीन ते आये। सभ साहन के पुत्र सोहाये।।
ईरान औ तुरान लिखि भेजा। एक ते एक महाबल तेजा।।

दीन्ह मिसिर कै नाउँ जब, उठी हिये हुलसाइ।
सँवरि सपन कहँ हिरदयँ, पुनि लागी बिलखाइ।।१।।

धाई जाइ साह ते कहा। वहि के हिये न एकहु लहा।।
सुनि कै नाम उतरु नहिं दीन्हा। सभके नाउँ पर करुना कीन्हा।।
मिश्र नाउँ सुनि कै विहसानी। पुनि करुना कै हिये लजानी।।
जानि न परै भेद अवगाहा। वहि के हिये अहै धौ काहा।।
तब सुलतान कहा सुनि धाई। पूँछहु अरथ नीक निरथाई।।
जेहि सुलतान ते होइ हुलासा। देहुँ बियाहि ताहि सुख रासा[1]।।
सभ साहन कहँ ऊतरु देऊँ। आयो मानि एक कै लेऊँ[2]।।
तब धाई पुनि आइ जनावा। कहौ भेद मोते सति भावा।।
जेह कहँ तुम हिरदय महँ राखौ। ताकर नाम सु परगट भाखौ।।

सभ कहँ ऊतरु देहिं हम, करहिं एकतें बात।
देस-देस कै पथिक चलि, आवत हैं दिन-रात।।२।।

लागि कहै तब राजकुमारी। कहौ कहा मैं भेद उघारी।।
मैं नारी हिय लाज लजाऊँ। पै का करौं मरौं बिख खाऊँ।।
मोर मन हरा मिसिर के देसा। मिसिर सचिव कहँ कहौ सँदेसा।।
जो विधि करै होइ पुनि सोई। मोरे और न दूसर कोई।।
मिसिर-सचिव मोर मन हरि लीन्हा। औ सपने महँ दरसन दीन्हा।।

पाठान्तर–१०- शेख और अली की प्रति में भेजौं बेगि पत्र तेहि पासा। पाठ है, २०- तीनों प्रतियों में 'अग्यँ एक मानि कै लेऊँ' पाठ है।

जो मोर जियन चहौ अब धाई। करहु सचिव सँग मोरि सगाई।।
वारौं सभै निरिप सुलताना। मिसिर सचिव मोरे मन माना।।
नाहीं त सीस कलपि मरिजाऊँ। मिसिर सो मुये-जियत है ठाऊँ[1]।।
जो चाहौ तुम प्रान हमारा। मिस्र सचिव कहँ देहु हँकारा।।

सभ कहँ करहु निरास अब, जो चाहौ मोर प्रान।
मिस्र सचिव कहँ पत्र लिखि, भेजि देहिं सुलतान।।३।।

तब धाई फिर जाइ जनावा। पातसाह मन महँ पछितावा।।
सभ सुलतान जो चाह करेहीं। ताकहँ उतर कहौ का देहीं[2]।।
रूम साम औ बलख बोखारा। चीन अस्फहान कन्धारा।।
एक ते एक सरस सुलताना। सो दुहिता एकौ नहिं माना।।
बात अपार कहौ का कीजै। मिस्र-सचिव कहँ दुहिता दीजै।।
सभ कोउ ऊँच बियाहैं बारी। जानि बूझि नीचइँ पग ढारी।।
मैं सुलतान देस-पति भारी। वह नृप-मिस्र को अग्याँकारी।।
वह सेवक मैं जगकर साईं। मोती पोत होत यक ठाईं।।
मोती जोग चाहिए हीरा। कत गूँथै कौड़ी के तीरा।।

मिस्र सचिव तजि आन कहँ, बारी देहु बियाह ।
तुरत मरै विष खाइ धिय, बहुरि हिये पछिताह।।४।।

धाई लागि कहै समुझाई। चहौं प्रान तो करहु सगाई।।
नाहिं तो प्रान देइ यह ठाऊँ। सुनै जो आन निरिप कर नाऊँ।।
भै कन्या संजोग[3] सयानी। करहु बियाह जो तेहि मनमानी।।
जम कहँ धी परिसर मैं दीन्हा। अगिन तें व्याह नील धुज कीन्हा।।
नारि दमिन्ती कहँ नल भावा। जस रुकुमिनि कहँ कृस्न सोहावा[4]।।
बारी करम लिखा जो होई। कोटि जो करै परै पुनि सोई।।
कुष्टि सुरूप सदा सिव धरा। सत्त सुभाउ सती चित हरा।।
मुरली गई डोम से व्याही। औ ऊसा अनिरुध कहँ चाही।।
दरौपदी दुरपद कै बारी। पाँच पांडवा की भै नारी।।

पिता दत्त कन्याँ गहैं, जब तरुना भइ नार।
तब कन्याँ मुख बर लहै, चहै सोइ भरतार।।५।।

पाठान्तर- १ᵒ- सुनौ जो और निरिप कर नाऊँ। शेख और नूर अली की प्रतियों में यह पाठ है। २*- यह चौपाई शेख और अली की प्रतियों में नहीं है। इसके स्थान पर उसमें-

हम सुलतान हिये नहिं आना। बारी मिस्र सचिव मन माना।।
कोउ सुलतान न ऊतरु पावा। गरब हमार सो आगे आवा।।

३- शेख तथा नूर अली की प्रतियों में 'समरत्थ' पाठ है। ४*- यह चौपाई शेख और अली की प्रतियों में अधिक है।

सुनि सुलतान रहेउ सिरनाई। कहा सचिव ते अर्थ बोलाई।।
मिस्र सचिव कहँ पत्र पठावहु। लिखेउ कि बेगि इहाँ चलि आवहु।।
जग सुलतान जो चाह करेहीं। सो सभकहँ हम उतर न देहीं।।
बारी मोर सो तुम कहँ चाहा। ना जानौं बड़ का अस लाहा।।
पूर्व जन्म कर है संजोगू। जेहि ते उपजेउ हिये वियोगू।।
जेहि दिन रचेउ आतमा सारी। तेहि दिन कै कुछ अहै चिन्हारी।।
सपन दरस लखि तोहि विमोही। तजि सुलतान जो चाहत तोही।।
तब मंत्री लिखि पत्र पठावा। एलची सुघर मिसिर चलि आवा।।
सुनिकै सचिव हिये हुलसाना। मैं सेवक औ वै सुलताना।।
कहँ यहि जोग सो दास यह, उन्ह दाया अधिकाइ।
जो अस मोहिं गरीब कहँ, ऊँची कुरी चढ़ाइ।।६।।
पंडित बोलि लगन ठहरावा। भये हरष औ बाज बधावा।।
घड़ी महूरत सोधि सोहाई। कीन्ह बिदा पहिराव पिन्हाई।।
एलची आइ साह तें कहा। समाचार जो कुछ तहँ अहा।।
लागेउ व्याह साज तब होई। घर-घर सुनि हुलसा सभ कोई।।
दोउ दिसि भयउ व्याह कर साजा। सुख आनन्द कर बाजन बाजा।।
सचिव साज सभ ठाट सोहावा। लै बरात मगरिब कहँ आवा।।
भयउ बियाह कीन्ह सुभचारा। होत बिहान देवान निसारा।।
दायज दीन्ह जो गिनत न आवा। यक-यक हीरा लाल सोहावा।।
जहँ लह नग मगरिब महँ अहा। सो सभ रतन लीन्ह जित चहा।।
दायज दीन्ह अमोल नग, मिसिर राज को मोल।
रतन पदारथ संग लै, आनि चढ़े चंडोल।।७।।
धाइ खेलाई, सँखी सहेली। चली संग जिन पढ़ी औ खेली।।
हिये जुलेखा करै हुलासा। विधि पूरेउ मोरे मन कै आसा।।
चला संग लै सचिव सोहावा। दरब अनेक पाइ सुख पावा।।
औ पावा सुलतान कै बारी। जेहिके लागि जग निरिप भिखारी।।
लै चँडोल औ दायज़ दाना। हस्ती घोर न जाइ बखाना।।
मोती लाल जो भरी पिटारी। चले देखत सभ बैठ बिकारी[1]।।

पाठान्तर–१*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है।

पावा दरब दई जो दीन्हा। कोस दसेक पर डेरा कीन्हा।।
एक ओर पुनि सचिव सोहावा। यक दिसि तेहि निज साज देखावा।।
भयउ ठाढ़ अस डेरा ऊँचा। सचिव मँदिल नहिं ताहि पहूँचा।।
डेरे महँ कीन्हेउ परबेसा। भई जुलेखा मन लवलेसा।।
करहु जतन अब धाई, दरस परापत होइ।
बहुत दिनन को दुख दगध, जाइ सो छिन महँ खोइ।।८।।

धाई मोहि चैन नहिं आवै। पीतम दरस न जब लह पावै।।
पीतम निकट जो बास करेई। मन व्याकुल तब धीर धरेई।।
उठै तरंग समुँद उलथाई। लाज-बाँध कुलि दई बहाई।।
कैसहुँ मन यह धरै न धीरा। नैन लालची पीतम तीरा।।
हिय[1] रहसै औ चित हुलसाई। पावहिं चैन जो नैन अघाई।।
तब धाई पुनि तंबू फारा। जहाँ ठाढ़ वह सचिव कुमारा।।
कहेसि कि दरसन देखहु आई। जेहि कारन कुल कानि गँवाई।।
तजि सुलतान देस के रावा। लाज नसाइ सचिव मन भावा।।
लगन कै बात न जानै कोई। निमित लिखा सो परगट होई।।
तोरी लगन लगी जहाँ, तहाँ करम बल कीन्ह।
भै दाहिन तोर[2] भाग जग, मन भावन तोहि दीन्ह।।९।।

निमित करै सोइ होइ पियारी। करम रेख को सकै बिगारी।।
नाहिं तो तोर रूप जस सागर। सचिव सरूप कूप जल गागर।।
कहाँ मिसिर कहँ सचिव बेचारा। जो विधि लिखा को मेटन हारा।।
पेमै पेम कीन्ह जग माहीं। बिन दुख काहूँ पावा नाहीं।।
तोर पेम साँई कहँ भावा। बिन दुख सहज सो प्रीतम पावा।।
भँवर सोहाइ न कुसम्ह सोहावा। केतकि कै काँटा मनभावा।।
जहाँ रीझ तहँ बूझ न होई। जाकहँ चित चाहै भल सोई।।
राजकुमारि डोम घर आई। डोम सुता भइ रानि सोहाई।।
जहाँ लगन तहँ रूप न पूँछा। लगन करम गति औ सभ छूँछा।।
तुम बारी सुलतान की, वह सेवक केहि जोग।
तुम पदुमिनी वह तुरी नर, दइयँ कीन्ह संजोग।।१०।।

पाठान्तर—१-शेख और अली की प्रतियों में 'मन' पाठ है। २-शेख और अली की प्रतियों में तोर के स्थान पर तुव पाठ है।

दस

जुलेखा ग्लानि खण्ड

विरही देहँ बिरह दुख डाहा। सेंत मेंत तोहि प्रीतम लाहा।।
उपजी हिये बिरह कै आगी। तंबू फारि सो देखन लागी।।
जब देखा भरि नैन निहारी। गिरी अचेत आह इक मारी।।
हे रे दई! यह तो वह नाहीं। जेहि देखेउँ मैं सपने माहीं।।
रूप समँद, समँद अस नैना। केस सीस औ अम्बृत बैना।।
वह कर रूप रेख कुछ नाहीं। वह जस धूप औ यह परछाहीं।।
वह जस दिन यह निसि अँधियारी। वह मोती यह कौड़ी कारी।।
वह जस सूर गहन यह अहा। करम सँजोग आनि मोहि गहा।।
वह के लागि मैं सभ कुछ कीन्हा। विधनैं मोहिं काल केहिं दीन्हा।।

सत्त जान मैं सपन कहँ, बिकट तपैं तप कीन्ह।
कहा करौं कित जाउँ चलि, दइयँ सो छल कै दीन्ह।।१।।

उन्ह मोते सपने महँ कहा। तेहि कारन मैं सभ दुख सहा।।
पुहुप खोज आयउँ यह बारी। फँसेउँ आनि यहि कंटक झारी।।
अम्बृत खोज हलाहल पायउँ। जनमत कस न हलाहल खायउँ।।
कोऊ सजीवन हेरन गयऊ। तेहि बछनाग परापत भयऊ।।
अम्बृत के धोखें विष खावा। मरन भला अब का पछतावा।।
जनमत विष दै मरतिहु माँता। काहेकाँ होति अगति-गति ग्याँता।।
हे रे दई! का पाप कमावा। अंकुरित बीज आग केइँ लावा।।
मोर करम अस अहै अभागा। बारहिं लिखा कलंक सो लागा।।
अब कहँ जाउँ मरै हियफाटी। कै सो कंठ अब डारौं काटी।।

घालि पिटारियँ राखि कोइ, जैसे पदुमिनि नार।
पदुमिन धोखे[1] ताहि पुनि, बन्दर खायउ फार।।२।।

घड़ी चारि वह रही अचेता। पुनि रोई जब सँवरेसि हेता।।
धाइयँ कहा कहौ का भयऊ। देखत दरस प्रान हरि गयऊ।।
जेहिके लाग यह परलै कीन्हा। माँत-पिता कहँ ऊतरु दीन्हा।।
आपन कहा कीन्ह जेहि लागी। ताहि देखि उपजै कस आगी।।
माँतु-पिता कै आग्याँ मेटी। आपन हट राखेउ तुम बेटी।।

पाठान्तर–१-नूर अली और अली की प्रतियों में 'दोखे' पाठ है।

कहेसि कि का अब बरनै धाई। मोरी मिरुतु आजु है आई।।
हेरेउँ सूर राहु मैं पावा। विधि घर से कहँ मोहि ले आवा।।
वह मोती यह पोत समाना। कुसुम्ह खोज कंटक अरुझाना।।
कंचन खोज काल मिलि जाई। तस मोर हाल भयउ अब धाई।।
तेहि तें चहौ जो मोर पति, देहु हलाहल घोर।
नाहिं तो जिये कलंक अब, चढ़ै नसै कुल मोर।।३।।
मोर करम अस अहेउ अभागा। बोयउँ अम्बृत भा बछनागा।।
हीरा लाल की खोली पिटारी। बिच्छू साँप भये अधिकारी।।
होइ काल तें मोख हमारा। और न अब दूसर परिहारा।।
अब धाई करु बेगि उपाई। लावहु तुरन्त मरौं विष खाई।।
जेइँ सपने मोहि रूप देखावा। भयउ न सत सो अहो छलावा।।
जो अब लौटि जाउँ घरमाहीं। माँतु-पिता का मुख देखराहीं।।
अब जिय दिहें होइ संतोखा। कवनिउँ भाँति न पावै मोखा।।
यह कलंक बिनु मरे न मेटै। जब लह राहु न चंदहिं भेटै।।
यह छल निमित्त लिखा हित मोरे। कतनौ दोख पाप के ओरे।।
दे विष खाई मरौं सँखी, और न कछू उपाय।
यह कलंक बारे लिखा, सो बारेहिं मिटि जाय।।४।।
कै रोदन फिर खाइ पिछारा। टूक-टूक जोग कर डारा।।
अभरन तोरि सभै छितरावा। औ सिंगार सभ तोरि बहावा।।
केसक नोचि तोरि गिउहारा। चोली फारि, सीस भुइँ मारा।।
कै अपघात कूटि कै छाती। भई अचेत गिरी बिलखाती।।
धाई देखि भई बेहाला। का गुन तुम कीन्हेउ तव बाला।।
माँतु-पिता की आग्याँ टारी। आपन कहा कीन्ह तुम बारी।।
बैठी हिये लाइ कै धाई। देखि-देखि दुहितहिं बिलखाई।।
चहुँदिसि धाईं सँखी-सहेली। कहहिं कि कस व्याकुल भइ बेली।।
धाई कहेउ उलेउ जिय कोहा। मातु-पिता कर सँवरि बिछोहा।।
सँवरि नेह नैहर कर, औ सिंगरौ परिवार।
रोइ उठी हिय दुहिता, भइ व्याकुल बेसम्हार।।५।।
लागीं रोवै सँखी सहेली। अपने चलत कुटंब परहेली।।
देस-देस निरपति सुलताना। भये अपत इन्ह[1] काहूँ न माना।।

पाठान्तर– १-नूर अली के प्रति में 'तुम्ह' पाठ दिया है।

हतेउ करम महँ सचिव बेचारा। भावी प्रबल न जाइ बिचारा।।
जग-सुलतान सो चाह करेहीं। जाकहँ करम चहहिं तेहि देहीं।।
मातु-पिता कर कुछ बस नाहीं। कीन्ह जो कुछ आवा मनमाहीं।।
अब नैहर कर सँवरि बिछोहा। का पछिताव जो निज मन मोहा।।
तुम सभ महँ हो धाइ सयानी। माता सम चातुर गुरु ग्यानी।।
अब सिख दै समुझावहु धाई। नैहर मोर तजहु सुखदाई।।
चलहु मिसिर कहँ सचिव के साथा। अब कुछ रहा न काहु के हाथा।।

सचिव करम महँ हुत लिखा, सो विधि परगट कीन्ह।
जाकहँ तुम चाहा हिये, मातु-पिता तेहि दीन्ह।।६।।

तब धाई लै सेज बिछावा। औ तापर दुहितहिं पौढ़ावा।।
लागी करै सो आरति धाई। चाँपै पाव हियें बिलखाई।।
का गुनि कै अब प्रान नसावहु। करहु मोख संतोख जो पावहु।।
विधि कर लिखा सकै को मेटी। तेहितें सुचित होहु अब बेटी।।
सुनि यह बात जो नैन उघारा। होइ व्याकुल इक आह जो मारा।।
जो मैं कहौं करहु तुम धाई। मोकहुँ देहु हलाहल ल्याई।।
और उपाउ बनै नहिं कोई। अपने करम कहँ मैं अब रोई।।
तब धाई समुझावै लागी। देखहु हिये चेत अब जागी।।
मारहु मष्ट करहु संतोखा। लावहुँ काहि सो आपन दोखा।।

देखु खेल करतार कर, अहै चरित्र अपार।
अपरंपार अनादि गति, का जानै संसार।।७।।

वहि कर खेल जाइ नहिं जाना। बाउर होइ जो खोवै प्राना।।
तुम अब चलहु मिसिर कहँ संगा। रहहु तहाँ रोगी के रंगा।।
चलि कै करहु आप कहँ रोगी। रहहु हिये महँ गुप्त वियोगी।।
काहुक प्रेम न निरफल गयऊ। अन्तकाल तेहि प्रापत भयऊ।।
और सचिव कोउ होइ सोहावा। रूप देखाइ तोहि बौरावा।।
कै वह रूप परै कहुँ डीठी। मिसिर नगर तें फेर न पीठी।।
जो उन्ह मिसिर नगर बतलावा। तो तुम मिसिर चलहु सतिभावा।।
कटै मिसिर महँ गाढ़ तुम्हारी। यह सपना मैं कहौं बिचारी।।
मिसिर नगर के देखहु लोगू। मिलै तोहिं जो वहि कै जोगू।।

वह भीतर सभ रँग करै, जगत न जानै कोइ।
ग्यान तहाँ सँचरै नहीं, कौतुक करै सो होइ।।८।।

प्रेम तुम्हार अहै जो साँचा। लै आइहि विधि जो रँग राँचा।।
बरस एक, दुख अँगवहु गोरी। पूरन होइ कामना तोरी।।
जब निदान यह निरफल होई। तब तुम मरहु प्रान कहँ खोई।।
चलि कै मिस्र आसरम कीजै। लीजै खोज प्रान नहिं दीजै।।
देखहु अबहिं खेल करतारा। नट-नाटक-चाटक जेइँ वारा।।
जेइँ तुम्हार यह प्रेम बढ़ावा। देखहु काह करै सति भावा।।
दिन दस रहौ करहु मत भोरी। नाहिंत प्रान देहु तुम गोरी।।
चन्द्रहाँस विधि कै सतिभावा। विष के ठाँव विषया कहँ पावा।।
जगत दमिन्ती सभ दुख देखा। राजा नल तब मिलेउ सरेखा।।

काम कन्दला बिरह दुख, भई बिकल बे-सम्हार।
माधव नल कहँ आनि विधि, दीन्ह मिलाइ निसार।।९।।

सुनि धाई के वचन सुहाये। चले आँसु जस झरी लगाये।।
जियत कलंक चढ़ै अब धाई। मरै-मिटै यह दुख निरदाई।।
हम कहँ रोग दई निज दीन्हा। जो पै सपन झूँठ वइ कीन्हा।।
यह सो रोग जेहि ओषद नाहीं। यक दिन रोइ मरौं घर माहीं।।
पै कलंक कहँ डरपौं माई। कुल कै लाज-धरम नहिं जाई।।
तब धाई बहु विधि समुझाई। सोच न करहु अहै सँग धाई।।
नेम-धरम हम जिय के साथा। काहुक परहिं न तुम पर हाथा।।
छाँह तुम्हार न खूँदे पाइह। केहि विधि कहहु हाथ पुनि लाइह।।
मैं अस रोग सुनाउब ताही। रहहि दूर जो विथना चाही।।

और सोच नहिं कीजिए, करहु प्रेमकर जोग।
प्रेम तुम्हार जो सत्त है, आनि करहु संजोग।।१०।।

कही प्रेम की कथा सोहाई। प्रेम गाढ़ विधि काटि उड़ाई।।
ऊखा जरै बिरह की आगी। अनिरुध कहँ आनेउ तेहि लागी।।
विधि रुकुमिनि सों किसन मिलावा। चन्द्रहाँस विखया कहँ पावा।।
कुँवर मनोहर भयउ वियोगी। मधु मालति के कारन जोगी।।
चन्द के काज सूर जग छाना। मधुकर कहँ मालति मन माना।।
तपेउ कुँवर मग धावत लागी। जरी दमिन्ती नल की आगी।।

लखि दीपक पर जरहिं पतिंगे। केतकि लागि भँवर बहु नंगे[1]।।
चात्रिक बूँद सेवाती चाहै। देखि चकोर चन्द दुख डाहै।।
मोर तपै घन घोर के कारन। मीन बनै बिन नीर बुहारन।।
कँवल को मन सूरज सों लागा। कुमुद कौमुदी इन्दु विरागा।।

कहाँ सेवाती सीप कहुँ, कंचन कहाँ सोहाग।
सो तिन तासों मिलि रहे, जो जासों मन लाग।।११।।

भयउ भोर जब कूँच नगारा। गिरी जुलेखा खाइ पिछारा।।
अकसमात जस जिउ हर गयऊ। दरसन अलख-निरंजन भयऊ।।
भै अकासबानी तब आई। काहूँ आनि कहा समुझाई।।
चलहु मिसिर कहुँ मग दुख खोई। दरसन मीत ते प्रापत होई[2]।।
कुछ दिन रहौ सचिव घर माहीं। धरम तुम्हार बिनासा नाहीं।।
गोठिल होइ काम की कूँजी। रहै सपूरन सतकै पूँजी।।
सचिव हेतु तुम प्रीतम पावहु। तेहि कारन अब मिस्र सिधावहु।।
कुछ दिन करहु सो जोग कमाई। मीत तुम्हार मिलहि तहँ आई।।
पहिले दुख साधौ औ जोगू। तेहि पाछे होइह सुख भोगू।।

चलहु मिसिर कहँ सचिव मग, करहु न तन-मन हान।
मन कामना सपूरन, होइह अन्त निदान।।१२।।

भयउ कूच सँग सचिव सोहावा। पहुँचेउ मिस्र नगर कहँ रावा।।
उठी धूम जब मिस्र तुलाना। लखि दायज जग अचरज माना।।
जहँ लह मिसिर रंक औ रावा। आगू लिए सभै चलि आवा।।
पातसाह सुनि आयउ बारा। सचिव नाइ सिर कीन्ह जोहारा।।
नग अमोल आगे लै धरे। देखत सभा रत्न चित हरे।।
औ सुलतान हियें हुलसाना। धन सो देस जहँ नग कै खाना।।
लागेउ होन ब्याह कै चारा। लै सुमँदिर चण्डोल उतारा।।
धाई कहा सचिव तें रोई। मँदिल सो जहँ कोउ न होई।।
सो तुम हमहिं देहु करि सूना। तहँ रोगी लै रखहिं बिहूना।।

करौं रोग उपचार मैं, मिटै सो दुख औ रोग।
तब मैं करब मिलाप बिधि, करहु सदा सुख भोग।।१३।।

पाठान्तर-१०- शेख की प्रति में 'कतकि लागि सो भँवर भवंगे' पाठ है। २*- नूर अली की प्रति में यह चौपाई नहीं है। शेख और अली की प्रतियों से लिया गया है।

मँदिल सून सचिव करि दीन्हा। तहँ परबेस जुलेखैं कीन्हा।।
नग अमोल जो भरी पिटारी। हीरा लाल जवाहिर भारी।।
और बस्तु जो गनत न आई। सो धाई लै सभ पहुँचाई।।
लै के धाई कीन्ह प्रबेसा। अचरज छाइ गयउ सभ देसा।।
द्वारपाल नैहर के आये। धाई तिनहिं पँवरि बैठाये।।
दूसर मँदिल अलग कै साजा। जानहुँ अहै सो दूसर राजा।।
धाई जतन कीन्ह निज जोगू। नारि हिये सुठि बिरह बियोगू।।
बिधि चरित्र अब सुनहु अपारा। आयहु सचिव मिस्र जेहि बारा।।
काम तेज तन तें मिटि गयऊ। विधि के खेल नपुंसक भयऊ।।

लाज समानी हिये महँ, करै रोग उपचार।
विधनैं राखा लाज मोरि, भई जो रोगी नार।।१४।।

दोउ रोगी निज मंदिल रहईं। कोउ काहू सों भेद न कहहीं।।
मन महँ लाज कहै करतारा। सदा रोग यह रहै हमारा।।
रूप बखान मिसिर महँ छावा। पै विधनैं कुछ रोग बढ़ावा।।
पूँछै साह सचिव सों बाता। कहै रोग तेहि दीन्ह बिधाता।।
आपुन दोष न काहुहिं कहै। कहै कि बनिता रोगी अहै।।
लाज तें कबहुँ न मंदिल आवै। जेहि मंदिल रोगी दुख पावै।।
भेजै बैद औ पंडित जोगी। भागहिं देखि प्रेम कै रोगी।।
यहि विधि खेल कीन्ह करतारा। लागी करै रोग उपचारा।।
कोऊ चोब चीनी कहँ खाइ। कोउ मिसिरी दुख विष पै जाई।।

कोऊ हेरै पाताल मद, जेहि तें व्यापै काम।
कोऊ बनावै मिरिग मद, हरै नींद बिसराम।।१५।।

सदा जुलेखा रोदन करै। यूसुफ रूप हिये महँ धरै।।
रूप दिखाय कंत छल कीन्हाँ। बिरह-बियोग-जोग दुख दीन्हाँ।।
झूठ बात कहि मोहन राता। काहे कियो सो छल कै बाता।।
मैं तोर बचन साँच परमाना। लाज गँवाय मिसिर महँ आना।।
जो तेहि हते जराऊँ साधा। जरतिउँ बैठि तऊ दुख बाधा।।
रहत सत्त मोर यह संसारा। अब का करौं कठिन दुख डारा।।
मिटै रोग आवै हम पासा। सत्त धरम कर होइ बिनासा।।
हौं आपत पत राखहु लाजू। प्रान गये जीवन केहि काजू।।

खोयों कुल कै लाज सुहावनि। भयों निलज जग ढीठ[1] कहावनि।।
लाज धरम सब छाँड़ि कै, आयो मिसिर के देस।
चहौ प्रान पत मोर जो, करहु बेगि परबेस।।१६।।

जेहि कारन मैं लाज गँवाना। सो न भयो सब हत्यो छलावा।।
रोगिन भई रहौं कबताहीं[2]। यक दिन मरौं रोय हिय माहीं।।
तोर रूप मैं सपने देखा। भयो मोर अब तिहि कर लेखा।।
हेरै गयो हेराय[3] जो कोई। उलू मिला जो सरबस खोई।।
पानी हेरै गयो पियासा। रेती देखि सो भयौ तरासा।।
कोइ बोहित चढ़ि चाहत पारा। बोहित फट्यौ जाइ मँझधारा।।
बहा जात भा व्याकुल प्राना। आगे आनि काठ उतराना।।
भयो काठ वह प्रान अधारा। बूड़त बहत सो ताहि सँभारा।।
जब वह काठ नियर भा आई। काल सरूप भयौ दुख दाई।।
करम हमार है पातर , को अब करै सहाय।
गहिर अहै मँझधार महँ, परेउ काल बस आय।।१७।।

यूसुफ मूरत हिये उरेखै। धरै ध्यान निज आगे देखै।।
करै बिलाप कहै दुख सारा। का मोहिं बिरह अगिन महँ जारा।।
देहु दरस औ आस पुरावहु। कबहुँ न मिसिर नगर कहँ आवहु।।
कटै[4] मोर दुख परसन पाऊँ। निसि बासर दुख रोय गँवाऊँ।।
जो मोहिं आसा देत न दाता। करत्यौं वहै दिवस अपघाता।।
जेहि दिन दरस न तोर बिसेखा। सूर के ठाउँ राहु मैं देखा।।
काहेक अब लहि जरत्यौं जारे। मरत्यौं वही दिवस बिन मारे।।
एक सपन दूजे सरग के बानी। किहेउ न तेहि आसा[5] जिव हानी।।
निस-दिन तोहि भरोस जिव राखौं। बार-बार बिनती यह भाखौं।।
जेहि बिधि सपन देखावहु, लायहु चित सो चित्त।
तेहि बिधि आनि जिआवहु, मरौं तोहि बिन नित्त।।१८।।

कबहूँ कहै पवन ते रोई। करै बिलाप अधीरज होई।।
मारुत सदा करहु परबेसा। फिरहु राति दिन देस बिदेसा।।
कवन ठाउँ जहँ तुम नहिं जाहू। काटहु मोर बिरह अधिकाहू।।
जाहु जहाँ वह प्रीतम[6] प्यारा। कहहु जाय दुख दुखद अपारा।।

पाठान्तर–१- ढीठ, २-लाहीं, ३-हुमाय, ४-करै, ५-असा, ६-पीतम।

कहौ कि सपन माहैं गहि बाहाँ। दिहेउ भुलाइ फेरि कस नाहाँ।।
दै धोका मोहिं मिसिर बोलायहु। तुम अजहूँ लगि लाल न आयहु।।
मैं जोऊँ नित बाट तुम्हारी। रहौं बंद महँ बिरह के मारी।।
केहि कारन अस बाचा कीन्ह्यौ। देस छुड़ायो सुधि नहि लीन्ह्यौ।।
नैहर तज्यौ न पायो तोही। तेहि पर अधरम[1] करम कर मोही।।
धृक जीवन पिउ प्रान बिन, धृक बिन धरम परान।
दुअ जग करिआ होय मुख, होय सत्त कै हान[2]।।१६।।

पाठान्तर–१-धरम, २-नूर अली की प्रतियों में इसके आगे 'षड्ऋतु वर्णन' है। जो इस प्रति में 'जुलेखा दशा खण्ड' के पश्चात् है।

ग्यारह यूसुफ मिस्र गमन खण्ड

मिसिर नगर आये बनजारा। यूसुफ संग साज अधिकारा।।
परी अहान मिस्र के देसा। सुना बखान सो रंक-नरेसा।।
मिसिर नगर बनजारा आवा। तेहि संग बालक रूप सोहावा।।
सो बालक बेंचै कहँ आना। देखि रूप हिय रहै न ग्याना।
बालक सौंह न जात निहारा। विधनैं आप सो रूप सँवारा।।
वह बालक जस रति-पति बारा। कै सोहाइ वह इन्द्र दुलारा।।
तेहि दिन कीन्ह तहाँ अस्थाना। भोर होत नायक बहिराना।।
खद नील यूसुफ लै गयऊ। तहँ नहान कहँ पैठत भयऊ।।
लाखन भीर भई तहँ भारी। जब यूसुफ तन-बदन उघारी।।

बहुत परीं मुरझाइ तट, भईं निपट अग्यान।
बहुत खरी तहँ रोवहिं, बहुत हिये अरमान।।१।।

लुंगी बाँधि नील के रंगा। गात गुलाब तें अधिक सुरंगा।।
खद नील महँ चुभकी लेई। सूरज प्रभा सलित छवि देई।।
जब वह करै केलि असनाना। सलिता जल जस केसर साना।।
अलक बार जल पर बिथुराने। अहि सावक सलिता उतराने।।
बारह कला विभाकर सोहा। मिसिर नगर सिगरौ लखि मोहा।।
कहहिं कि धन लुंगी कर भागा। होइकै बसन अंग जो लागा।।
नील-बसन तन सोहत कैसे। दिन-मनि धन अरधान्तर जैसे।।
कहहिं भाग धनि सलिता केरा। जहाँ बिहार करै हर बेरा।।
होइ अधीर नीर चहुँ तीरा। देखन हार सो अधिक अधीरा।।

धनि सलिता, धन घाट वह, जहँ यह करै बिहार।
पूर्व जन्म तप कीन्ह कुछ, पायउ गति निस्तार।।२।।

एक रूप औ लाखन डीठी। चहुँ दिसि डीठ मिलै जस पीठी।।
लाखन डीठि अंग पर परई। डीठि मूठ तें गुरुता हरई।।
कोटिन डीठ बदन सुकुमारा। यक यूसुफ जग देखन हारा।।
थाँमि न सकी भार सो भाई। डीठ भार कहँ अंग सहाई।।
सिगरौ नगर डीठ जब दीन्हा। अजगुत एक दई तब कीन्ह।।
मीन एक जस गिरिवर काढ़ी। यूसुफ ओट भई वह ठाढ़ी।।

तेहिके आड़ कीन्ह असनाना। औ मानुष जहँ तहँ अकुलाना।।
जब असनान समापत पावा। जिबरईल यूसुफ पहँ आवा।।
लै जोरा कैलास ते आये। सो यूसुफ कहँ आनि पिन्हाये।।

नारि-पुरुष यक संग मिलि, देखहिं रूप अनूप।
संका लाज न मानहीं, परी भँवर-जल कूप।।३।।

जल-बिहार कै बाहर आवा। जग बाउर होइ देखन धावा।।
नायक-जन सभ देहिं तरासा। देखन हार न छाँड़हिं पासा।।
गारी देहिं औ मारहिं नायक। कोउ न तजै संग सुख-दायक।।
भूलि गयउ घर बार सोहावा। नींद-भूख तजि दर्सन भावा।।
जब मालिक पहँ यूसुफ आवा। भा अचरज लखि बसन सोहावा।।
अजगुत बसन जाइ नहिं जाना। कुछ अलगाइ न ताना-बाना।।
जो-जो जोति सुरज अधिकाई। तो-तो रंग-बिरंग देखाई।।
सहस रंग होइ लहरैं लेई। चकृत बसन सो डीठ करेई।।
देखत बसन होइ मन बाउर। धन सरूप औ धन पहिराउर।।

पूँछा कहँ पावा बसन, जो यहि जग महँ नाहँ।
कहा भेजावा अलख मोहिं, जेहि कै दोउ जग छाहँ।।४।।

जोति अपार सूर्य तें भारी। अचरज करहिं सो बसन निहारी।।
जस सरूप वह विधनैं दीन्हा। तस अम्बर जो जाइ न चीन्हा।।
भानु तें अधिक सो जोति अपारा। तास दुकूल सीस पर डारा।।
सिर पर बसन तमामी सोहै। औ सिर पेच पाग लखि मोहै।।
औ-नौ-रतन भुजन पहिरावा। मोती माल हियें छबि पावा।।
दोऊ हाथ पहुँचीन सोहाई। हीरा लाल जवाहिर लाई।।
साज-सँवार सरूप सोहासन। लै कै चला चढ़ाइ सिंघासन।।
नायक देखि भीर अति भारी। चला बेग लै साज सँवारी।।
औ पाछे सभ बाजन बाजै। मधुर दुंदुभी सुन्दर गाजै।।

जेहिके रूप के देखत, सूरज होत मलीन।
अति सुन्दर गुन आगर, विद्यामान कुलीन।।५।।

बारह

यूसुफ विक्रय खण्ड

नायक सभै साथ चलि गये। लै सो चौक महँ ठाढ़े भये।।
लागे करै सरूप बखाना। यह बालक है इन्द्र समाना।।
तेज सूर तें अहै अपारा। राका ससि अस वह सुकुमारा।।
सागर सम वह गुरू सोभावा। गनपति सम वह चतुर सोहावा।।
विद्यामान जान सहदेवा। धरम सरूप जगत सुखदेवा[1]।।
सूर सपूत महा सग्याना। कुरी कुलीन सलज परधाना।।
परगट गुप्त सो दई सँवारा। इन्द्र प्रताप सो गुन अधिकारा।।
महिपति लच्छन तन महँ सोहा। सकल अंग लखि रबि-ससि मोहा।।
कबि पंडित जप-तप महँ पूरा। सिद्ध सुभाव स्वच्छ रन सूरा।।

बत्तिस[2] लच्छन पुरुष के, सो सोहै सभ अंग।
लहै बेद गुन आकर, जासों परै प्रसंग।।१।।

को यह जोग जगत महँ कोई। जो यूसुफ कर गाँहक होई।।
यह कर मोल देइ को पारा। कहँ अस कीन्ह धनी करतारा।।
जब नायक बहु कीन्ह बखाना। तब सुनि कै यूसुफ बिलखाना।।
कहा कि अस जनि बरनहु भाई। का जानौं कस होइ रिसाई।।
हौं सो दास यक अहौं निरासा। का बरनहु तुम औगुन दासा।।
हौं औगुनी पतित दुखियारा। चढ़ेउँ हाट तेहि पाप का भारा।।
पातख भरा औ पाप कमाना। तेहि कारन चढ़ि हाट बिकाना।।
जानहिं कुल गुन बेद हमारा। नायक हाथ बेंचि जिन्ह डारा।।
अनचिन्ह लोग का कवन भरोसा। भेद न जानहिं का तेहिं दोसा।।

आपन महिमा मोल हम, जानि लीन्ह तेहि बार।
जब बेंचा नौ दिरम कहँ, भाइन हमहिं निसार।।२।।

बार-वृद्ध बाउर नर-नारी। दरस काज भये फिरहिं दुखारी।।
नारि न करहिं पुरुष कै संका। बारी डरहिं न लोक-कलंका।।
एक पर एक लोग सभ धावहिं। नायक चलत पंथ नहिं पावहिं।।
जिन तिरियन कोउ छाँह न देखा। फिरहिं चौक महँ बाउर लेखा।।

पाठान्तर–१*- शेख और नूर अली की प्रतियों में यह अर्द्धाली नहीं है, २-'सहस' नूर अली की प्रति में है।

धन करता जिन्ह रूप बनावा। धन सो गुप्त यह बिदित सोहावा।।
रूपमान सभके मन भावै। जहाँ जाइ तहँ आदर पावै।।
बेद ग्यान गुन संपति लाजा। सभ पर छिन यह प्रगट बिराजा।।
रूपमान वह आप अकेला। वह चाहत है रूप सुहेला।।
धन वह अलख-अनूप चितेरा। चित्र-विचित्र सुमूर्ति चितेरा।।

रूप-सरूप अनूप जग, लहै भूप कहँ सोइ।
भूप रूप बिन कूप जल, जैसे खारी होइ।।३।।

फिर नायक गुन बरनै लागे। यूसुफ डरै हरख सभ त्यागे।।
औ नायक तें कहै सुजाना। अलख कोप तें बहु डर माना।।
कहौं कि एक सो दास कमीना। महादीन दूबर बल हीना।।
सो बेचहिं अब हाट चढ़ाई। मोल लेइ कारन सेवकाई।।
नायक कहै रीति यह नाहीं। लघुता लाइ न वस्तु बिकाहीं।।
आमिल दधि कहँ मीठ पुकारहिं। हम काहें अपने मुख हारहिं।।
यूसुफ कहा हीन मुख भाखहु। जिन अभिमान हिये महँ राखहु।।
सोहत अस्तुति रूप बखाना। ताकहँ जो नित-नित अधिकाना।।
नित-नित छीन होइ जो रूपा। ताकर गुन जिन गुनहु अनूपा।।
जो अस कहौ न तुम सुखदायक। तौ यह बात कहौ तुम नायक।।

सुत याकूब इसहाक के, वे सुत इबराहीम।
ता सुत यूसुफ बेंचिये, इब्न अमीन करीम।।४।।

जो यह बात कहहिं हम आजू। जाइ खोइ हम सरबस काजू।।
ठाढ़े होहिं रोम सुनि नाऊँ। नावहिं सीस चूँबि तोर पाऊँ।।
सुनतहि नबी के नाम सोहाई। हमहिं मारि तोहिं लेहिं छिनाई।।
परी नगर महँ धूम अहाना। को बेंचै को लेइ अयाना।।
कहहिं कि अहै नबी सुतबारा। को जगमहँ तेहि बेचन हारा।।
आपन बस्तु जो बेचै कोई। देइ बढ़ाइ न घटवै सोई।।
तेहितें काज जो चहौ हमारा। छन यक मौन होहु यहि बारा।।
तुव परताप काज हम होई। जनम-जनम दुख डारहु खोई।।
यूसुफ नबी मौन तब साधा। बहे आँसु लखि निज अपराधा।।

नर-नारी बालक वृधा, उठि धाये सुनि रूप।
राव-रंक जोगी-जती, सती रंक और भूप।।५।।

सिगरौ मिसिर उलछि कै धावा। राव-रंक कोउ रहै न पावा।।
आयउ पातसाह सुनि रूपा। भयउ अधीन देखि मुख भूपा।।
आये सचिव औ मीर अमीरा। लखे रूप सो सिद्ध सरीरा।।
रहेउ न मिस्र नगर महँ कोई। होइ गाँहक आवा नहिं सोई।।
जो जेहिके हुत सो लै आना। और कहाँ लह करौं बखाना।।
वृद्ध एक निरधन उठि धाई। पोला सूत वहू लै आई।।
कहहिं लोग सुनु बाउर माता। कहु केहि दरब तोर मन राता।।
लाख-करोर न नायक मानी। गाँछा सूत सो बाउर आनी।।
कहेस वृद्ध सुनु पुत्र अयाने। हौं गाँहक भई सूत के आने।।
यूसुफ के गाँहक महँ आऊँ। जुग-जुग नाम नेक मैं पाऊँ[1]।

मोल कीन्ह अस नायक, लखि गाहक अधिकार।
पातसाह मुख मोरा, को दूसर संसार[2]।।६।।

जो मोतिन की लावै ढेरी। सो यूसुफ तन देखै हेरी।।
यूसुफ तोल[3] सो दस गुन रूपा। औ चौगुन सोना सुन भूपा।।
तेहिके तोल भर मानिक हीरा। रतन पदारथ आनै तीरा।।
सुनि कै मोल हटा सुलताना। दूसर कोउ न तब समुहाना।।
सचिव जाय घर कीन्ह बखाना। दरब नाहिं का करिय अयाना।।
तब धाई सें कहा बोलाई। अरथ दास कर बरनि सुनाई।।
जेहि कै अवस्था जो कुछ अहा। तेइँ सभ मोल जाइ कै कहा।।
करि-करि मोल लोग सभ हारा। सभै मिस्र तेहि देखन हारा।।
कहेसि कि जो तुम आग्याँ पाऊँ। लै दुहिता वहि दास देखाऊँ।।

कहा सचिव लै जाहु तुम, देखहु दास अनूप।
कोई नारि न मिस्र की, जो न गई सुनि रूप।।७।।

धाई कहा दास यक आवा। सिगरे मिसिर जो विष बगरावा।।
दास रूप लखि देस लोभाना। घर-घर नगर सो होइ बखाना।।
जेइँ देखा तेइँ सुधि-बुधि खोवा। मिसिर नगर महँ बिजया बोवा।।
कस वह दास जासु जग लोभा। चलहु देखिए ताकर सोभा[4]।।

पाठान्तर–१*- यह चौपाई अली की प्रति में नहीं है, २-शेख और अली की प्रतियों में सेन्सार और नूर अली की प्रति में संसार पाठ है। परन्तु शुद्ध पाठ लेनहार जान पड़ता है जो उर्दू लिपिकारों की असावधानी से अशुद्ध लिखा गया है, ३-नूर अली की प्रति में मोल पाठ है। ४*- नूर अली की प्रति में यह अर्द्धाली नहीं है,

तब सो चढ़ी चँदोल जुलेखा। हरै रोग ओषद जब देखा।।
देखा भीर चौक महँ भारी। अध ऊरध नहिं मिलै निहारी।।
यक पर यक मानुष है छावा। यूसुफ यक जग गाँहक आवा।।
कहै कि केहि विधि देखौं धाई। दासरूप जो चौक बिकाई[1]।।
तब[2] धाई गजदार बोलावा। सो मैमन्त हरित लै आवा।।
लखि यूसुफ के रूप कहँ, कबहुँ न नैन अघाहिं।
जो-जो देखहिं निकट होइ, तो-तो अधिक अकुलाहिं।।८।।

हस्ती पर मेघम्बर डारा। चला पेलि कै लै गजदारा।।
चहुँ दिसि लोग पुकारहिं धाई। गज मैमन्त न काहु ओनाई।।
तबहूँ लोग कहा नहिं मानहिं। हस्ती त्रास हिये नहिं आनहिं[3]।।
जब हस्ती सिर सूँड़ लगावा। भागे लोग पंथ तब पावा।।
तेहि हस्ती पर राजकुमारी। धाई एक सँभारन हारी[4]।।
भरि नैनन जब दास निहारा। भई अचेत आह यक मारा।।
गयउ रूप वह हिये समाई। मन हरषित तन मुरछा आई।।
बहुत दिनन से सुधि बुधि गई। देखत दरस सो परगट भई।।
मन महँ कहै सपन मैं देखहुँ। कै सौंतुख वह रूप बिसेखहुँ।।
देखत नैन सिराने, हिय हुलसेउ लखि दास।
यह अचरज जो बाँचै, भयउ न मिरुत हुलास।।९।।

घरी चारि पुनि रही अचेता। हरी साँस, तन होइगा सेता।।
धाई देखि सो व्याकुल भई। बार-बार सो बलि-बलि गई।।
लै गुलाब तन पर ढरकावा। बैद कस्तुरी ताहि पियावा।।
कहै कि ऐ मोरी प्रान अधारी। काहे लागि भयहु बेसँभारी।।
देखैं ताहि रंक औ रावा। काहे लागि तोहि मुरछा आवा।।
सत्त सरूप अहै उजियारा। रहै न ग्यान देखि मुखबारा।।
रूप देखि सभ रहस करेहीं। तुम कहँ का उपजेउ दुख देहीं।।
सभ सुधि आइ देहँ परगासी। भई सुचित छिन चेत बिनासी।।
मरै-जियै झुकि-झुकि परै, मुख प्रीतम कर देख।
चीन्हि-चीन्हि मुख हिय धरै, वहै रूप औ रेख[5]।।१०।।

पाठान्तर-१- नूर अली की प्रति में 'दास रूप जेइ तै बिसराई' पाठ है जो अशुद्ध मालुम होता है। २- बालक तरुन न बरजा मानहिं। वृद्ध आप कहँ तरुन सो जानहिं।। ३- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है, ४- नूर अली की प्रति में 'औधाई धर हरिया सारी' पाठ है,

भावसाम्य- ५- अमी हलाहल मदभरे, स्वेत स्याम रतनार।
जियत मरत झुकि-झुकि परत जेहि चितवत एकबार।। -रसलीन

धरी चारि पर चेत सँभारा। फिर नैनन भरि रूप निहारा।।
भै बाउर चाहेसि बिलखाई। हस्ती पर तें देइ गिराई।।
अंग-अंग हुलसा सुख पावा। हिये आइ सुख आनंद छावा।।
मिलै जो बिछुरा प्रान पियारा। सो जानै दुख-सुख व्यौहारा।।
धाई गले लाइ तब रोई। यही दास जेइँ सुधि-बुधि खोई।।
यही सचिव जेइँ सपन देखावा। यहि मूरति मोहि मिसिर ले आवा।।
तीन बार मैं सपने देखा। लिखे हृदय महँ नख-सिख रेखा।।
यहियँ कहा मोहिं तिसरी बारा। मिसिर नगर महँ दरस हमारा।।
मो कहँ मोल मिसिर लै आने। अन्त आप तेइँ हाट बिकाने[1]।।
न्यौछावर का सारों धाई। जेहि परताप प्रान मैं पाई।।

तुव चरनन पर धाई, करौं प्रान बलिहार।
जो मोहिं मिसिर ले आवा, पावा प्रान पियार।।११।।

जो मरि जाति कलपि के माथा। यह सो रतन कस आवत हाथा।।
जस तैं कही बँधाई धीरा। तस हरि लीन्ह बिरह कै पीरा।।
जग देखै वह रूप सोहावा। मोरे हिये अगिन जस लावा।।
सभ जग चन्द्र सुधाधर जानै। खाइ चकोर अगिनि परमानै।।
दीपक जोति लखै सभ कोई। दुख पतंग पर जो कुछ होई[2]।।
जो पतंग पर बीतै धाई। तेहि हियतें पूँछहु दुख जाई।।
मैं पतंग वह दीपक बारा। भइउँ न छार सो बहुत सँभारा।।
मैं मधुकर वह केतिक बासा। दिहेउँ न प्रान बास की आसा।।
सभ नैना नहिं यक सम धाई। देखि रूप हम नैन समाई।।

देखै सभ जग चन्द कहँ, सीत करै चहुँ ओर।
प्रेम प्रीति की रीति से, चिनगी चुगत चकोर।।१२।।

धाई कहा दीन्ह करतारा। करहु हिये महँ चेत सम्हारा।।
कौतुक होइ मिसिर के माहीं। कोउ काहू कहँ बाजत नाहीं।।
पै सुनि मोल सभै जग हारा। मलै हाथ सिंगरौ संसारा।।
सुनि कै मोल साह फिरि गयऊ। गाँहक सभ निरास मन भयऊ।।
जस अमोल नग बेंचै नायक। तस पुनि मोल करै सुख दायक।।

पाठान्तर–१०– शेख और अली की प्रतियों में-'आप आइ तेहि हाट बिकाने' पाठ है। २०– शेख एवं नूर अली की प्रति में-'लघु पतंग पर जो दुख होइ। और अली की प्रति में-'लघु पंतग पर जो कुछ होई' पाठ है।

जो जेहिके हुत संपति सारी। देहिं, न लेहिं चतुर बैपारी।।
यूसुफ कर गाहँक संसारा। सुनि कै मोल नगर सभ हारा।।
दरब नाहिं जो ताहि बेसाहहिं। तेहि कारन देखन चित चाहहिं।।
आज रूप यह हाट बिकाई। काल्हि कोऊ कत देख न पाई।।
मिसिर नगर महँ होइ अब, काकर दाहिन भाग।
जेहि घर मानिक जाइ यह, जग बाउर तेहि लाग।।१३।।
कहै जुलेखा सुनु सुखदाई। यह सभ मोल थोर है थाई।।
जहँ लह जग महँ दरब भँडारा। सो सभ थोर दास अधिकारा।।
यह नायक है निपट अयाना। जेहि यूसुफ कर मोल न जाना।।
यह सभ देउँ प्रान बलि देऊँ। यहि बट पारहिं मोल सो लेऊँ।।
पै का कहौं सो अचरज धाई। करुना रस उपजेउ है आई।।
अस मूरति कहँ दास बनावा। मोल कलंक सो ताहि लगावा।।
यह सुलतान छत्रपति भारी। जग सुलतान करौं बलिहारी।।
का अस चूक भई करतारा। किये दास, अस इन्द्र दुलारा[1]।।
धाई कहा धरौ मन धीरा। हेरहु लाल जवाहिर हीरा।।
दइयँ कीन्ह संजोग यह, हेरहु पीतम मोल।
आनि बिकाना हाट चढ़ि, ऐसा रतन अमोल।।१४।।
रूप देखि तेहि तृषा बुझाई। नैन ओट होइ जात न धाई।।
हिये लाज मन हरष बढ़ावै। अस चरित्र नहिं चित महँ आवै।।
मोर प्रेम जो दई बढ़ावा। कै सो दास प्रीतम कहँ ल्यावा।।
पहिलें मोल मोहि ले आई। तब आपन उन्ह मोल कराई।।
अब ईछन नहिं कहा करेहीं। बिकल प्रान नहिं धीर धरेहीं।।
इन्ह नैनन कहँ सगुन सलोना। बुझै न प्यास देखि मुख लोना।।
जैसे समुन्द जलंधर होई। रहै पयोधि पियासा सोई।।
जस तुरंग मुहँ जोर हठीला। जस मैमन्त हस्ति गरबीला[2]।।
नैन ओट होइ जात नहिं, करहुँ सो कवन उपाइ।
छिन बिछुरें जल मीन बिन, डरौं न प्रान नसाइ।।१५।।

पाठान्तर–१०- नूर अली और अली की प्रति में 'बिके आनि चढ़ि हाट बेचारा' पाठ है,

भावसाम्य– २,३- भावसाम्य की दृष्टि से बिहारी का निम्नलिखित दोहा उल्लेखनीय है-

लाज लगाम न मानहीं, नैना मो बस नाहिं।
ये मुहँ जोर तुरंग लौं, ऐंचत हू चलि जाहिं।।

तस ये नैन न कहा कराहीं। आँकुस-बाग सो मानहिं नाहीं[1]।।
लागी कहै डरौं मैं धाई। कोउ यह रतन मोल लै जाई।।
केहि कर भाग सो दाहिन होई। लेइ जो मोल प्रान यह सोई।।
केहि कर करै पाप विधि हानी। जो रे सुनै मुख अम्बृत बानी।।
को जग महँ अस होइ सुभागा। जेहिके हियैं प्रान यह लागा।।
केहिकी सेज पर बैठे जाई। केहि कर देखि हिया हुलसाई।।
केहिकर कँवल सो करै बिकासा। जेहिके घर रबि करै निवासा[1]।।
केहिकर भवन होइ उजियारा। यह दीपक प्रगटै जेहि बारा[2]।।
केहिकी रैनि होइ भिनसारा। आदित उदित करै जेहि बारा।।
केहिकै प्रान सिरावै छाती। हुलसि-हुलसि लै लावहि छाती।।
कहाँ होइ आदित उदित, कमल हिया बिहसाइ।
मधुकर सम पूजै दसा, पदुम बासना पाइ।।१६।।

लागेउ मोल चौक महँ होई। आपन बित्त कहै सभ कोई।।
कोउ कहै देउँ दून मैं सोना। दस[3] गुन रूप कहै कोउ लोना।।
कोउ दस सहस ऊँट पुनि देई। सहस तुरी कोऊ मोल करेई।।
कोउ कहै चौगुन मृगमद देऊँ। कोउ कहै अति केसर दै लेऊँ।।
कोउ कहै चौगुन अंबर सारा। कोउ कहै पँचगुन घनसारा।।
कोउ बीस गुन पाट बतावै। कोउ बीस गुन अगर लगावै।।
जो जेहि के हुत सो लै आवा। आपन धन सभ बरनि सुनावा।।
नारि एक हुत रौजा नाऊँ। हतेउ साह के घर महँ ठाऊँ।।
तेइ सो आइ नायक से कहा। यह कै तोल जवाहिर अहा।।
सुनि यह बात हटा सभै, गाहँक आस निरास।
रही सो एक जुलेखा, जाकहँ लिखा सो दास।।१७।।

हुत कन्या अमलाक सोहाई। हबस देस तें धन लै आई।।
डेवढ़ा रतन कहा पुनि सोई। जेहितें हटे गाँहक सभ कोई।।
सुनि डेवढ़ा नायक चित चहा। दून तोल तब धाई कहा।।
धाई कहा चलहु घर माहीं। अबहीं मोहिं भरोसा नाहीं।।
सचिव दरब कै आग्याँ देई। पातसाह तें आयसु लेई।।

पाठान्तर–१- शेख और अली की प्रतियों में 'प्रकासा' पाठ है, २०– शेख और अली की प्रतियों में 'यह दीपक बारै जेहि बाता' पाठ है, ३-शेख और अली की प्रतियों में इसके स्थान पर बीस का प्रयोग है।

मक्कु सुलतान कि कोउ अमीरा। लेइ मोल सुठि होहु अधीरा।।
तब धाई हस्तीयै फिरावा। लै गजदार मँदिल कहँ[1] आवा।।
धाई आइ सचिव तें कहा। दास लेइ कै लालच महा।।
बोला सचिव गात का मोरा। जेहि तें पातसाह मुख मोरा।।
लै अग्याँ सुलतान कै, माँगहु प्रथमहिं जाइ।
लेहु दरब जित चाहौ, नग अमोल अधिकाइ।।१८।।

धाइयँ कहा दरब तुम लेहू। जाइ मोल नायक कहँ देहू।।
गयउ सचिव सुलतान के पासा। आग्याँ होइ लेउँ मैं दासा।।
मोकहँ दई न सन्तति दीन्हा। जेहि ते रहै जगत महँ चीन्हा।।
मोर पुत्र वह साह कै दासा। आयसु होइ जाहुँ वहि पासा[2]।।
कहा साह जिन बिलंब करेहू। पावहु दरब दास कहँ लेहू।।
दास जोग नहिं बालक सोई। लेइ ताहि जेहि पुत्र न होई।।
तुम सो पुत्र मम सचिव सोहावा। यह सुमंत्र मोरे मन भावा।।
कहा सचिव दै रतन अपारा। लेइ आपकी दासी बारा।।
तब नायक कहँ नारि बुलावा। सुनि गाहँक बेगहिं चलि आवा[3]।।
भेजा नारि अनूप नग, कौड़ी पोत समान।
कहा लेइ वह नायक, जेहिं न रहै अरमान।।१९।।

डिब्बे भरे लाल औ हीरा। भेजा सभ नायक के तीरा।।
जो नग कबहुँ न नैननि देखा। सो नग कौड़ी मोल बिसेखा।।
पेटी खोलि औ खोलि पिटारा। देहिं ढेर कर मानिक सारा।।
जब नायक तेहि लखि मनभावा। तब दूसर उन्ह और भेजावा।।
एक-एक लाल जवाहिर देखा। जोति अपार सुरज की लेखा।।
पुनि यूसुफ कहँ तुला चढ़ावा। तेहिकर दून जवाहिर पावा।।
यूसुफ भारी भयउ सोहावा। तखरी ऊँची देखि लजावा।।
रतन पदारथ रहा न कोई। का अब देहिं रहे मुख जोई।।
भयउ अजाचक नायक सोई। जो अस देइ सो गाहँक होई।।
होत रहै बलिहारी, निसि-दिन निरखै रूप।
यूसुफ नबी न देखा, आनन नारि अनूप।।२०।।

पाठान्तर-१*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है। २*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है। ३*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है।

पाप की नीठि हिये पहिचानी। रहै छिपाये डीठि निमानी[१]।।
यूसुफ तें पूँछा बरनारी। अरथ भेद आपन कहु सारी।।
तब यूसुफ सभ बरनि सुनावा। जस कुछ दुख भाइन तें पावा।।
जेहि विधि परा कूप महँ सोई। जेहि विधि तात तें आय बिछोई।।
पूँछा दिन औ माँस सोहावा। जेहि दिन कूप माहिं दुख पावा।।
गिना जुलेखा सो दिन माँसा। तेहि दिन ताहि सपन परगासा।।
कहा जुलेखा धन्य गोसाईं। धन्य पेम जग सिरजेउ साईं।।
जेहि दिन यूसुफ कहँ दुख दीन्हा। तेहि दिन मोहिं वियोगिनि कीन्हा।।
मोर मन सपन माँहिं जस मोहा। जनम भूमि ते ताहि बिछोहा।।
आप प्रेम होइ कहै सँदेसा। आप फिरावै देस-बिदेसा।।

धन्य प्रेम विधनैं रचेउ, धनि सो पेमी प्रान।
उहाँ यूसुफ कहँ दीन्ह दुख, इहाँ मोर सुखहान।।२१।।

वह, वहकहँ चाहै दिन-राती। जस चातक औ बूँद सेवाती।।
वह चकोर वह चन्द समाना। वह पतंग वह दीपक जाना।।
वह मधुकर वह अम्बुज राता। वह दिनेस औ वह जलजाता।।
उन्हँ कबहूँ भूलेहुँ नहिं देखा। रहै सदा मन सुचित सरेखा।।
निसि-दिन करै जाप औ जोगू। एकौ घरी न भावै भोगू।।
करै तपस्या विधि अधिकाई। निसि-दिन रहै अलख लौ लाई।।
वहके हियें दई कै त्रासा। राखै सदाँ दया कै आसा।।
सँवरि तात औ आपन दोखू। रोदन करै औ माँगै मोखू।।
ऐ दयाल! जिनि औगुन देखहु। करहु मोख जिनि दोष विसेखहु।।

जस तुम लीन्ह उबारि मोहिं, काढ़ि कूप तें ल्याइ।
तस तुम सरन पिता अहैं, यक दिन देहु मिलाइ।।२२।।

१→

पाठान्तर–१→– दोहा संख्या २२ के नीचे 'यूसुफ ते पूँछो बरनारी। इत्यादि चौपाइयाँ नूर अली की प्रति में लिखी है।

फुलवारी खण्ड

हती जुलेखा कै फुलवारी। जनु कैलास तें लीन्ह निसारी।।
जहँ लह फूल औ फल जगमाहीं। सो सभ पूरन सीतल छाहीं।।
बैठक तहाँ अनूप सँवारा। फूले फूल उनै कै डारा।।
पुहुप बाटिका सुन्दर सोहै। पंछी पतंग अनेगन मोहै।।
औ अनूप सागर तहँ साजै। बारहदरी अनूप विराजै।।
सागर एक सो छीर भरावा। दूसर मद पियूख रस भावा।।
जहँ लह नारि की सँखी सहेली। नैहर औ ससुरार की चेली।।
भूषन-बसन सिंगार बनाई। औ सुगन्ध अरगजा लगाई।।
सभ कहँ भेजि दीन्ह फुलवारी। औ कहि दीन्ह सँखिन से नारी।।

हाव भाव छबि चलिता, औ कटाच्छ मुसुकान।
गुन आपन सभ प्रगट करि, मोहै मूढ़ सुजान।।१।।

चहुँ दिसि पंछी करहिं कलोला। सारद सुवा हंस पैरोला[1]।।
कहुँ घोखहिं पिक चातक मोरा। कहूँ विहंगम कहूँ चकोरा[2]।।
करै लता पर कहुँ सुख केली। एक पीउ औ सात सहेली[3]।।
कहुँ फूलन पर गुल दुम मोहै। हर-हर लता लाल मुहँ सोहै।।
कहूँ जुराफा जुग फहिराही। कहुँ अकेल ककनूँ देखराही।।
कहुँ पाँडुक कहुँ फिरहि परेवा। कहुँ स्यामा कहुँ बोलै हरेवा[4]।।
कहुँ चकई कहुँ महर पुकारै। कहुँ सारस जग मुदित निहारै।।
कहुँ हुमाइ छाया सुख देई। घाघस कहूँ उचार करेई।।
कहुँ फुलचरी औ खंजन जोरी। कतहूँ केलि[5] करै कहुँ रोरी[6]।।

गूँजहिं भँवर भिरंग अलि, लेहि फूल कै बास।
जल पंछी क्रीड़ा करैं, करि सागर में बास।।२।।

मैं यूसुफ कहँ देहुँ भेजाई। ताकर मन मोहौ सभ जाई।।
राग-रंग औ छबि दिखराई। नैन कटाच्छ अनेक सिखाई।।
मन मोहै सो सुघर प्रवीना। तेहि यूसुफ सेवा महँ दीन्हा।।
जेहि सुनारि पर मोहित होई। मोतें कहै भेद पुनि सोई।।

पाठान्तर–१,२,३,४,५ चौपाइयाँ नूर अली की प्रति में दोहा सं० २ गूँजहिं भँवर के नीचे लिखी है। ६–शेख और अली की प्रति में 'गीत' पाठ है।

सो यूसुफ कहँ देउँ सोहाई। दोऊ सदाँ रहहिं यक ठाई।।
गई तहाँ सभ सखी सहेली। यूसुफ मन मोहै अलबेली।।
तब यूसुफ ते कहा बोलाई। पुहुप बाटिका देखहु जाई।।
मन उदास कहँ करहु हुलासा। करहु जाइ तहँ भोग बिलासा।।
यूसुफ पुहुप बाटिका आवा। बार द्वार तिय बन्द करावा।।
देखेउ बाग अनूप चलि, फूले फूल सुरंग।
बास लेहिं औ सुख करहिं, पंछी भौंर-भिरंग।।३।।

देखा जाइ महाफुलवारी। सुख सोभा सोहै अधिकारी।।
तहाँ नारि सभ, रंग-बिरंगा। हरियर पीत औ स्याम सुरंगा।।
बीनहिं[1] फूल औ डार ओनाई। राय मुनी कै झुंड सोहाई।।
एक-एक तें सुघर सोहाई। कोउ फूल कोउ फल लै आई।।
कोऊ अरगजा लावै नारी। कोऊ पान, कोऊ लौंग सुपारी।।
कोउ यूसुफ के चाँपै पावा। कोउ व्यंजन लै पवन डोलावा।।
कोऊ बीन, कोऊ चंग बजावै। कोउ नाचै, कोउ राग सुनावै।।
सारिन्दा औ स्रोद सोहावा। जल तरंग परगनू बजावा।।
कोउ कानून बाँसुरी भावै। ढोल पखावज सुघर बजावै।।
डफ बरबत सारंगी, अम्बिरती सुर नाइ।
मन्दिर तोर रबाब पुनि, स्रोद बीन करनाइ।।४।।

कोउ कटाच्छ करि मुरि मुसुकाई। बार-बार आँचर फहराई।।
कोउ मुगधा होइ लाज लजाई। कोउ नवोढ़ा भाव देखाई।।
कोऊ अगम छाति जोबना। बैस-सन्धि लज्जा पूरना।।
कोई भूखिता जोबन अँगुराता। कोई ग्यात कोई अग्याता।।
कोई नवल वधू रस भरई। कोऊ संपुट ससहर पुट करई।।
कोइ बिदग्धा बचन सुनावै। कोइ गर्विता भाव दिखावै।।
कोइ संध्या होइ मान करेई। कोइ बिरहित पतिका छबि देई।।
कोइ अवन्त पतिका सुखकारी। कोइ विप्रलब्धा मतवारी।।
कोइ सुरतान हिये डरखाई। कोइ उदित जोबन अधिकाई।।
कोइ मध्या कोइ प्रौढ़ा, कोइ मुदिता कोइ मान।
कुलटा ऊढ अनूठा, औ बालक सज्ञान।।५।।

पाठान्तर--१- शेख और अली की प्रतियों में 'सो याई' पाठ है, जो अशुद्ध जान पड़ता है।

कोई जाही जूही लै आवै। काहुहिं बेल चमेली भावै।।
कोई गुलाब तोरै जमुहाई। चुट-चुट चुटकी देत सुहाई।।
कोई सुदरसन के रंग राती। कोई सेवती के रस माती।।
कोउ चंपक कोउ केतकि भावै। काहू कहँ मालती सुहावै।।
कोऊ सुरज मुखी कहँ देखै। रहै सो यूसुफ रूप बिसेखै।।
कोउ गुड़हर कोउ करना भूली। कोउ लखै दाऊदी फूली।।
कोउ सदवर्ग जाफरी ल्यावै। कोऊ कदम कोउ कूजा भावै।।
कोई नीलकंठी लखि मोहै। काहू फूल चाँदनी सोहै।।
कोइ नरगिस कोई संबुल चाहा। कोउ केसर नागेसर लाहा।।
कोइ लाला नाफरना भावै। काहुहिं बाबूना सुख पावै।।

मौलसिरी बीनत फिरै, कोई हार सिंगार।
कोऊ फूल कोऊ कंटक, डारेउ आँचर फार।।६।।[1]

कोउ अनार कोउ कँवला लिये। कोई संतरा चित दिये।।
कोई बादाम अंगूर सँभारी। कोई नरियर कोई लौंग सुपारी।।
कोई तूत अमरूत सुहावै। कोई कटहल बड़हल मन भावै।।
कोई आँब कोई जामुन कारी। कोई आत खिरनी सुखकारी।।
कोई नासपाती खूबानी। कोई कैलास अँजीर लुभानी।।
कोई तेंदू कोई तुरज करौंदा। कोई बिही कोई सेव कलौंदा।।
काहू कहँ पनियाला भावै। कोई कमरख कोई बेल सोहावै।।
कोई बेर आडू लै दाना। कोई पिस्ता फालस मनमाना।।
कोई केला, कोई दाख छोहारा। कोई अखरोट चिरौंजी झारा।।

कोई अम्बृत पायउ निकट, कोई दूर उतंग।
कोई भूल रहे निरखि, इन्दायन के रंग।।७।।

गाइ मलार मेघ बरसावहिं। दीपक गाइ अगिनि परचावहिं।।
भैरो कोमल करै पखाना। सिरी राग पर नाग लुभाना।।
मालकोस पर मिरिग बिमोहैं। सुनि हिंडोल पंछी रस सोहैं।।
दिन भैरों टोडी आसौरी। भैरवी, नट, नाटक औ गौरी।।
सारँग सिरी सोहनी सोहै। ललित बिलावल मचल बिमोहै।।
निसि कहँ मालकोस कल्याना। एमन मदन हमीर अड़ाना।।

भावसाम्य- १- उपर्युक्त वर्णित पुष्पों का उल्लेख मलिक मुहम्मद जायसी भी 'पद्मावत' के 'मानसरोदक' खण्ड में पद्मावती के सहेलियों के लिए किया है।

सोरठ औ हिंडोल कंधारा। रामकली, देसाख, केदारा।।
नवल विभास, देवगिरि मोदू। धनासिरी गुनकली कमोदू।।
रूप मंजरी गौर बसंती। दीपक मेघ मालव दमयंती।।
परच भाग खम्माच पुनि, जाजवन्ती अस रीत।
ए रागन की भारजा, मंगल नाटक गीत।।८।।

यूसुफ कछू हिये नहिं आना। मोहित भई नारि अग्याना।।
कहा कि का तुम करहु अयानी। भूली फिरहु भेद नहिं जानी।।
अपने हाथ से साजि पखाना। पूजहु ताहि सो अलख समाना।।
तुम महँ सकति अहै बहु तेरी। वह असक्त आसा जेहि केरी।।
हम तेहि टूक-टूक करि डारहिं। छिनहिं सँवारहिं छिनहिं बिगारहिं।।
अस बाउर नहिं पूजहिं सोई। विविध अविद्या ग्यान न होई।।
काहे न पूजहिं अलख सुहेला। अकल अतात अनाथ अकेला।।
दीनदयाल दुखी किरपाला। घट-घट व्यापक अज्ज अकाला।।
अस सहि कहँ देहिं भुलाई। पूजहिं पाहन, सीस चढ़ाई।।
पाहन से लाहन चहै, साहंसाह भुलाइ।
बाउर मनुष अनैन कहँ, एकौ जानि न जाइ।।९।।

अस उपदेस कीन्ह बैठारी। भंई दीन मुहँ सो सभ नारी।।
देव-भूत सभ गयउ भुलाई। साँईं की सेवा मन भाई।।
सभ निसि ताहि सुपंथ बतावा। मुक्ति-मंत्र सभ सँखिहिं पढ़ावा।।
गयउ भुलाइ कोइ सुखकेली। लागीं करै सुजाप सहेली।।
भोर होत तहँ आइ जुलेखा। जप-तप महँ दासिन कहँ देखा।।
बैठ पाट पर गुरु सुख बासी। अध बैठीं सभ चेली दासी।।
हँसि कै नारि कहत अस भयऊ। कीट भिरंग रंग निरमयऊ।।
जो कुछ परै लोन महँ आई। सो सभ पिघलि लोन होइ जाई।।
निज गृह कीट भृंग लै जाई। आप रूप कै तेहि बहराई।।
कीट-भिरंगी होत ज्यों, करत सो निज अनुहार।
मोहि गईं तस मोहनी, मोहन रूप निहार।।१०।।

वह मोहै कहँ तुमहिं पठाई। मोहित भइहु आप तुम आई।।
जस कोउ प्रहत चलावै नारी। उलटि परै तेहि पर यक बारी।।
तस तुम्हार भये उलटे टोने। उलटि परे वै टोने लोने।।
बरी अलख यूसुफ कर अहई। प्रहत जोर ताकहँ सभ चहई।।

तुम सभ भयउ दास कै चेली। भूलि गइउ सभ भाव सहेली।।
यूसुफ रंग भयउ रतनारा। लाग जो सभ तिरियन कहँ प्यारा।।
कहा कि सभ दासी औ चेरी। तेहिके सौहँ लखहु मुख हेरी।।
का औगुन हम कीन्ह तुम्हारा। नहिं दासी सम प्यार हमारा।।
दासी देखि मुदित मन भयऊ। मुख हमार कस विष होइ गयऊ।।

रूप-रंग राउर कछू, भयउ अधिक जो आज।
काहू के रँग रचि गये, हमसे मानहु लाज।।११।।

कहै नारि सुनु प्रीतम पीऊ। कहौ बात जो चाहत जीऊ।।
यूसुफ कहा जो मानहु नारी। दुम्बे देहु चरावन सारी।।
दास तुम्हार करौं कुछ कामा। जेहितें होइ मम दुख बिसरामा।।
गोफन एक देहु बनवाई। रहौं दिवस भर करत चराई।।
सुनि यह बात सो भई हुलासा। गोफन साजि बोलि निज पासा।।
कलावतू कर गोफन साजा। हीरा मोती अधिक विराजा।।
सोने कर झुन-झुना सँवारा। मोती कै झालर झनकारा।।
सो गोफन यूसुफ पहँ[1] आई। चाँदी के गोटे ढलवाई।।
सो गोटे वह दिये बहाई। लै गोफन निज हाथ फिराई।।

कलाबतू कर गोफन, जरे सो मोती लाल।
यूसुफ कर सोहै महा, मोहै बिरहिन बाल।।१२।।

फुलवारी लग रमना साजा। अति सुन्दर वह सदन बिराजा।।
चुनि-चुनि सुन्दर दुम्बे ल्याई।। सोने सींग औ खुरै मँढ़ाई।।
कलाबतू बानात मिढ़ाई। मोती कर झालर तहँ लाई।।
सो दुम्बे की पीठ ओढ़ावा। औ घुँघुरू सभ कहँ पहिरावा।।
सोहै कंचन घंटि सोहाई। सभ दुम्बन के गरें पिन्हाई।।
सो दुम्बे यूसुफ कहँ दीन्हा। दास अनेक सो तेहि सँग कीन्हा।।
सभ तन तास बादला सोहै। यूसुफ संग देखि जग मोहै।।
सोने मँढ़े साज सभ साजे। दीन्ह मँगाइ सो तुरकी बाजे।।
कहा तुरी पर होहु सवारा। लेहु दास औ सेवक सारा।।

सो रमने महँ जाइकै, औ दुम्बै लै संग।
करहु चराइ दिवस तहँ, बैठी पाट पर जंग।।१३।।

पाठान्तर—१-तीनों प्रतियों में-महँ वा मुहँ पाठ है जो अशुद्ध जान पड़ता है।

चौदह जुलेखा वासना खण्ड

दिन दुइ चारि तहाँ चलि गयऊ। लखि रमना मन मोदित भयऊ।।
सो रमने चलि गई जुलेखा। करि-करि साज अनेकन भेखा।।
तब यूसुफ मन भयउ उदासा। दीन्ह छाँड़ि रमने कर बासा।।
जब यूसुफ कहँ बहुत सतावा। बार-बार निज प्रेम जनावा।।
मैं तोहिं देखि सपन महँ मोही। आइउँ मिसिर स्वदेस बिछोही।।
यूसुफ कहा सुनहु मम बाता। जिन तुम करहु प्रेम रँग राता।।
जेइँ जग महँ मोपर चित लावा। सो दुख छाड़ि न सुख निरमावा।।
प्रथमहिं माता मोपर मोही। सुख नहिं देखा गई बिछोही।।
बहुरि फुफू मोपर चित लावा। सो मरि गई न सुख निरमावा।।

बहुरि पिता चित लाइकै, रोये मो कहँ खोइ।
मोरि प्रीति बछनाग है, जो कीन्हा सो रोइ।।१।।

वह सुनारि प्रीतम रँग राती। भयउ न कोइ जतन हिय साँती।।
कोटि जतन कै हारी सोई। सौंह दिस्टि चितयउ नहिं सोई।।
तब धाई ते भेद बखाना। विधनहिं घर महँ प्रीतम आना।।
पै मोरी ओर न देखै सोई। कहौ चैन चित कैसे होई।।
तैं धाई मोरी प्रान अधारी। तोहि छुट और नाहिं हितकारी।।
जेहि सभ कीन्ह सो मो पर दाया। तस अब करहु सो इतनी माया।।
जेहिते सौहँ लखै मोरि ओरा। दुख वियोग कर होइ बहोरा।।
मै तो सभै जतन कै हारी। कैसहुँ लखै न नैन उघारी।।
जब मैं सौंह लेउँ बैसारी। रहै चरन की ओर निहारी।।

लिखै सो करके नख सेंती, नित पग के नख सोइ।
दरस परापत धाई, कहौ सो कैसे होइ।।२।।

मैं ताकहँ देखहुँ निरथाई। पै सो हिये कै प्यास न जाई।।
जब लह लखै न दिस्टि उठाई। तब लह बिरह न आग बुझाई।।
नैन मूँदि कै बोलै बाता। कबहूँ न लखै सौहँ हम गाता।।
रहै सदा यक मन्दिर माहीं। मोरे-सौहँ वह देखै नाहीं।।
दहुँ साँवरि दहुँ अहै कि गोरी। कैसें धरै धीर मति भोरी।।
जब सो चारि चख होइ सोहावा। तब दुख मिटै जो पाप कमावा।।

अब कुछ करौ दया चित लाई। मोरी ओर देखै सुखदाई।।
सत्त नाहिं मैं देखन जोगू। दासी करहिं दया बड़ लोगू।।
तब धाई मत कहा बिचारी। देहु दरब तब लखै निहारी।।
सात खंड साजौं महा, अति उमंग कैलास।
जगत चितेर लिखाऊँ, दुइ मूरति यक पास।।३।।

तब देखै तोहि नैन उघारी। मिटै दुक्ख जिनि होहु दुखारी।।
जब देखै तुम रूप सोहासन। डिगै देवता-मुनिकर आसन।।
अब लह रूप तुम्हार न देखा। तेहितें पितासम रहै सरेखा।।
दीन्ह दरब जो चाहा धाई। यक अनूप कैलास बनाई।।
सात खंड कै मन्दिर साजा। सतवाँ चित्र-विचित्र विराजा।।
तहाँ चितेरन से कहि दीन्हा। मूर्ति जुलेखा-यूसुफ कीन्हा।।
छात पाट औ बार दुआरा। यूसुफ-जुलेखा चित्र सँवारा।।
साजे पाट सो बहुरि बिछावन। तेहि महँ मूर्ति दोऊ मन भावन।।
जब वह मँदिल सपूरन भयऊ। पाट बिछावन सभ होइ गयऊ।।
तहाँ जुलेखा साजि कै, बैठी सोरह सिंगार।
बारह भूषन भूषहीं, अति छवि से सुकुमार।।४।।

अंगराग मंजन असनाना। चोटी माँग चन्दन अरधाना।।
पहिरा बदन झलाझल चीरा। तास बादला रंग हरीरा।।
कसी कंचुकी सुभग सोहाई। बार-बार आँचर फहराई।।
चख अंजन मृग धंजन लाई। कर पद मेंहदी सुरंग लगाई।।
औ दाँतन महँ मिसी जमाई। हँसत रुदन दामिनि चमकाई।।
जरी अगर कस्तुरी बसावा। सिगरे मंदिल सुगन्धि बसावा।।
अतर पुहुप तन बास बसाई। लै गुलाब चहुँ दिसि ढरकाई।।
सुरँग अधर महँ पान सुहावा। औ सभ बदन सुगन्ध लगावा।।
साज सँवार पाट बैठाई। रतन अमोल सु अंग सोहाई।।
चार फूल औ चार फल, चार मिरिग खग चार।
सुभर चार चौ दीरघ, चार कहैं लघु चार।।५।।

प्रथमहिं सीस फूल छबि देई। मोर भँवर लखि ग्यान हरेई।।
टीका जरित सो बसै लिलारा। औ बेसर छबि अति अधिकारा।।
करन भुषन बरनै कहँ ताई। गीउँ भुषन तन अधिक सोहाई।।
देखे हार ग्यान मत हारा। भुज भूषन अति सुभग सँवारा।।

दोउ हाथन पहुँचीन सोहाई। औ सोहै तहँ कँगन कलाई।।
अंगुलि मुंदरा अति छबि देई। पोर-पोर छल छला करेई।।
गति हंसक धुनि हरै गियाना। नूपुर-पायल सबद सोहाना।।
अनवट बिछियाँ जरित जराऊ। पावा छबि पूजा जब पाऊ।।
देखि रूप गुन मुनिवर भारी। व्यापै काम तजहिं पन तारी।।

हाव-भाव छबि चलिता, मुरि कटाच्छ मुसुकानि।
सिरी मेनका उरबसी, बसुधा हियें लजानि।।६।।

वहि सँवारि बैठारेसि धाई। तब यूसुफ कहँ लीन्ह बोलाई।।
सातौ खंड माहिं लै गई। बिकट कपाट बन्द कै गई।।
सतयें खण्ड जो पाट सोहावन। लै गई बाल-पास मन भावन।।
उहाँ यूसुफ कहँ लै बैठारा। धाई गई बन्द करि द्वारा।।
यूसुफ देखै लाग बिछावन। निज मूरति औ बाल सोहावन।।
मूरति देखि नैन तब फेरा। दिस्टि उठाइ छात-तन हेरा।।
तहँ यूसुफ औ लखा जुलेखा। चहुँ दिसि यहै लिखा जब देखा।।
निज मूरति ललिता पर हेरी। होइ मन दुखित लीन्ह चख फेरी।।
चहुँ दिसि मूरति आपन देखा। अगनित रूप अनूप जुलेखा।।

तब बोली बरनारि यों, जेइँ दीन्हा तोहि रूप।
मोरी ओर छिन देखहु, लेहु ज्याइ सो भूप।।७।।

कहूँ जुलेखा यूसुफ कोराँ। कहुँ देखै वह वहकी ओराँ।।
कहूँ जुलेखा पान खवावै। कहुँ यूसुफ तन कुंकुम लावै।।
कहुँ सोहैं दोऊ गलबाहाँ। कहुँ ललिता आलिंगन माहाँ।।
कहूँ सो हाथ लंक महँ डारे। कहुँ भुज से भुजदंड पसारे।।
कहूँ नगन दोउ आसन साजे। कहुँ रति करहिं ख्याल उपराजे।।
कहुँ चुम्बन कहुँ खंडन करहीं। कहुँ लपटे आपुस महँ लरहीं।।
कहुँ बैठे दोउ साज सँवारैं। हँसि-हँसि तेहि की अँगिया फारैं।।
कहूँ हँसहिं कहुँ मारहि सैना। कहुँ आँचर खींचे बन चैना।।
कहूँ जुलेखा चरनन परई। कहूँ ठाढ़ यूसुफ चित हरई।।

कहुँ यूसुफ बिनती करै, परै जुलेखा पाइ।
कहूँ जुलेखा गोद महँ, यूसुफ पान खवाइ।।८।।

होइ चकृत तब तेहि तन देखा। भै बाउर लखि नैन सरेखा।।
यूसुफ नबी नैन भरि देखा। लाग करै उपदेस सरेखा।।

मोहिं यह रूप दीन्ह करतारा। यक दिन खाइ लेइ तेहि छारा।।
दिन पाँचक यह रूप सोहाना। पुनि माटी मिलि जाइ निमाना।।
तेहिते चित्त वही सें लाई। जेइँ बनाइ कै फेरि नसाई।।
कहा कि तोर अलख को अहई। जाकहँ निसि-बासर तैं चहई।।
कहा अलख अविनासी स्वामी। घट-घट व्यापक अन्तरजामी।।
दुख भंजन सुखदायक साँईं। पातख हरन सो आह गोसाईं।।
वहै जियावै मारै सोई। वहै मिलावै वहै बिछोई।।

अलख अमूरत अघ हरन, बिरह-दलन करतार।
चन्द सूर धन मेरु दधि, सिरजा सरग पतार।।६।।

कहा कि जेइँ करता तोहि कीन्हा। ताकर सपत तोहि मैं दीन्हा।।
गोरी आस पुरावहु साईं। मोरी कथा सुनहु चित लाई।।
मैं सो अहौं सुलतान की बारी। तुम सपने महँ कीन्ह चिन्हारी।।
औ मोहिं नाउँ ठाउँ बतलावा। मिसिर सचिव कहि मोहिं लुभावा।।
जहँ लह देसपती सुलताना। मैं काहू कहँ हिये न आना।।
मातु-पिता की आग्याँ पेली। आइउँ मिसिर कुटुँब परहेली।।
देखि सचिव सुठि भइउँ बियोगी। दिहेउँ न जीव भयउँ जस रोगी।।
लागेउँ प्रान देइ वह बारा। भइ अकास बानी यक बारा।।
तेहि आसा अलि प्रान न दीन्हा। मालति बास परापत कीन्हा।।
मोर सो प्रेम दइयँ सत कीन्हा। तुम परबेस आइ पति दीन्हा[1]।।
जो कुछ हती अवस्था मोरी। कीन्हेउँ सभ न्यौछावरि तोरी[2]।।

अब मोतें जो रति करहु, यह सभ राज तुम्हार।
लेहु साज सिंहासन, करौं सचिव संघार।।१०।।

सुनि यह बात डरे नर नायक। का तैं कीन्ह चाहसि सुखदायक।।
यूसुफ कहा सुनहु अब बाता। तुम जननी सम सचिव सुताता।।
मोकहँ मोल लीन्ह यह लागी। दरब अनेक दीन्ह बड़ भागी।।
सुत समान मोकहँ तुम जानहु। और बात कुछ हिये न आनहु।।
पाप कै बात न चेतहु कोई। पाप ते नास धरम कै होई।।
करै पाप जो यह संसारा। उपजै अगिनि होइ जर छारा।।
वह जग महँ तेहि मिलै न ठाऊँ। लिखा जाइ पापिन महँ नाऊँ।।

पाठान्तर–१,२*– यह चौपाई शेख और अली की प्रतियों मे नहीं है।

यह इच्छा चित डारहु धोई। और जो कहहु करौं मैं सोई।।
पाप तें होइ सरग मुख कारा। यह जग महँ ताकहँ धिरकारा।।
यह मनसा मन दूरि करि, राखहु पुत्र समान।
पाप किये कुल नास है, होइ धरम कै हान।।११।।
लागि जुलेखा तब अस कहई। कहौं कि अलख दयाल सो अहई।।
जो दयाल है पातख हरता। तौ कस डरहु दया निधि करता।।
सहस दरब सो देउँ लुटाई। जो सिगरौ पातख मिटि जाई।।
जो दयाल अघ हरन गोसाईं। तौ कत सोच करहु तुम साईं।।
मैं तोहि लागि तजा घरबारा। आयउँ सँवरि सनेह तुम्हारा।।
रखेउँ बचाइ प्रेम कै थाती। जरै अगिनि जस दीपक बाती।।
जिनि बिरहिनि कहँ करौ निरासा। प्रेम मोर तोहि कीन्हेसि दासा।।
जो इच्छा पुरवै सो पूरा। पातख होइ जो मन कहँ तूरा।।
मन तोरे अस दोख न दूजा। भयउ सिद्ध जो इच्छा पूजा।।
एक पाप के परो तें, देउँ दरब अधिकार।
इच्छा मोर पुरावहू, करहि दई उद्धार।।१२।।
यूसुफ कहा सुनौ बरनारी। वह दाता दुखहरता भारी।।
लेइ दरब नहिं लेइ अँकोरा। देखै पाप-पुन्य की ओरा।।
करै पाप तो जाइ नसाई। करै पुन्य तो दया कराई।।
परलै काल जो माँगै लेखा। स्रवन का सुना, नैन कर देखा।।
पाप-पुण्य सिगरौ संसारा। तुला साजि तौलहिं यक बारा।।
तखरे ऊँच पुन्य कर आवै। सुख कैलास बिलासै सोवै।।
तखरे ऊँच पाप कै होई। परै नरक महँ बहु दुख पाई।।
छिन कै सुख महँ दुख अधिकाई। जनम-जनम कुल धरम नसाई।।
तुम कुलीन दोउ कुल उजियारी। करिकै पाप न लावहु कारी।।
रिषि मुनि दूत भूतगन, महासिद्ध औतार।
जाइ लाज तिन्ह के सबहिं करहिं सभै धिरकार।।१३।।
कहै जुलेखा सुनु नर नाहाँ। का संसय राखहु मनमाहाँ।।
का जानहिं कब परलै होई। ताकर नाम कहै सभ कोई।।
अगनित जनम होब जग माहीं। कहूँ पाप कहुँ पुन्नि कराहीं।।
कोटि जनम लह पाप कमावै। एक पुन्न सभ विघ्न नसावै।।
पुन्न करत सभ जनम जो बीता। होइ बिनास सो एक अनीता।।

इच्छा पूरन करहु गोसाईं। दूसर पुन्न नाहिं अस साईं।।
जो निदान यह पातख होई। करहिं जनम भर धरम सो दोई।।
एक पाप कारन संसारा। सहसन पुन्न करहिं अधिकारा।।
सहस धरम यक पाप न खोवै। हरैं विघ्न बिधि जो नर रोवै।।

एक पाप के कारन, करहिं पुन्न अधिकार।
कहौ अलख है अघ हरन, करहि अन्त निस्तार।।१४।।

चितवहु सौंह लाल मोरी ओरा। हियें लाइ दुख करहु बहोरा।।
अन्ध होउँ जो तोहि तन हेरा। फिरै दिस्टि वैं जेहि दिसि फेरा।।
ठाउँ कुठाउँ न लेइ बिचारी। ताकहँ नरक होइ दुख भारी।।
कहेसि आइ अब हियरें लागहु। हट परिहरहु पुन्नता त्यागहु।।
कहा कि जेइँ यह हिया बनावा। कीन्ह मोहर कोउ जाइ न पावा।।
नैन सुरत मुख चित्त के वारा। कीन्हा छाप मोहर करतारा।।
देहु चरन मैं हियें लगाऊँ। औ पानिन तें नैन सिराऊँ।।
यूसुफ कहा जो परलै आइह। कर पग नेत्र अलग होइ जाइह।।
जो कुछ करम जगत करि राखी। सो सभ देहिं अलग होइ साखी।।

अलख फाँस अरुझेहु जो मन, सिरजेहु निदुर बिछोह।
बार-बार औगुन भरा, कहा दिखावौं तोह।।१५।।

सुनि कै दुक्ख हियें महँ बाढ़ा। तब बनिता छूरी कहँ काढ़ा।।
धरा कंठ पर छूरा नारी। तब यूसुफ गहि लीन्ह सँभारी।।
कहा कि अब कुछ और न भावै। कै पिउ मिलै, कै प्रान नसावै।।
मैं तो कोटि जतन कै हारी। तोहि कारन कैलास सँवारी।।
जेहि कैलास को करति बखाना। तेहितें अधिक सो अहै न माना।।
कोटि दरब औ साज सोहावा। नैहर तें मैं सबै मँगावा।।
कहेउँ सचिव तें देवल साजौं। अब तोहि देखि हिये महँ लाजौं।।
तोरे लागि दरब मैं खोवा। अस कैलास देखि तैं रोवा।।
चित्र-विचित्र सो मँदिल सोहावा। कुंज मँदिर सभ रूप देखावा।।

दरब अकारथ खोवा, तोहि परसन के काज।
ऐसो मँदिल औ नारि अस, तोहिं न आवत लाज।।१६।।

यूसुफ काम हियें महँ जागा। आँचर खोलि लाज तिन त्यागा।।
देखि उरोज मदन तन जागा। है चकृत मन, देखन लागा।।
चितै काम बस, धन मुसुकाई। है अधीर चाहेसि हिय लाई।।

मूरत एक सो कंचन केरी। जरित-जराऊ सनमुख हेरी।।
दुइ मानिक कै आँख सोहाई। सोहै चौकी जरित जराई।।
गइ धाई मुख बसन ओढ़ाई। तब कामिनि कामी पहँ आई।।
तब यूसुफ पूँछा कह नारी। केहि कारन मुख आँचर डारी।।
सुनि यह बात नारि मुसुकानी। है मन मगन हियें हुलसानी।।
कहा कि यह मूरति करतारा। लखै न औगुन पाप हमारा[1]।।

मुख छिपाइ मूरति कर, भई हियें निसचिंत।
कहा कि करहु कोलाहल, छुट तव चिन्त न मिन्त।।१७।।

जब यूसुफ तन उपजेउ कामाँ। लागेउ लखै चहूँ दिसि धामाँ।।
तब सरूप याकूब सोहावा। अँगुली दाँत गहे देखरावा।।
लखि यूसुफ मन भई तरासा। आयउ जिबरईल तेहि पासा।।
फेरि पीठ पर हाथ सोहावा। यूसुफ हिये मनोज मिटावा।।
अस अँगुली तें खाँचेउ रेखा। भै तरास्त मन सुचित सरेखा।।
जनि अस करहु नारि परसंगा। होइ तुम्हार जनम-सुख भंगा[2]।।
कहेसि कि आपन सत्त सँभारहु। है बस काम, न काम बिगारहु।।
यक छन के सुख कारन साँई। जनम-जनम दुख देइ गोसाई।।
मनकर आँकुस ग्यान सोहावा। यूसुफ माँत मतंग हटावा[3]।।

सुनि बालक कै बात वह, लखि सो तात कर गात।
तब मन महँ त्रासित भयउ, सँवरेउ अलख अतात।।१८।।

फिर पूँछा कहु व्याकुल नारी। कस मूरत पर आँचर डारी।।
उतर दीन्ह औ मुख मुसकानी। आदि जोति यह मूर्ति भवानी।।
तेहि के मुख पर आँचर डारा। लखै न हम औगुन करतारा।।
सुनि यूसुफ यह बात सोहाई। रोवै लाग सँवरि सुख दाई।।
तुम करता मुख लेहु छिपाई। मैं का करौं सो कहो उपाई।।
वह स्रोता द्रस्टा कब मानै। रोम-रोम गुन औगुन जानै।।
जौ हम करहिं हिये महँ ख्याला। सो जानै वह अलख अकाला।।
टूटै रोम सो फेरि जमावै। तेहितें कत कोउ भेद छिपावै।।
तुम मुख झाँपि करहु जो चाहौ। मैं का करौं आगि जनि बाहौ।।

पाठान्तर–१*- दोहा सं० १६ तथा उसके नीचे की सम्पूर्ण चौपाईयाँ नूर अली प्रति में नही है।
२,३*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में दोहा संख्या १८ के नीचे है।

चले भागि तब यूसुफ, पाछें परी सो नार।
पट संकट पट खुलि गये, संकट-विकट किंवार।।१६।।

जो-जो नारि करै उतसाहा। यूसुफ डरै देखि बहु चाहा।।
दीन्ह छ गाँठ बसन उध माहीं। कसा बन्द जो छूटै नाहीं।।
धाईं बन्द कीन्ह षट द्वारा। सो षट गाँठ बन्दि महँ डारा।।
जब यूसुफ भागे डरखाई। तब सो नारि धाइ मुसुकाई।।
कहा कि बन्द अहै सब द्वारा। केहि विधि भागि जाहु ओहि पारा।।
भै अकास बानी यक बारा। कुंडी हाथ लगावहु सारा।।
यूसुफ नबी हाथ जब लावा। पट खुलि गयउ सो पाट सोहावा।।
खुला द्वार लखि, उपजी पीरा। तब धाई है नारि अधीरा।।
सतयें द्वार जो यूसुफ आवा। भयउ सुचित तेहि खुला जो पावा।।

खुले बार महँ मार भय, पहुँचि नारि यक बार।
यूसुफ भाग सो पार भा, लीन्हाँ दामन फार।।२०।।

जब बरबस उन्ह हियें लगावा। तब यूसुफ तजि पेलि परावा।।
हाथ छोड़ाइ जो यूसुफ भागा। नारि हियें चक चोहटि लागा।।
जस पंछी कर जाइ उड़ाई। तेहि पाछें बालक बौराई।।
जस सचान तें तीतर भाजै। कै मृगराज तें मिरिग निराजै।।
सतयें खण्ड जब यूसुफ आवा। तब दामन कहँ हाथ लगावा।।
यूसुफ भागि भयउ वहि पारा। दामन रहा हाथ महँ सारा।।
जाइ भूमि पर सीस लगावा। धनि तैं अलख अमूरत रावा।।
तोरी दया पाप तें बाँचा। तैं दयाल सुखदायक साँचा।।
यूसुफ दीन दयाल मनावै। लागि जुलेखा धूम मचावै।।

तेहि लागी रोदन करै, तूरै नथ औ बार।
यही समै आयउ सचिउ, भयउ कोप अधिकार।।२१।।

पूँछा कस रोवहु सिर मारी। का दुख भयउ तोहि अस भारी।।
कहेसि कि मोल लीन्ह जो दासा। सो चाहेसि रस भोग बिलासा।।
वैं मोतें कीन्हा बरियाई। दामन फारि सो लीन्ह छोड़ाई।।
सुनि कै सचिउ भयउ रिस राता। चाहेसि कीन्ह रकत रंग राता।।
कस रे दास का गुन तैं कीन्हा। यूसुफ साखी बालक दीन्हा।।
कहा कि वह बालक नहिं बोलै। अबहीं अधर कंठ नहिं खोलै।।

जब निदान उन्ह चहा सँघारा। तब बोला वह बालक बारा।।
जो आगें तें दामन फारा। तौ पुरुष कर औगुन सारा।।
जो पाछें तें दामन फारी। पुरुष सत्त झूठ है नारी[1]।।
जौ पाछें दामन फटा, तौ दोषित है नार।
जौ आगें तौ पुरुष गुन, जानहु भेद अपार।।२२।।
है कै सुचित जीव नहिं मारा। लागेउ कोप करै अधिकारा।।
देखि जुलेखा मन पछतानी। का मैं चूक सो कीन्ह अयानी।।
जो रिस महँ वह डारत मारी। तौ मैं प्रान करति बलिहारी।।
वह बालक अस गुरू गँभीरा। खरग देखि नहिं भयउ अधीरा।।
मैं जानेउँ गुन बरनहिं दासा। मोह सचिव जिव करै निरासा।।
तेहि डर तें मैं रोदन कीन्हा। आपन दोष सो ताकहँ दीन्हा।।
उन्ह पूँछेहुँ नहिं भेद बतावा। अस वह सत्त औ साधु सुभावा।।
कहै लाग, कर रोदन घोरा। जो चाहौ तुम जीवन मोरा।।
बिना दोष यह जीव न मारहु। पै यह जीव भाकसी डारहु।।
अपने जिय के त्रास तें, ताकर सोच न कीन्ह।
धिग जीवन, धिग प्रेम जो, पीतम कहँ दुख दीन्ह[2]।।२३।।

पाठान्तर–१०- शेख और अली की प्रतियों में-'औगुन भरी जानिए नारी।' पाठ है, २०- शेख और अली की प्रतियों में-'जौ आगें तौ पुरुष औगुन लेहु विचार।' पाठ है।

पन्द्रह यूसुफ कारावास खण्ड

पाछें फटा जो दामन देखा। नारि दोष मन जान सरेखा।।
औगुन सभै नारि कर अहई। लाज काज नहिं परगट कहई।।
जो रिसि करौं नारि पर आजू। सिगरे नगर होइ पुनि लाजू।।
औगुन सकल नारि महँ साजा। जाँघ उघारे आप न लाजा।।
नारि दोष तब लीन्ह छिपाई। निरदोषी कहँ दोष लगाई।।
कहा नारि कुछ दोष न कीन्हा। इतना दोष आपु सिर लीन्हा।।
यैं मोतें जो कीन्ह ढिठाई। लागेउ बचन कहै मुसुकाई।।
तेहि कारन मैं कोपित भई। दास बुद्धि औरै होइ गई।।
सो यह कहँ राखौ बँदि माहीं। और दोष कुछ कीन्हा नाहीं।।

होइ तरास्त निज औगुन, दीन्ह मित्र कहँ लाइ।
बहुरि सोचि व्याकुल भई, लागि हियें पछिताइ।।१।।

बहु गरन्थ महँ कोबिद भाखा। जब यूसुफ कहँ बँदि महँ राखा।।
जिबरईल यक वृच्छ ले आई। बंदिखाने महँ दीन्ह लगाई।।
तेहि सो बृच्छ के हुत दुइ साखा। महा अमोल उतँग अभिलाखा।।
यूसुफ तें तब बरनि सुनावा। बृच्छ बैकुण्ठ तें लोहि भेजावा।।
एक डार जो पूरब अहई। सो वह भोग भुगुति सो लहई।।
अनवन भोग जगत के माहाँ। जो माँगौ सो पावहु ताहाँ।।
दूसरि डारि सो रस कै खाना। जहँ लह रस जग माहिं बखाना।।
नीर-छीर रस पै औ पानी। वहिते माँगि लेहु सुख दानी।।
आन काहु कै आस न धरहू। खाहु पियहु औ सेवा करहू।।

यूसुफ माँगै छुधा महँ, जौ की रोटी नित्त।
सीर नीर छुट और पर, कबहुँ न दीन्हा चित्त।।२।।

भोग अनूप जो नारि भेजावै। कबहुँ न लेइ, न खाइ-खवावै।।
हियें जुलेखा होइ दुखारी। बिना अन्न ताकहँ दुख भारी।।
बिना अन्न कत जीवन होई। रूप ग्यान बल रहै न कोई।।
धाई आइ बिनति बहु करई। भोग न खाय, हियें नहिं धरई[१]।।
आइ जुलेखा रोदन करई। हाँथ जोरि बिनती अनुसरई।।

पाठान्तर—१०- शेख की प्रति में-'हाथ जोरि बिनती अनुसरई' पाठ है।

परी चरन पर भोग के काजा। प्रान न देहु रखहु मोरि लाजा।।
नाही तो प्रान जाइ पत तोरा। काहें लगै यह जीवन मोरा।।
त्यागौं महूँ अन्न औ पानी। तोहि पर प्रान करौं अनखानी।।
तब यूसुफ बोले चख फेरी। निज चरनन पर नैनन हेरी।

प्रान मोर नहिं अन्न तें, धरौ हिये महँ धीर।
साँई नाम अधार जेहि, चहिय न अन्न न नीर।।३।।

मोर अधार नाम करतारा। जेहितें जीवन होइ हमारा।।
अन्न-उदक यह परगट भोगू। गुप्त नाम साँई कर जोगू।।
बारह बरिस अन्न नहिं भावै। नाम अधार सो सभै बढ़ावै।।
रूप तेज गुन ग्यान सोहावा। सो दाता निसि दिन अधिकावा।।
रोवत भवन जुलेखा गई। यूसुफ बचन मुदित मन भई।।
यूसुफ सभ बँधुवन पर दाया। निसि दिन करै अनेकन माया।।
जो भूखा तेहि अन्न खवावै। तृषावन्त कहँ पानी प्यावै।।
जो इच्छा मन जाके होई। सो पूरै मोदित सभ कोई।।
पै यूसुफ जब रोदन करई। नींद भूख बँधुवन कै हरई।।

पाउ परहिं बिनती करहिं, सभ बँधुवै यकबार।
कै सो रैनि कहँ रोवहु, कै दिन माहिं निसार।।४।।

जबहीं नारि लोहार बोलावा। औ बेरी कै बात सुनावा।।
लखि लोहार वह कोमल चरना। अति सुकुमार कोकनद बरना।।
देखि चरन वह रोवन लागा। कहँ बेरी, कहँ चरन सुभागा।।
होइ मलिन जो नैन निहारिय। तेहि चरनन कत बेरी डारिय।।
जो तुम कोप दिस्टि पर हेरी। डारहु चरन फूल कै बेरी।।
फूलहु की बेरी नहिं जोगू। का तोहि कहहिं देखि सभ लोगू।।
जब बरबस उन्ह बेरि नवावा। तब लै के सभ मिसिर फिरावा।।
गई जुलेखा भेष बनाई। नगर लोग का करहिं चवाई।।
लागेउ किंकर कहै पुकारी। पुरुष को दिष्टि लखै पर नारी।।
तेहि कर हाल यहै जग होई। वह जग नरक परै पुनि सोई।।

तब जिबरइल सो आनि कै, कहा नबी से बात।
बैठि जुलेखा बाट महँ, तुम न करहु अपघात।।५।।

यूसुफ कहै पाप कै नासा। मो कहँ बन्दि अहै कैलासा।।
जो बिसवास घात नर होई। तेहि सम और न पापी कोई।।

नगर फिराइ बन्दि महँ डारा। आइ जुलेखा अपने बारा।।
बन्दि महँ हुते बहुत बँदुवाना। तहँ यूसुफ तप करै सयाना।।
निसि-दिन जोग जाप महँ जाई। अलख त्रास नित रोइ बिहाई।।
अस रोवै निसि-दिन बन्दि माहीं। तेहि दुख बँधुवै सोवैं नाहीं।।
तब धाई ते कहा जुलेखा। तीन दिवस मैं रूप न देखा।।
अब का करौं कहौ तुम धाई। मोर सो जन्म अकारथ जाई।।
यूसुफ दरस न पावौं धाई। यक दिन रोइ मरौं बौराई।।

जब लह दरस न देखौ, करौं न अन्न न पान।
मरौं रोइ तेहि बिरह तें, परे कन्त बँदिखान।।६।।

अस कुछ करौ कि दरसन पाऊँ। जरै नयन लखि रूप सिराऊँ।।
का गुन किहेउँ दिहेउँ दुख भारी। दुरलभ भयउ दरस सुखकारी।।
नित दरसन देखौं भरि नैना। सो अब हरेउ कहाँ सुख चैना।।
धाई गई भोग लै साथा। बिनती कीन्ह जोरि कर हाथा।।
तुम पुरुष औ पर उपकारी। सुख मूरत औ गुन-अधिकारी।।
जो कुछ करै सो वह करतारा। हानि-लाभ सुख सम्पति सारा।।
होइहि मोख, बन्दि ते तोरी। पै मानहु तुम बिनती मोरी।।
वह कर दुक्ख हरहु करि माया। जिन तुम होहु लाल निरदाया।।
दरस काज वह व्याकुल नारी। भूला भोग भुगुति सुख चारी[1]।।

तुम आपन गुन कै दसा, देखहु साध सरीर।
औगुन हियें न आनहू, लखौ हृदय कर पीर।।७।।

कोटि कहा उन कान न कीन्हा। औ कुछ उतर न धाइयँ दीन्हा।।
है निरास धाई फिरि आई। औ नारी तें बरनि सुनाई।।
वह के हियें अहै अस कोहू। तुम कीन्हेउ तब आप दुरोहू।।
दिन भर दुखित रहै वह नारी। अन्न पानि तजि बिरह दुखारी।।
होइ रैनि तब साजि सिंगारा। विप्रलब्ध होइ धन पग ढारा।।
आइ बन्दि महँ लखा न कोई। होइ कृष्णा अभिसारिक सोई।।
कबहुँ चन्द्र का भेष बनावै। जेहि तें दरस पिरीतम पावै।।
तस यूसुफ कहँ बैठी देखै। जस चकोर होइ चन्द्र बिसेखै।।
यूसुफ दिस्टि न ऊँच उठावै। रैनि जुलेखा निरखि बिहावै।।

पाठान्तर—१-नूर अली की प्रति में 'सुखकारी' पाठ है।

बिन प्रीतम नहिं कल परै, धरै न यक छिन धीर।
दिन भर दुखित रहै[1] हिये, रैनि हरै दुख पीर।।८।।

तमचुर सबद होइ सुखदाई। आवै मँदिल हिये अकुलाई।।
सभ निसि रहै भाकसी माहीं। सचिव भेद यह जानै नाहीं।।
दिन भर रहै मँदिल बंदि खाना। रैनि भाकसी रूपियँ जाना।।
बन्दि खाने कहँ फेरि बनावा। मँदिल तें करि अधिक सोहावा।।
औ साजा तहँ पाट बिछावन। परदे परे सुभग मन भावन।।
सिंहासन अति सुभग सँवारा। तेहि पर यूसुफ कहँ बैठारा।।
रहहिं दास नित सेवा माहीं। नित नबीन बागा पहिराहीं।।
अति सुगन्ध औ बास सुबासा। रहै तहाँ वह बँधुवा दासा।।
बन्दि खाने महँ बैठक साजा। तहँ बैठे यूसुफ जस राजा।।

बाट जो आवन जान कै, रूद नील के तीर।
बैठक माहिं झरोखा, तहँ बैठे मति धीर।।९।।

लखि पंथी कहँ वह रँगराता। कनआँ नगर कै पूँछै बाता।।
यक दिन यक साँड़िनी सवारा। कनआँ नगर तें मिसिर सिधारा।।
पहुँचेउ जाइ जो बैठक पासा। तब यूसुफ कहँ आई बासा।।
खोलि झरोखा पूँछै लागा। पिता वियोग हियें महँ जागा।।
वह सवार कुछ कान न कीन्हा। अपने पन्थ चला मग लीन्हा।।
लम्बग्रीवँ बरबस लै आना। मारा बहुत एक नहिं माना।।
देखा करभी कहा न मानै। उतरि परा चाहा गहि आनै।।
आयउ ऊँट नबी के पासा। सीस नाइ बिनवा अरदासा।।
मैं तुम कहँ यूसुफ पहिचाना। सुनेउँ बोल मन महँ हुलसाना।।

मैं याकूब के रमने, चरा करौं दिन रात।
कहौ सँदेस पिता कहँ, औ आपन कुसलात।।१०।।

यह नायक किनआँ महँ आवा। मोल लीन्ह औ मिसिर सिधावा।।
जब सवार वह मारन धावा। पकरि लीन्ह पुहुमियँ दोउ पावा।।
तब वह बहुत जतन कै हारा। लखि यूसुफ फिर ताहि पुकारा।।
जो करभी कहँ मारहु नाहीं। छाड़ै भूमि पाव पल माहीं।।
जब मारै तें हाथ उठावा। छूटा चरन आइ सिरनावा।।

पाठान्तर–१- नूर अली की प्रति में 'दहै' पाठ है।

कहा कहाँ तें आवहु भाई। कौन देस कहँ चलेहु चलाई।।
बोला मैं कनआँ ते आवा। बनिज काज यह देस सिधावा।।
कनआँ नाम सुनत बिलखाना। हिय लहकेउ औ मन उलथाना।।
कहा बिरछ कनआँ महँ देखा। बारह डार सो ताहि बिसेखा।।
एक डार वह बिरिछ कै, टूटि परी यक बार।
मूल झुराना आप कहँ, और झुरानी डार।।११।।
कहा कि सो याकूब सोहावा। बारह सुत महँ यक बिलगावा।।
यूसुफ कहा सुनहु दुख भाई। का मैं कहौं जो कहा न जाई।।
कहेउ मोर तुम जाइ सँदेसा। छाँड़हु नबी बिछोह अँदेसा।।
देहु असीस बन्दि तें छूटहिं। कहै बात, चख मोती टूटहिं।।
कहै पथिक तुम नाम बतावहु। जेहिते मुक्ति बन्दि तें पावहु।।
यूसुफ कहा कहौ का भाई। अग्याँ नाहिं जो नाम बताई।।
हतेउ हरा तिल मधि दोउ भौहैं। दीन्ह देखाइ ताहि करि सौहैं।।
यही चीन्ह तुम बरनेहु जाई। देहु असीस बन्दि मुकुलाई।।
मैं दुखिया का कहौं उधारी। बिरह अगिनि जस मो कहँ जारी।।
चरन परेहु हम ओर तें, औ रोयहु बिलखाइ।
दिहेउ असीस जो बन्दि तें, मोख मुक्ति होइ जाइ।।१२।।
निसि-दिन जरौं बन्दि के माहीं। कोऊ मीत सँघाती नाहीं।।
औ मैं दोष न काहू कीन्हा। बिरथा मोहिं बन्दि महँ दीन्हा।।
चलेउ बेगि साँड़िनी सवारा। होइ सो बिदा औ करि मनुहारा।।
तब दीन्हाँ यक रतन अमोला। हतेउ सो मिसिर देस कर मोला।।
कहेउ बेगि यह मोर संदेसा। दुखी बार कीन्हेउ परबेसा।।
पावा नग अमोल असवारा। कहा कि कहौं सँदेस तुम्हारा।।
कहा कि जो घर किन्हेउ प्रबेसा। रैनि समय यह कहेउ सँदेसा।।
जेहितें और सुनै कोउ नाहीं। सुनै जो और दुखित मन माहीं।।
कनआँ नगर कीन्ह पैसारा। रैनि समय वह पथिक पधारा।।
आवै पीतम वासना, केहि कर ल्याइ सँदेस।
सुनत हाँक तोरी प्रान जनु, घट महँ कीन्ह प्रबेस।।१३।।
तब उन्ह कहा मिसिर कहँ गयऊँ। बधुँआ देखि दुखित मन भयऊँ।।
बँधुवा एक रूप उजियारा। प्रथमहिं बहु विधि कीन्ह जोहारा।।
हाथ जोरि बिनवा अरदासा। औ मोहिं बोलि कहेउ निज पासा।।

लागेहु चरन कहेउ दुख मोरा। देहिं असीस होहिं बँदि छोरा।।
सुनि याकूब हियें हुलसानाँ। औ संदेस यूसुफ कर जाना।।
औ सभ अर्थ कहेउ कर जोरी। बारह डार एक विधि तोरी।।
कहा कि तुम्हैं देहुँ का भाई। जेइँ मोहि जियन सँदेस सुनाई।।
कहा कि नग अमोल मैं पावा। दुख दारिद सभ भागि परावा।।
तुम सो नबी मोहिं देहु असीसा। देइ सो बंस मुकुति जगदीसा।।

तब याकूब असीस तेहि, दीन्हा हाथ उठाइ।
देइ मुकुति सुत अलख तोहि, जेइ मोहिं दीन्ह जियाइ।।१४।।

मुकुति असीस नबी जब दीन्हा। तब अरदास साँड़िनी कीन्हा।।
मोरी पीठ गये औ आये। पावा नग सुत मुकुति सोहाये।।
मैं सवार कहँ तहँ लै गयऊँ। अबहिं न मुकुति परापत भयऊँ।।
तब याकूब सो दीन्ह असीसा। तुम कैलास कै करभी ऐसा।।
सुनि बिरही वह बिरह सँदेसा। बँदि महँ सुनि मन भयउ अँदेसा।।
निसि-दिन करै कुटी महँ सेवा। देइ असीस सदा वह देवा।।
देहु मुकुति अब ताहि गोसाईं। औ वह करौ आनि यक ठाईं।।
यूसुफ पत्र अनेक पठावा। विधि चरित्र तहँ एक न आवा।।
विधि आग्याँ साँड़िनी सवारा। भयउ आनि कै प्रान अधारा।।

पिता पास लिखि यूसुफ, भेजा पत्र पचास।
बिनु अग्याँ जगदीस की, एक न पहुँचेउ पास।।१५।।

यूसुफ नबी परे बँदि खाना। तब यह बात नगर सभ जाना।।
घर-घर यहै सो चरचा होई। दास संग अति चाहा[1] सोई।।
दास जुलेखा कहँ नहिं माना। तेहि कारन सेवै बँदिखाना।।
हँसहिं नारि औ करहिं चवावा। कहै बात जो जेहि मुख आवा।।
नीर-नारि नीचेइँ कह ढरई। दास जुलेखा कौ चित हरई।।
सुनि यह बात जुलेखा रोई। जेहि कारन मैं सरबस खोई।।
खोयउँ राज-पाट घर बारा। खोयउँ नैहर कर सुख सारा।।
खोयउँ लाज कुटुँब परिवारा। खोयउँ धन सम्पति अधिकारा[2]।।
सो न करै वह मो पर दाया। करहिं चवाव लोक निरमाया[3]।।

पाठान्तर–१- अली की प्रति में गुनकीन्हा पाठ है, २,३*- खोयउँ लाज कुटुँब.....लोक निरमाया, चौपाई नूरअली की प्रति में नहीं है। इसमें यह चौपाई है-

कहा जुलेखा शाह की बारी। सचिव-सदन नीचे पग ढारी।।
तेहि सो नीच तें सौंह करेई। जो चित दास अनौचित हरई।।

खोयउँ सुख सम्पत्ति सभै, नींद भूख तजि दीन्ह।
सो नहि देखे मम सवह, देस उपद्रव कीन्ह।।१६।।

सुनि यह बात साजि जेवनारा। आयसु लीन्ह सभै सुकुमारा।।
जहँ लह मीर-अमीर की बारी। तिनहिं नेवति साजा जेवनारी।।
आई सभै करत सुख केली। कीन्ह भेंट सभ नगर की बेली।।
भोग खवाइ सभै बैठारा। तब थक नारि बात अनुसारा।।
तुम सो दास कर सुना बखाना। कस वह दास जो मन ललचाना।।
कहा नारि तुम देखहु दासा। रहै ग्यान थिर करहु हुलासा।।
हाथ तुरंज सबहिं कहँ दीन्हा। दूजे हाथ छुरी गहि लीन्हा[1]।।
यही समैं वहँ दास बोलावा। बहु बिनती सें यूसुफ आवा[2]।।
जब सरूप वह नैनन हेरा। रहेउ न ग्यान इस्थिर केहु केरा[3]।।

कहा जुलेखा काटिए, नेबू सभ मिलि नार।
रूप बिलोकहु दास को, काटहु तुरँज सँभार।।१७।।

[4→] जाइ जुलेखा दोउ कर जोरी। कहै यूसुफ सुन बिनती मोरी।।
आईं आज चार सै नारी। जो मोहिं हँसहिं देहि धिरकारी।।
कहहिं कि दास रूप चित लावा। ता सरूप नहिं दासहिं भावा।।
सो सुनि कै मोरा हिय जरा। जैसे घिरित अगिन महँ परा।।
उन सभ कहँ मैं नेवति बोलावा। अनवन भोग सो ताहि जेंवावा।।
अब चाहहिं वे दरसन तोरा। परगट करहिं सो औगुन मोरा।।
सो तुम आज पहिरि पहिरावा। जस बागा तुम पास भेजावा।।
औ सभ साज सरूप सोहावा। छवि कटाच्छ गुन हाव औ भावा।।
होइ सनमुख निज रूप देखावहु। बात मोर तुम आज बढ़ावहु।।

होइ मोहन हरि लेहु मन, रूप अनूप दिखाइ।
करि कटाच्छ छवि छलता, चितवहु घुरि मुसुकाइ।।१८।।

एक गरन्थ माहिं अस देखा। जब तरुनिन वह रूप बिसेखा।।
एक नारि हुत बारि कुमारी। अति अग्यॉन होइ जस बारी।।
यूसुफ रूप देखि हरखानी। आयउ पुहुप सो हियें लजानी।।
भयउ सो बसन रकत रतनारा। होइ लज्जित सुमिरेउ करतारा।।

पाठान्तर--१,२,३*- चौपाइयाँ नूर अली की प्रति में नहीं है। दोहा-संख्या-१६ के नीचे उसमें १६ चौपाइयाँ है। ४*- दोहा सं० १७ के नीचे 'कहाँ ते रकत सो भयउ बिधाता' इत्यादि चौ० नूर अली की प्रति में है।

अब तुम राखि लेहु मोरि लाजा। आयउ पुहुप सो कौने काजा।।
तब पुनि खेल कीन्ह करतारा। लाज काज यह भेद अपारा।।
सभकर हाथ काटि देखरावा। चहुँ दिसि नारिन रकत बहावा।।
एक नारि की लाज के काजा। सभ कहँ दइयँ रजस्सला साजा।।
ताकर भेद न जाना कोई। आपु-आपु कहँ लज्जित होई।।
धनि करता, दुख हरता, लाज निबाहन हार।
एक दुखी दुख कारन, भै सभ दुखित निसार।।१९।।

देखत रूप हरी बुधि सारी। भईं मोहित सभ नगर कै नारी।।
काहूँ काटि आँगुरी डारा। काहूँ हथेली काटि पबारा।।
कोइ छिगुंनी कोइ अँगूठा काटा। कोइ पुहुमीं लै धरै ललाटा।।
कोइ छुरी निज अंग चलावै। कोई सभ कर काटि उड़ावै।।
काहुहिं सुद्धि रही थिर नाहीं। बहा रकत सभ सभा के माहीं।।
तब यूसुफ कहँ फेरि पठावा। सो चलिकै बँदिखाने आवा।।
जब तरुनिन चित चेत सँभारा। देखहिं रकत भरा रतनारा।।
कहै नारि का कीन्हा दईं। सभै रजस्सला यक सँग भईं।।
कहाँ ते रकत सो बहेउ बिधाता। भयउ सो मोर बिछावन राता।।
तब सभ सिर चरनन धरा, कहा कि धनि तूँ नारि।
जो देखसि अस दास नित, राखसि चित्त सँभारि।।२०।।

यह न होइ मानुष औतारा। ससि सूरज कै रति पति बारा।।
कै सो इन्द्र भृगु गन्धब देवा। तुम वह जनम कीन्ह भल सेवा।।
जो अस दास तुम्हैं बिधि दीन्हा। जनम तुम्हार सुफल जग कीन्हा।।
धन्न भाग जो चेरी होई। औ जेहि दिसि चख चितवै सोई।।
हम सभ व्याकुल भई निहारी। उन्ह देखा नहिं दिस्टि उघारी।।
तुम कहँ सँखी दोष कुछ नाहीं। मोहन भरा प्रहत[1] तेहि माहीं।।
रूप देखि थिर रहै न ग्याना। होइ चारि चख हरै पराना।।
धनि तोर जनम सुभागा अहई। जो ऐसे मानुष कहँ चहई।।
तब सभ नारि कीन्ह मनुहारी। दरस देखाउ फेरि यक बारी[2]।।
बहुत हियें व्याकुल भईं, दरस-परस के चाव।
बहुत वियोगिन यों कहैं फिर अब दरस देखाव।।२१।।

पाठान्तर-१-नूर अली की प्रति में 'पढ़त' पाठ है, २*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है, इसके स्थान पर यह चौपाई है- 'जब तरुनिन चित चेत सँभारा। देखैं रकत भरा रतनारा।।'

हम तेहि करहिं बहुत उपदेसा। सुनहि न वचन जो मन लौ लेसा।।
तब फिर बोलि जुलेखा नारी। दीन्ह देखाइ जोति उजियारी।।
सभ मिलि कहहिं दास तें रोई। तुम जस कीन्ह करै नहिं कोई।।
कोटि रतन दै तोकहँ लीन्हा। सो तुम दरस चहौ नहिं दीन्हा।।
औ यह नारि जगत उपराहीं। यहि के रूप मिसिर कोउ नाहीं।।
जस तोहिं कीन्ह रूप कर सागर। तस वह देहँ महाछबि आगर।।
रूपवन्त चाहै पुनि रूपा। तेहिते अधिक न जगत अनूपा।।
अब ललिता कहँ जनि तरसावहु। होइ कै सुचित हियें महँ लावहु।।
बहुत बार लह बिनती कीन्हा। यूसुफ उतर मूँदि चख लीन्हा।।

झूठ प्रेम जो दई चित, जस सो फूल कै बास।
साँच प्रेम रँगराची, दिन प्रति तोरत आस।।२२।।

जानहिं मोहिं सो पुत्र समाना। मैं जननी तजि और न जाना[1]।।
पुत्र समान रखै घर माहीं। गहै मन्द जो माँता बाहीं[2]।।
यह जग महँ ताकहँ धिरकारा। वह जग होइ तासु मुख कारा[3]।।
घर-घर नगर कै बाउर नारी। यूसुफ रूप भईं बलिहारी।।
कहहिं नारि जो ताहि न चाहू। हमतें प्रेम लहौ औ लाहू।।
सौंह दिस्टि भर देखहु हेरी। हम सभ होहिं जनम भर चेरी।।
यूसुफ कहा कि पर तिय मोही। सभ जननी जानहिं सभ तोही।।
कुहहिं जो चित काहू कहँ देई। सो निरास नहिं ताहि करेई।।
तुम ताकर हो प्रान अधारा। औ वह आपन प्रान पियारा।।

पुत्र समान जो राखै, देइ सौंपि घर-बार।
जो खल छल चाहै किया, होइ नरक महँ बार[4]।।२३।।

है निरास सभ नारि सिधारी। कै मनुहार हियें महँ हारी।।
कोउ अम्बृत कोउ भोग पठावै। कोऊ बसन अनूप भेजावै[5]।।

पाठान्तर–१,२,३*– यह चौपाई नूरअली की प्रति में नहीं है, इसके स्थान पर निम्नलिखित चौपाई है–

कहैं नारि जो ताहि न चाहू। हमतें प्रेम लेहु औ लाहू।।
जातें मन प्रसन्न सो होई। हम महँ नारि सोहागिन होई।।
हम महँ काहूँ करहु निहाला। डारहु जासु मरे हिय भाला।।

४*– नूरअली की प्रति में दोहा संख्या २३ इस प्रकार है–

कहा पुत्र करि राखै, देइ सौंपि घर-बार।
सो खल छल एक पल करै, होइ नरक महँ बार।।

५*– दोहा सं०२३ के नीचे नूरअली की प्रति में– एक गरन्थ माहिं अस देखा इत्यादि चौ० लिखी है।

६*– नूर अली की प्रति में यह अर्द्धाली इस प्रकार है– फूल पान बहु थाँलि भेजावै।

कोऊ दरब जवाहिर हीरा। भेजैं सभ यूसुफ के तीरा।।
कोउ भेजे कह बिरह सँदेसा। कहहिं भई हम बाउर भेसा।।
कहौ तो भेष बदलि कै आवैं। रैनि समै तब दरसन पावैं।।
आवहिं सभ कै दासी चेरी। बावरि होहिं रूप बर हेरी।।
पै यूसुफ कुछ करै न काना। लेइ न विषै हरै अभिमाना।।
लै दासी सभ फिर-फिर जाहीं। कहहिं दास कुछ मानत नाहीं।।
वह उपजेउ अस रूप गुमाना। नगर नारि कहँ हियें न आना[1]।।

घर-घर बाल बेहाल होइ, करहिं सो कोटि उपाइ।
उतर न देइ सो एक कहँ, रहहिं नारि लौ लाइ।।२४।।

यहै कुगति भइ नगर[2] बखाना। घर-घर[3] लोग भेद सभ जाना।।
यक अमीर हुत अति परधाना। तेहि कर सुता सो-ग्यान-निधाना।।
महा स्वरूप औ पंडित ग्यानी। वेदान्त सो पढ़ै सुजानी[4]।।
व्याह न कीन्ह सो हती कुमारी। निसि-दिन करै तपस्या सारी।।
जोगी तपा जहाँ सुनि पावै। होइ गाहँक तेहि पास सिधावै।।
सुनि यूसुफ कर रूप बखाना। भगत सुभाव सुना औ जाना।।
सो सुनिकै देखै कहँ आई। अभरन साज-सिंगार बनाई।।
आई प्रथम जुलेखा पासा। कहेसि देखावहु आपन दासा।।
दास अपूरब भगत सो अहई। जो तोहि अस सुन्दरि नहिं चहई।।

दास बोलाइ देखावा, भई निरखि बेहाल।
होइ मुरछित छिति में परी, भई सुचित चित बाल।।२५।।

कहै लागि सुनु दास अनूपा। केहि[5] तोहिं दीन्ह सो आकर रूपा।।
केइँ अहि-केस रचेउ विषधारी। केइँ तीछन ईछन रतनारी।।
केस-सीस लखि हिये डँसाहीं। नैन बान बेधै हिय माहीं।।
तुम सो अहौ पुरुष अभिनासी। उतर कहौ जो पूँछै दासी।।
ब्रह्म अण्ड कर भेद न जाना। महा पुरुष कर करहु बखाना।।
तब यूसुफ मुख बचन निसारा। लागे कहन पुहुप जस डारा।।
बोलै लाग बचन मृदु बानी। ऊख-पियूख-मयूख कै सानी।।
कहा कि सुनु ऐ बाउर नारी। अभिनासी कर गुन अधिकारी।।

पाठान्तर–१ᴮ- दोहा संख्या २३ के नीचे की चौपाइयाँ दोहा सं० १९ के नीचे दी गई है। २-देश ३-नगर-नगर, ४ᴼ- नूर अली की प्रति में 'औ वेदान्त चाह अधिकानी' पाठ है। ५-नूर अली की प्रति में 'केइँ' पाठ है।

धरती सरग बनावा, रबि ससि समुद सुमेर।
दुइ अच्छर भाखत भयउ, परगट जगत-चितेर।।२६।।

सरबमई वह आदि अकाला। घट-घट व्यापक दीन दयाला।।
वह सो आहि यह जगत-चितेरा। भाँति-भाँति कै मूरति हेरा।।
सँवरहु ताहि औ कहौ जो सोई। जेहि कर रचा जगत सभ होई।।
मोरे केस कर करहु बखाना। तेहिकर बात सुनौ सुग्याना।।
जब सु प्रान छाड़ै यह देहाँ। मूरति सुभग जाइ मिलि खेहाँ।।
पहिले जाइ केस झरि बारा। तेहि सुकेस कर कौन पियारा।।
नैन बैन औ रूप सोहावा। जब लह प्रान तबै लग भावा।।
जब यह प्रान हरै तन साँसा। नैन-बैन कुछ रहै न पासा।।
जब मानुष मानुष कहँ चाहै। चाहै अलख मुकुति गति लाहै।।
वह कर खेल समुन्द अपारा। यह जग तासु बुलबुला सारा।।
सँवरहु अलख अनादि कहँ, जेइ कर आदि न अन्त।
और बात सभ बिरथाँ, करहु जोग मरतन्त।।२७।।

चहुँ दिसि पूरन जोति अपारा। होइ नैन तो देखै पारा।।
वह आपुहिं महँ अहै छिपाना। नर बाउर, अति निकट न जाना।।
वह घट-घट महँ पूरन सारा। नर मूरख ढूँढै संसारा।।
सभ ब्रह्मंड हियें महँ सोहा। मानुष रूप देखि जग मोहा।।
जो आपहिं देखै निरथाई। देखि लेइ वह जोति सोहाई।।
धरती सरग चन्द औ सूरा। मेघ बीजु निज घट महँ पूरा।।
देइ नैन महँ निरगुन अंजन। देखि लेइ तब रूप निरंजन।।
सरबमयी होइ चहुँ दिसि छावा। देखि परै जेहि चहै लखावा।।
भरम छाड़ि निभरम होइ जाई। तब सरूप वह जाइ लखाई।।
जब लह प्रेम न उपजै, हियें न उठै तरंग।
तब लह रँग राचै नहीं, करत फिरै सभ रंग।।२८।।

सभ ब्रह्मण्ड सो नीक निहारी। मूरति एक सो लेहु बिचारी।।
महा पुरुष वह अहै अकेला। निरखि निहारि सरूप सुहेला।।
वहै एक मूरति चहुँ ओरा। जेहि के अंग कर ओर न छोरा।।
धरती सरग समन्द सुमेरा। सभ कहँ एक मूर्ति वह हेरा।।
कहाँ ठाँउ जहँ है वह नाहीं। देखौ निरखि वहै सभ माहीं।।

सभै देस निरमाइ कै, जब पहुँचै वह देस।
तहाँ रंक होइ जात है, छिन महँ आप नरेस।।२६।।

जब सो आप कहँ देहु उठाई। तब देखहु वह जोति सोहाई।।
सभ ब्रह्माण्ड एक तन देखहु। महा पुरुष कै रूप विसेखहु।।
रहै न ओट नैन के माहीं। मिलै जोति महँ जब परछाहीं।।
एकाएक दोऊ होइ जाई। ठाकुर दास न जब बिलगाई।।
सुनि यह बात नारि मन जागी। फारि दुकूल भई बैरागी।।
चिनगी बिरह-आग कै परई। और राग[1] सभ तनतें हरई।।
चरनन पर कीन्हा अरदासा। तुम सुपुरुष हम पुरवहु आसा।।
भूली फिरौं पंथ नहिं पावा। तुम छिन महँ मोहि मग दिखरावा।।
अरथ दरब सभ दीन्ह लुटाई। बैरागिन होइ कुटी बनाई।।
जोगिन होइ बैठी वह नारी। लागी करै तपस्या सारी।।
कबहूँ चलि यूसुफ पहँ आवै। भगति भाव कर भेद जनावै।।
तब यूसुफ तेहि पंथ लगावा। भई सिद्ध निज दीन बतावा।।
यहि विधि बहुत वियोगिनि नारी। भई दीन महँ सरबस हारी।।

यूसुफ रहै सो बन्दि महँ, सभ बँधुवन के पास।
देखि तपस्या नबी कै, भै बँधुवे वै दास।।३०।।

एक रात दुइ बँधुये जागे। देखा सपन कहै दोउ लागे।।
लागेउ एक सपन अस कहई। भाजन-भोग सीस जनु अहई।।
तेहि भाजन महँ पंछी खाहीं। खाइ-खाइ खग उड़ि-उड़ि जाहीं।।
तुम सो सिद्ध औ अति सग्याना। सपन बिचारि कहौ जस जाना।।
यूसुफ कहा मींचु नियरानी। सूलियँ चढ़ौ कोप सुलतानी।।
दूजें कहा सपन मैं देखा। हाथ सुराही लीन्ह सरेखा।।
जनु लोगन कहँ नीर पियाऊँ[2]। कहउ बिचारि सपन, सचु पाऊँ।।
कहा कि भोर बोलि सुलताना। जलदायक तोहि करै निदाना।।
औ सुलतान करै बहु माया। हमहूँ पर कीन्हेउ कुछ दाया।।

कहेसि दई जो सच करै, तुरत छोड़ावौं तोहि।
जब लह मोख न होइ तोहि, दोष चढ़ै पुनि मोहि।।३१।।

पाठान्तर—१-शेख और अली की प्रति में 'आग' पाठ है। २-'कुरान शरीफ' में दूसरे बँधुए को शराब पिलाने वाला बताया गया है।(सूर ए यूसुफ पारा-१२)

भोर होत सुलतान बोलाई। जस उन्ह कहा कीन्ह तस जाई।।
एक बँधुये कहँ सूरी दीन्हा। दूजे कहँ जल दायक कीन्हा।।
पातसाह बहु माया कीन्हाँ। हस्ती घोर दरब सभ दीन्हाँ।।
चलत बार वह कहेउ सुनाई। मोहिं सँवरेउ सुख संपति पाई।।
बात अलख कहँ नीक न लागी। गयउ भूलि सो[1] चित से भागी।।
सात बरिस बँदि खाने रहा। कोउ काहू सों बात न कहा।।
तब यूसुफ मन सँवरा सोई। मोरि सहाय करै नहिं कोई।।
मैं बँधुये कहँ कीन्ह सहाई। तेहि कारन प्रभु कोप कराई।।
रोदन करै रैनि दिन सोई। मोरें और सहाय न कोई।।

ऐ दयाल बिनती करौं, तोहि छुट कोऊ नाँह।
मम औगुन जिन देखहू, करौ सो मोपर छाँह।।३२।।

मै बाउर कुछ भेद न जाना। तोहि छाड़ि दूजे कहँ माना।।
सो अब परेउँ कठिन अवगाहा। तोरे बार अधार सो चाहा।।
बेरा मोर बहा मँझधारा। कै किरपा अब लावहु पारा।।
रोम-रोम हौं औगुन भरा। तोरी दया पर हौं चित धरा।।
अब्राहिम[2] कहँ अगिनि पियारी। तैं सो आग कीन्ह फुलवारी।।
कंठ छुरी[3] तें लीन्ह बँचाई। अब कस बिलँब कीन्ह सुखदाई।।
औगुन मोर न देखहु स्वामी। होहु दयाल सो अन्तरजामी।।
मोरे तुम छुट और न कोई। जो दुख माँहि सँघाती होई[4]।।
आपन गुन गुनि करहु सो मोखू। मोरे तो रोम-रोम घट दोखू[5]।।

सात बरिस मोहिं बंदि महँ, बीते दीनदयाल।
अपने चलत सो दुख सहेउँ, तोहि न दोष कृपाल।।३३।।

रहै जुलेखा विरह दुखारी। केहि विधि मोख होइ बँदिसारी।।
करै उपाव सो बनि नहिं आवै। बिना दरस कछु ताहि न भावै।।
कबहूँ जतन तें साजि उपाई। यूसुफ कहँ निज पास बोलाई।।
देखि दरस छिन हरै वियोगू। फिर लै जाहिं बन्दि महँ लोगू।।

पाठान्तर–१-अली की प्रति में लेखक ने भूल से 'मनो' पाठ दिया है। २-पिता माँतु, ३[ब]- कठिन घड़ी, ४,५[ब]- मोरे तुम छुट और न .....घट दोखू।। चौ० के स्थान पर नूरअली की प्रति में निम्नलिखित चौपाई है-

अबकी बेर न लावहु बेरा। यह बेरा कर करहु निवेरा।।
मोरे रोम-रोम घट दोषू। अपने गुनहि करहु सो मोखू।।

दरब अनेक दीन्ह पुनि सोई। चौकी माहिं रहहिं जो कोई।।
कबहूँ आप जाइ बन्दिखाना। देखै दरस सचिव नहिं जाना।।
भै तन छीन सो व्याकुल नारी। निसि-दिन होइ आनि बलिहारी।।
केहि विधि मैं पग[1] बन्दि छोड़ाऊँ। हौं पापिनि का मुख देखराऊँ।।
मोरे लागि सहउ बन्दिखाना। निकसि न जाइ निलज यह प्राना।।

तुम मोरी बन्दि, पिउ परेहु, मैं तोरी बँदि माँहि।
तुम परगट सभ दुख सहेउ, मोहिं गुप्त सुख नाहिं[2]।।३४।।

बार बयस सुख करत सोहावा। तब तें मो पर फाँसी नावा।।
देखउँ सपन भइउँ बिकरारा। छाँड़ेउँ मातु-पिता घर-बारा।।
जब तें परेउँ तोरि बँदि माहीं। छिन यक, सुख देखेउँ सो नाहीं।।
मोर बँन्दि हरहु करहु अब मोखू। रछहु मोर सो औगुन दोखू।।
तोर बंधन अब हरै विधाता। मोरी बन्दि हरहु सुख दाता।।
सात बरस तोहि बँदि महँ बीता। भइउँ बिरह दुखतें अग्गीता[3]।।
जेहि दिन तुम चितवहु मोरी ओरा। तेहि दिन दुख कर होइ बहोरा।।
हरै बिपति जो चितवहु सौंहैं। सूधी होहिं बाँकुरी भौंहैं।।
देखहु मो तन मया तें हेरी। रहौं जनम भर जेहि विधि चेरी[4]।।

नयन उठाइ जो देखहु, लाखन देउँ लुटाइ।
बिना दाय की चेरी, मोल लेहु चख लाइ।।३५।।

सात बरिस जब बँदि महँ भई। दाता सुचित दिस्टि निरमई।।
सपना एक लखेउ सुलताना। भयउ देखि कै व्याकुल प्राना।।
उठा भोर, मन चकृत महा। अर्थ बोलि मंत्रिन तें कहा।।
अजगुत सपन रैनि महँ देखा। तासु भेद कुछ आवै न लेखा।।
तेहि सपने कर करहु बिचारा। जेहितें सुचित मन होइ हमारा।।
मीर-अमीर सभै सिर नावा। पातसाह तब सपन सुनावा।।
सात गऊ अति थूल सोहाई। दुरबल सात गऊ जनु आई।।
दुरबल गऊ थूल कहँ खावा। यह सपना मोहिं प्रथम लखावा।।
बाली सात हरी फिर देखा। पुनि सूखी अस सात परेखा।।

झूरी बाली, हरी कहँ, लीन्ह तुरन्तहिं खाइ।
कहहु बिचार जो सपन कर, हियें सोच मिटि जाइ।।३६।।

पाठान्तर–१- पिउ कै, २*- यह चरण इस प्रकार है- 'हौं घर महँ सुख नाहिं' ३-अगनीता, ४*- दासी कै 'चेरी' पाठ नूर अली की प्रति में है।

सचिव मीर सुनि कै सभ हारा। यह सपने कर कठिन बिचारा।।
तब सुलतान भयउ रिस माहीं। उत्तर देउ मीर कोउ नाहीं।।
जलदायक सँवरेउ मन माहीं। सपन बिचारि कहै कोउ नाहीं।।
छुट यूसुफ यह सपन-बिचारा। कोउ न जग में बरनै पारा।।
मोतें भई चूक अस भारी। सात बरिस तेहि दिहेउँ बिसारी।।
का मुख लै पूँछौं तेहि सेंती। रहा बन्दि महँ कठिन सँकेती।।
मोहिं ते चलत बार उन्ह कही। हरी बुद्धि जो सुद्धि न रही।।
बहुरि कहेउ सुलतान तें जाई। सपन बिचारि अरथ सिरनाई।।
मन्त्री मीर सभै सुनि हारा। का जानहु तुम सपन बिचारा।।

आबदार तब बरनेउ, यूसुफ नबी की बात।
अग्याँ होइ तो सपन विधि, कहौं जो देखा रात।।३७।।

सचिव-बन्दि पुरुष अस अहा। सिद्ध सरूप औ पंडित महा।।
पातसाह कै अग्याँ पावा। आबदार यूसुफ पहँ आवा।।
आइ दूर तें सीस नवावा। पुनि सो निकट सिर चरनन लावा।।
चरन परै फिर जोरे हाथा। बिनती करै नाइ भुइँ माथा।।
मोतें चूक भई अस भारी। जो दीन्हेउँ तुम-बात बिसारी।।
तब यूसुफ कह सीस उँचावा। तुम कहँ दोष नाहिं कुछ रावा।।
विधि चरित्र यह अहै अपारा। तोरे हिय तें मोहि बिसारा।।
तब सपने कर अरथ सुनावा। पातसाह तुम पास भेजावा।।
मंत्री सभै सपन सुनि हारे। का बिचारि वे कहैं बेचारे।।

कहौ बिचार जो सपन कर, जेहितें मिटै सँदेह।
बन्दि तुम्हार कटै तुरँत, पितु तें बढ़ै सनेह।।३८।।

यूसुफ कहा-कहौ जगपाला। सात बरिस लह समै सुकाला।।
बरसै मेह अन्न उपजावै। परजा सुखी निरिप सुख पावै।।
सात बरस पुनि काल परेई। दुखी सुखी बिन अन्न मरेई।।
सात बरस लह मेघ न गाजै। बूँद न परै न बीजु बिराजै।।
गगन बूँद नहिं जल बरसाये। हरियर बिरछ सूखि सभ जाये।।
बिना अन्न सभ मानुष मरहीं। तिरिन बिना जंगम जिय हरहीं।।
रहै जो सात बरिस लह काला। होइह रंक धनी बेहाला।।
सोन रूप लहि चहुँ दिसि धावहिं। दाना अन्न हाथ नहिं आवहिं।।
पातसाह जो करै उपाई। तो वह समय काल कटि जाई।।

सात बरिस के परान्त पुनि, सात बरिस लह काल।
करै उपाव महीप जो, रहै सुदेस सुकाल।।३६।।
जेहि रे देस कर निरिप सयाना। सो परजा नहिं मरै किसाना।।
जो उपाव नहिं महिपत करहीं। तो परजा पंछी सभ मरहीं।।
जाइ अरथ सभ बरनि सुनावा। पातसाह तब फेरि पठावा।।
कवन उपाय करै सुलताना। जेहितें काल जाइ नहिं जाना।।
कहा सुनै जो मता हमारी। सात बरिस बरसै जल भारी।।
उपजै अन्न बहुत अधिकारी। करहिं नीति पुहुमी पति भारी।।
आधा अन्न बाँटिकै लेई। सात बरिस लह ढेर करेई।।
करहिं नीति और लाँक बँटावहिं। खरिहानन पर छपर छवावहिं।।
आधा अन्न जो पावै किसाना। सात बरष लह बिकै सो दाना।।
आधा पाइ किसान सभ, आधा लेइ सो अंस।
दरब अनेक सो पावै, सात बरिस निरसंस।।४०।।
नायब होहिं महा सग्याना। जेहि तें दुखित न होइ किसाना।।
तब दिन-दिन खेती अधिकाई। बंजर अंस लेइ चौथाई।।
सात बरिस जस बीज बिजोवै। काल समै परजा दुख खोवै।।
ऐसे लोग होहिं सुग्याना। जहाँ-तहाँ छावहिं खरिहाना।।
सात बरिस जब काल परेई। तब सुलतान अंस वह देई।।
नगर-नगर औ गावहिं गाऊँ। छप्पर छाइ देहिं सभ ठाऊँ।।
नेगी देस-देस कहँ जाहीं। आधा लाँक सो ढेर कराहीं।।
ऐसी नीति करहिं जग माहीं। परजा दुख पावै कहुँ नाहीं।।
पहिले हानि, लाभ पुनि होई। रतन समान बिकै अन्न सोई।।
सात बरिस लह निरिप कै, होइ दरब कै हान।
भरै राज भंडार पुनि, बिकै जो रतन समान।।४१।।

सोलह यूसुफ कारावास मुक्त खण्ड

सुनि सुलतान हियें हुलसाना। को पुरुष अस इन्द्र समाना।।
कहा कि एक पुरुष है सोई। जेहिके रूप जगत नहिं कोई।।
महासिद्ध औ पर उपकारी। सचिव ताहि राखै बंदि डारी।।
पातसाह तब सचिव बोलावा। पूँछा बात भेद निरमावा।।
का तुम्हार अस औगुन कीन्हा। सात बरिस बंदिखाने दीन्हा।।
कहा कि मम बनिता दिसि हेरा। तेहि कारन वह बंदि महँ घेरा।।
जब यूसुफ कहँ साह बोलावा। तब यूसुफ कहि अरथ पठावा।।
करै जो धरम-नीति सुलताना। गुन औगुन सभ जाइ सो जाना।।
बोलि सचिव कै नारि सोहाई। नगर-नारि सभ लीन्ह बोलाई।।

पूँछा बोलि जुलेखा, कही सत्त अब बात।
कौन दोष तुम बन्दि महँ, रखा बृथाँ ब्रष सात।।१।।

कहा जुलेखैं सुनु सुलताना। कहौं सत्त जो विधि भलमाना।।
यूसुफ कर दूषन कुछ नाहीं। यह सभ दोष अहै हम माहीं।।
यह यूसुफ जस बारह बानी। खोंट हमार जो कीन्ह अयानी।।
नगर-नारि सभ चहुँ दिसि बोलैं। बिरह जुलेखा दीन्ह सो खोलैं।।
हम सभ यूसुफ कहँ समझावा। छुट जननी तेहि और न भावा।।
कोउ बालक कै बात सुनावा। कोउ बरनेउ जस हाथ कटावा।।
सभै नगर कै नारि सोहाई। यूसुफ के ऊपर लौ लाई।।
उन्ह काहू कहँ उतर न दीन्हा। सौहँ जुलेखा दिस्टि न कीन्हा।।
यह निकलंक सिद्ध निरमाया। नगर-नारि पर कीन्ह न दाया।।

साखी देहिं जो सत्त कै, सत बोलै बर नार।
पातसाह हरषित भयउ, सुनि यूसुफ परहार।।२।।

पातसाह सुनि मोदित भयऊ। सारी कथा समुझि मन गयऊ।।
कहा सत्त यह कहै जुलेखा। महा सती बनिता मैं देखा।।
प्रेम तेज तोहि व्याकुल कीन्हा। तब सो बन्दि यूसुफ कहँ दीन्हा।।
जो कुछ हती बात सति भावा। आपु जुलेखैं बरनि सुनावा।।
कहा जुलेखा तें सुलताना। हम कहँ देहु दास बँदुआना।।
चौदह बरिस बीत तुम माहीं। तोरे काज करै कछु नाहीं।।

बोला सचिव कि दास तुम्हारा। तुमतें पूँछि बेसाहेउँ बारा।।
कोपित भयउ सुनत सुलताना। तैं मूरख कुछ भेद न जाना।।
तेहि चरित्र कुछ जानेहु नाहीं। राखेहु महासिद्ध बँदिमाही।।
दास जुलेखा को अहै, जेइँ सभ दरब लगाइ।
सपने देखि बिमोही, यह लगि तोहि धर आइ।।३।।
जब यूसुफ कहँ साह बोलावा। सिगरौ नगर उछलि कै धावा।।
पातसाह सभ कटक बोलावा। आगू लेइ कहँ सभै भेजावा।।
चहुँदिसि कटक ठाढ़ पुनि कीन्हा। सभै नगर कहँ अग्याँ दीन्हा।।
निरिप सभै भुइँ धरहिं लिलारा। मोजरा करै कटक कंधारा।।
पातसाह भेजा पहिरावा। दास अनेक सरूप सोहावा।।
तुरी एक पत करै सवारी। साज जड़ाऊ ताहि सँवारी।।
बहु तुरंग औ साजि सिंघासन। भेजा सभ यूसुफ के आसन।।
सभै नगर दरसन के आसा। धाये नर-नारी चहुँ पासा।।
जेहि दिन मिस्र बिकानेउ आई। भई भीर तेहि तें अधिकाई।।
नर नारी जोगी जती, राजा रंक नरेस।
यूसुफ दरसन लालसा, ठाढ़ भयउ सभदेस।।४।।
भयउ तुरी पर नबी सवारा। देखै कहँ धावा संसारा।।
मोजरा लेत औ करत जोहारा। आयउ पातसाह के बारा।।
देखत साह मुरछि होइ रहऊ। तब यूसुफ कहँ अंकम गहऊ।।
फिर-फिर मिलै औ हियें लगावै। देखि रूप चित चेत हेरावै।।
कहा सचिव बहु औगुन कीन्हा। जो अस पुरुष बँदि महँ दीन्हा।।
जाको रूप देखि यक बारा। भूख औ प्यास हेरावै सारा।।
औगुन जोग नाहिं यह रूपा। ताकहँ बन्दि डार अँधकूपा।।
सात बरिस तेहि बँदि महँ राखा। जो उन उचित बचन नहिं भाखा।।
सचिव ग्यान हरि काहूँ लीन्हा। जो यह दोष बिचार न कीन्हा।।
लखि यूसुफ कहँ भूप वह, सुठि होइ गयउ अधीन।
देखि रूप गुन आगर, महा चतुर परबीन।।५।।
बालक सत्त जो साखी दीन्हा। तबहूँ तुम कुछ न्याव न कीन्हा।।
जो मो कहँ अब देइ जुलेखा। लेइ दरब जो आवै न लेखा।।
कहा जुलेखा सुन सुलताना। यहि पर बलि-बलि करौं पराना।।
कोटिन जीव जो होहिं हमारे। रोम-रोम पर वारौं सारे।।

अब मैं देउँ तुमहिं यह दासा। पै मोरि अहै एक अरदासा।।
यह दरसन देखौं भरि आँखी। और न चाहौं विधना साखी।।
तुम सुलतान जगत कै साईं। राखहु ताहि सचिव की नाईं।।
सुनि यह बात सचिव मन लाजा। बेगि जुलेखा तें चित भाजा।।
आदि अन्त लह बिरह कहानी। आजु सचिव कहँ परी सो जानी।।

भयउ जुलेखा तें विमुख, औ उपजेउ मन लाज।
कहा कि ऐसी नारि सों, मोहि न रहा कुछ काज।।६।।

कहा कि मोहि तोहि संगति नाहीं। चाहौ जहाँ रहौ जग माहीं[1]।।
नहिं हम पुरुष न तुम अब नारी। दिच्छेहु तोहि लाई कुलगारी।।
तोर चरित्र चित्त नहिं कीन्हा। निरदोषी कहँ दुख मैं दीन्हा।।
जनम जो यह कलपाइह कोई। आजु करहि फल पाइह सोई।।
जो काहुहि कलपाइह कोई[2]। कहु कैसे फल पाइह सोई।।
तुरतहिं भई जुलेखा न्यारी। महल छाड़ि कै अनत सिधारी।।
यूसुफ रहै साह के पासा। भई जुलेखा हियें हुलासा।।
प्रीतम मुकुति बन्दि तें पाई। औ मोरि बन्दि दइयँ मुकुलाई।।
जग सुलतान कीन्ह अति दाया। पावौं दरस जरावौं काया।।

चाहौं दरस न और कुछ, वह अस निठुर निछोह।
जाइ बिवादौं साह कहँ, जो न देखावै मोह[3]।।७।।

सात खंड कैलास बनावा। स्वर्ग ते ऊँच सुमँदिल देखावा।।
लाखन दरब जो तामहँ लावा। सो छिन महँ सभ भयउ परावा।।
मिसिर माहिं अस मँदिल न दूजा। साह मँदिल नहिं तेहि सर पूजा।।
चित्र-विचित्र अनूप सोहावन। औ मखमल कै थान बिछावन।।
तास बादला परदे साजा। कलावतू के डोर विराजा।।
सो सभ साजि कुटी यक साजा। देखि दुखीमन ताकहँ भाजा।।
कुटी माहिं कीन्हा परबेसू। बैठी होइ वियोगिन भेषू।।

छाड़ ऊँच धौराहर, रहै सो झोपरी माहिं।
छाड़ प्रीति यूसुफ कर, और सो जानत नाहिं।।८।।

पाठान्तर-१०- नूर अली की प्रति में-'चीन्हेउँ तोहिं लाये कुलगारी।' पाठ दिया है। २०- नूर अली की प्रति में- 'कह कैसे कल पाइह कोइ' है, ३■- नूर अली की प्रति में दोहा संख्या-७ के नीचे 'तब यूसुफ कहँ साह बोलावा' चौपाई लिखी है, जो इस प्रति में दोहा संख्या-३ के नीचे लिखी गयी है।

भई नारि जब सचिव तें न्यारी। रही जाइ यक कुटी सँवारी।।
जहँ लह मीर मिसिर के देसा। करहिं चाह सभ भेजि संदेसा[२]।।
जो सँदेस लै आवहिं नारी। नाक कान लै जाहिं न सारी।।
गारी मार खाइ सभ भागे। भये अपत वै मीर अभागे[३]।।
करै कोटि उन्ह कहँ धिरकारा। दोउ[४] जग महँ मुख[५] होइह कारा।।
पहलें तुम यूसुफ होइ जाहू। करहु जुलेखा कै तब चाहू[६]।।
प्रीतम मोर उदित जग[७] भाना। तुम चमगादुर फिरहु लुकाना।।
टूक-टूक यह तन करि डारै[८]। कहि यूसुफ हौं रुधिर[९] पुकारै।।
सहसन बार जराऊँ काया[१०]। और पुरुष कै लखहुँ न छाया।।

तन मन धन सुति नयन मुख, नासिक अधर जो कीन्ह।
सो सभ पर यूसुफ नबी, छाप मोहर करि दीन्ह[११]।।६।।

तब सुलतान हिये महँ लावा। चहा सचिव कै कुरी चढ़ावा।।
यूसुफ कुरी चूँम सिरनावा। सचिव तात मैं पुत्र सोहावा।।
करौं काज जो अग्याँ होई। सचिव वृद्ध मैं बालक सोई।।
साह सचिव कहँ आयसु दीन्हा। सचिव पुत्र अस्थापित कीन्हा।।
कहा सचिव तैं पुत्र तुम्हारा। करै काज अब कहौ हमारा।।
लखि यूसुफ कर बुद्धि सरूपा। मोहित भयउ अधीन सो भूपा।।
औ यूसुफ कहँ अग्याँ दीन्हा। बाँटि लेइ कर अधिपति कीन्हा।।

पाठान्तर–१*- नूर अली की प्रति में दोहा संख्या ८ के साथ निम्नलिखित चौपाइयाँ दी गई है–

जहँ लह मीर मिसिर के देसा। दूती भेज सो कहैं संदेसा।।
सचिव सो संघ कहै तुम्ह त्याजा। कुरी रहत तुम्ह आवै न लाजा।।
औ यूसुफ तोहि चाहत नाहीं। कब लह रहौ भाकसी माहीं।।
जो संदेस लै आवहिं नारी। नाक कान लै जाहि न सारी।।
जिन्ह मूरख यह दीन्ह संदेसा। भये अपत तेहि मुख मसिलेखा।।
करै कोटि उन्ह कहँ धिरकारा। दुइ जग महँ होइह मुखकारा।।
पहिले तुम यूसुफ होइ जाहू। पाछें करहु जुलेखा चाहू।।
प्रीतम मोर उदित जस भाना। तुम चमगादुर फिरहु लुकाना।।
टूक-टूक यह तन करि डारौ। कहि यूसुफ हौं अधर पुकारौं।।
कीन्हेसि नारि जरावन काया। और पुरुष कै लखहुँ न छाया।।

२*- नूर अली की प्रति में यह अर्द्धाली 'दूती भेज सो कहैं सँदेसा' दिया है। ३*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में इस प्रकार है- "जिन्ह मुरख वह दीन्ह सँदेसा। भये अपत तेहि मुख मसि लेखा"।।
४- दुइ, ५-होइह मुख, ६*- नूर अली की प्रति में 'पाछे करहु जुलेखा चाहूँ।' पाठ है, ७- जस, ८- डारौं, ९- अधर, १०*- यह अर्द्धाली नूर अली की प्रति में 'कीन्हेसि नारि जरावन काया।' लिखी है। ११*- नूर अली की प्रति में दोहा संख्या ६ के नीचे - 'यूसुफ नबी कै परी अहाना।' इत्यादि चौपाई लिखी है।

दोउ कर पकरि साह कहँ दीन्हा। दै पहिराउर नायब कीन्हा।।
दीन्हा कटक हस्ति औ घोरा। दरब भँडार जो ओर न छोरा।।
देस नगर सभ हाथ भा, यूसुफ सचिव कहाइ।
पातसाह बिन तासुमति, कोउ न काज कराइ[1]।।१०।।

यूसुफ नबी कै परी अहाना। डौंडी फिरी जगत सभ जाना।।
देस-देस नायब बैठावा। लेखा अरथ औ भेद बतावा।।
बड़े जनन कहँ दीन्हा काजू। दिन-दिन कीन्ह सो आगर साजू।।
नगर-नगर कहँ पत्र पठावा। खरिहानन पर छपर छवावा।।
यूसुफ आप हुए असवारा। पातसाह कर काज सँवारा।।
ग्यानी लोग औ धरमी न्याई। तिन्ह कहँ देस-देस भेजवाई।।
सात बरिस लह उपजी खेती। आधा बाँटि लीन्ह भै जेती।।
एक बरिस जब नीति निबाहा। परजा सभ खेती कहँ चाहा।।
दिन-दिन सभै भई अधिकारी। भै हरियरि सभ भूमि उजारी।।
परजा सभ सुख पावहिं, धावहिं सुनि-सुनि नीति।
दिन-दिन खेती अधिक भइ, यहै जगत कै रीति।।११।।

ठावँ-ठावँ छाये खरिहाना। कीन्ह नीति भा सुखी किसाना।।
देस-देस के परजा धाये। खेती काज मिसिर चलि आये।।
सातौ दीप जो परी अहाना। आधा बाँटि लेइ खरिहाना।।
परजा सुखी अन्न अधिकावा। जहँ-तहँ नगर औ गाँव बसावा।।
खेती नये किसान करेई। राज अंस चौथाई देई।।
ऐसी नीति कीन्ह वह देसा। सुखी रंक औ राव नरेसा।।
खेती बढ़ी औ मगन किसाना। देहिं बाँटि चौथाई दाना।।
दूजे बरख अंस पुनि तीजा। पुनि आधा सभ देस पतीजा।।
चहुँ दिसि छाइ गये खरिहाना। सात बरस लह उठा न दाना।।
हा लै अंस अलग कर देई। जो कुछ रहै बाँटि तेहि लेई।।
सात बरिस सोइ उठा, मिला जो अंस किसान।
रहा न अन्न जगत महँ, छुट नृप के खरिहान।।१२।।

पाठान्तर–१*- दोहा संख्या १० के ऊपर की चौपाइयाँ नूर अली के प्रति में नहीं है।

मिस्र अकाल खण्ड

पातसाह कर अंसा सारा। सो खरिहान छाइ कै डारा।।
सात बरिस जब यह विधि बीता। भयउ सुदेस अन्न तें रीता।।
परा काल जल भूमि न आवा। गरजा घन नहिं मेघ दिखावा।।
खेती अन्न न उपजा कोई। दरब बहुत पर अन्न न होई।।
लाग बिकाय अन्न बहु मोला। तब यूसुफ खरिहानन खोला।।
परजा लोग दुखित जब देखा। बेंचै लाग सो अन्न सरेखा।।
चहुँ दिसि काल कठिन दुख देई। यूसुफ लाग उपास करेई।।
कहहिं लोग सभ जग कहँ देहू। तुम दूजे दिन भोग करेहू।।
कहा कि दोषी भूख के काजा। आप बरत तेहि कारन साजा।।

खाय महीप जो पेट भर, रहै काल महँ सोइ।
दुखिया भूख न जानहीं, रहहिं पेट भरि सोइ।।१।।

पातसाह जो भोरहिं खाई। सो दुपहर कहँ दीन्ह बँधाई।।
जेहितें भूख दुखी कै जानै। परजा की दाया मन आनै।।
लाहा[1] होत जगत महँ छावा। बिना अन्न कुछ और न भावा।।
लागी जरै अन्न बिन काया। रहेउ न स्वच्छ नेम औ माया।।
देस-देस अस काल जनाई। माँतैं लीन्ह पुत्र कहँ खाई।।
मूल कंद कुछ उपजेउ नाहीं। मानुष धरि मानुष कहँ खाहीं।।
खज औ अखज न करहिं बिचारी। खाहिं स्वान औ गोह मँजारी।।
यह विधि समै न कबहूँ आवै। सभकर सत औ धरम नसावै।।
सत्त न रहा नेम तजि भाजा। रही न स्वच्छ दया अरु लाजा।।

सोन रूप लै लोग सभ, जाहिं जहाँ खरिहान।
मिसिर लोग लै जाहिं घर, सुखिया सभै किसान।।२।।

जहाँ अन्न कर गाहँक आवै। दाँइ पीटि तेहि अन्न दियावै।।
देस-देस जब काल जनाई। मानुष मरहिं मीन की नाई।।
मिसिर नगर कर सुखी किसाना। काल-समय कुछ काहुँ न जाना।।
परजा सभै देस कर हाला। मिसिर नगर सुनि समै सुकाला।।
देस-देस के मानुष धाये। सुनि सुर-भच्छ सो मिसिर सिधाये।।

पाठान्तर–१-नूर अली की प्रति में 'हाहा' शब्द दिया है।

हाथें लिए दरब देखरावहिं। दाना अन्न न कतहूँ पावहिं।।
सुनि कै सोर मिसिर कहँ धाये। सात दीप के मानुष आये।।
देस-देस महँ परी अहाना। धन्य मिसिर औ धनि सुलताना।।
जेइँ परजा कहँ लीन्ह जियाई। सात बरिस सुर-भच्छ कराई।।
यूसुफ कहा बोलाइ कै, जेहि सौंपे खरिहान।
जहाँ कै गाहँक आवहिं, देहु लिखाइ सो आन।।३।।
पाँच बरिस जब काल बिहावा। सचिव मिसिर[1] तजि[2] लोक सिधावा।।
भयउ काल बस सचिव सोहावा। यूसुफ साज अधिक अधिकावा।।
दरब साज औ अरथ भँडारा। मँदिल गाँव औ हस्ति तुखारा।।
पातसाह यूसुफ कहँ दीन्हा। सुत समान यूसुफ कहँ कीन्हा।।
जहँ लह हती सचिव कै पूँजी। यूसुफ हाथ आई सभ कूँजी।।
तेहि के मँदिल कीन्ह परबेसा। धरम नीति तें मोदित देसा।।
जहँ लह राजकाज सुलतानी। यूसुफ सीस परा सभ आनी।।
पातसाह नित मोहित रहई। प्रान तें अधिक नबी कहँ चहई।।
जब लह लखै न रूप सरेखा। तब लह रहै सो बाउर लेखा।।
मरेउ सचिव सभ छाड़ि कै, दरब अरथ भंडार।
सो सभ यूसुफ कहँ दिहेउ, एक नारि सुकुमार।।४।।
यूसुफ भोर जो जाइ जोहारा। औ सुलतान आवै दुइ बारा।।
मिसिर सचिव जब सरग सिधारा। राज-काज सभ नबी सँभारा।।
परजा कटक देस सिर नावै। लखि यूसुफ कहँ मुरछा आवै।।
आवहिं काज लागि सभ कोई। रहै न ग्यान, जाइ बुधि खोई।।
बहुत सो दिन भर रहहिं अचेता। बाउर होहिं बहुत तेहि हेता।।
करै काज को, होहिं सो बावर। फिर-फिर करहिं प्रान नेवछावर।।
काज भुलाइ मौन होइ जाहीं। बात चीत कछु आवै नाहीं।।
पातसाह तब आयसु दीन्हा। मुख अम्बर कर अग्याँ कीन्हा।।
मुख अम्बर तब नबी सँवारी। बैठे सभा मुख अम्बर डारी।।
मुख अम्बर डारे सदाँ, करै राज को काज।
जब सो जाइ सोव नारि चलि, तब खोलै मुख राज।।५।।
ठावहिं ठावँ दूत बैठाई। निसि-दिन खबरि आनि पहुँचाई।।
आन देस कर जो बनजारा। आवहिं नाम लिखावहिं सारा।।
नावँ ठावँ सभ पूँछि जो लेहीं। आन लिखाइ नबी पहँ देहीं।।

पाठान्तर–१*- नूर अली की प्रति में-'मिसिर सचिव' पाठ है। २-निज

मिसिर देस के जावँत लोगू। निसि-दिन करहिं सुचित होइ भोगू।।
सात दीप कर मानुष धावा। तब परजा यूसुफ पहँ आवा।।
आन देस कहँ अन्न न देहू। मिसिर देस कर जस लै लेहू।।
यूसुफ कहा न संसय मानहु। अन्न दायक कहँ सत कै जानहु।।
तुम कहँ अन्न न खाँगहिं केहूँ। छावा अहै देस महँ गेहूँ।।
चहुँ दिसि के नर आवहिं सारे। देहिं लिखाइ नाम बनजारे।।
दुइ सो मोहर कर एक मन, लागेउ अन्न बिकाइ।
मिसिर देस कर अन्न सभ, सात दीप कहँ जाइ।।६।।

पहिलें सोन रूप सभ दीन्हा। मानुष मोल अन्न सभ लीन्हा।।
दूजे बरस सो मोती हीरा। चेरि दास पुनि मँदिल गँभीरा।।
चौथे बरिस हस्ति औ घोरा। बिरषब ऊँट मेष लै जोरा।।
अत्र-पत्र पँचयें ब्रस दीन्हा। छठयें असन, बसन ते लीन्हा।।
सतयें बरिस रहा कुछ नाहीं। कीन्हा मता तब आपुस माहीं।।
यूसुफ पास चलहु सभ कोई। का अब देहिं जो जीवन होई।।
कहहिं कि हमहिं मोल अब लेहू। अन्न दान अब हम कहँ देहू।।
जहँ लह मिसिर नगर कै नारी। सो सभ मोल लीन्ह यक बारी।।
नर-नारी-बालक सभ लीन्हा। औ पुनि मुकुत सभै करि दीन्हा।।
यक दिन हतेउ जुलेखैं, गोल यूसुफ कहँ लीन्ह।
यक दिन सारे मिसिर कहँ, यूसुफ बेचा दीन्ह[1]।।७।।

पातसाह तें लेखा कीन्हा। सात बरिस जो दाना लीन्हा।।
सो सभ दरब भँडार लखावा। कटक अपार दरब सभ पावा।।
दून दरब सभ काहूँ लीन्हाँ। दस गुन दरब निरिप कहँ दीन्हाँ।।
कहा साह तें उरिन करेहू। अन्न दान नित हमतें लेहू।।
कहा साह धनि यूसुफ ग्याना। दस गुन दरब दीन्ह जग जाना।।
सभै नगर कहँ लीन्ह जियाई। मोल लीन्ह औ मुक्ति कराई।।
यूसुफ मोल मोहिं अब लीन्हा। अन्न दान जो नित उठि दीन्हा।।
सिगरौ मिसिर दास औ चेरी। मोल लीन्ह हैं यूसुफ केरी।।
राव-रंक औ मीर अमीरा। यूसुफ हरेउ सभन कर पीरा।।
धनि यूसुफ माता-पिता, जहँ लीन्हेउ औतार।
जेइँ सो ग्यान औ बुद्धि सों, कीरति कीन्ह अपार।।८।।

पाठान्तर–१*– शेख और अली की प्रतियों में-'मोल सो दीन्ह' पाठ है।

अठारह

जुलेखा दशा खण्ड

भै सभ मिसिर दास औ चेरी। एक जुलेखा अन्न न हेरी।।
जब यूसुफ कै होइ सवारी। चढ़ै जुलेखा सुनत अटारी।।
बाट चलत जो दरसन देखै। तब जीवन कहँ सुफल बिसेखै।।
जब लह दरस न पावै गोरी। अन्न न खाइ पियै जल भोरी।।
जो यूसुफ कर नावँ सुनावै। दरब अरथ पहिराउर पावै।।
जब लह हतेउ दरब औ साजू। तब लह दीन्ह पिरीतम काजू।।
दरब न रहा तो भूषन देई। झूठहुँ आनि नाम जो लेई।।
यहि विधि दरब औ अरथ लुटावा। सुना नावँ जो दरस न पावा।।
जब यूसुफ मुख अम्बर डारी। भै व्याकुल औ प्रेम दुखारी।।

यहि विधि सदाँ वियोगी, रहै सो बिरह वियोग।
नींद भूख सुख छाड़िकै, करै वियोगिनि जोग।।१।।

यूसुफ नबी जो करै सवारी। कहहिं लोग सभ जाइ पुकारी।।
चढ़ै अटा पर बिकल सरीरा। औ नैनन बरसावै नीरा।।
जाइ नारि सभ कहहिं सुनाई। रतन समान जो अन्न बिकाई।।
माँगहु अन्न सचिव तें नारी। लेहु सभै परिवार उबारी।।
चेरी दास भूख के मारे। गयनि भागि होइ जिउतें कारें।।
सचिव मोल सिगरौ जग लीन्हा। अन्न दान सभ नगर काँ दीन्हा।।
यक दिन हतेउ जो यूसुफ आवा। तुम हीरा मोती बरसावा।।
तुमतें अन्न न राखहिं गोई। जाहि दियावहु देइह सोई।।
सभ कोउ छाड़ि दीन्ह तोहि नारी। अन्न लागि कत रहौ दुखारी।।

चेरी दास कहा करौं, मोहिं न भावै कोइ।
भूख प्यास लागै नहीं, यूसुफ दरस जो होइ।।२।।

तुम बाउर का कहौं अयानी। मोहिं न सोहाइ अन्न औ पानी।।
रती-रती यह काया जारौं। अन्न काज नहिं हाथ पसारौं।।
नींद भूख तेहि दिन बिसरावा। जेहि दिन नेह निठुर तें लावा।।
छुधा तृषा मोहिं कुछहु न लागै। बिरह आगि नित मन महँ जागै।।
कहा करौं लै अन्न अहारा। यूसुफ बिरह तजेउँ सुख सारा।।
मोकहँ एक दरस कै आसा। और न लागै भूख पियासा।।

यूसुफ दरस देइ मोहिं कोई। चाहौं असन बसन नहिं कोई।।
अब वै भये देस कै राजा। हमहिं देखि उपजै मन लाजा।।
फिरहिं सँखी मुख अम्बर डारे। डारत बिरह अगिनि मोहिं जारे।।
अन्न सोच मोहिं कुछहु नहिं, एक दरस कै भूख।
यक दिन जरिहै आगि तें, काया काठी सूख।।३।।
यहि कारन मैं सौंह न जाऊँ। पिउ न लजाहिं सुनत मोर नाऊँ।।
मोहिं देखि सँवरै सभ कोई। यूसुफ दास जुलेखा होई।।
घेरें रहै कटक सभ संगा। पाऊँ दरस कहौ केहि रंगा।।
औ डेउढ़ी पर जाइ न पाऊँ। मरौं हियें औ लाज लजाऊँ।।
यही नगर पिउ बसै हमारा। नैन ओट भै कोट पहारा।।
वे राजा होइ करहिं सवारी। हम सो फिरहिं तेहि बाट भिखारी।।
को पूँछै हम कहँ यह भेसा। हम सो रंक वै राव नरेसा।।
अब यह प्रान देउँ यक बारी। होउँ सो उरिन करौं बलिहारी।।
रहेउ न बसन देहँ महँ कोई। दिन भर अन्न न प्रापत होई।।
अब दर-दर मारी फिरौं, नगन भई जग माहँ।
रूप भयावन गुन रहित, कौन करै अलि छाहँ।।४।।
अब कैसे हम देखैं पावहिं। लखि सरूप हिय अगिनि बुझावहिं।।
हम उनकी दासी सम नाहीं। कहौ सँखी का जतन कराहीं।।
तब उन्ह कीन्ह न हम पर माया। जब हमार कोउ लखत न छाया।।
मोती लाल फिरहिं सँखि मारे। अब कौड़ी नहिं सदन हमारे।।
लखि आनन मोर चन्द लजाई। तब देखा नहिं दिस्टि उठाई।।
अब मूरति वह भई बिहूनी। को पतियाइ मढ़ी लखि सूनी।।
सभ कुछ गयउ, गयउ नहिं नेहाँ। भई भसम यह अम्बुज देहाँ।।
रहै भसम महँ अगिनि निमानी। जरै हिया कोउ परै न जानी।।
सभ जग नारि करहिं सुख भोगू। मोहिं बिधनै लिखि दीन्ह वियोगू।।
बन उपवन दोउ स्राग से, जाइ हिया होइ पार।
सर पिंजर बिरहिन परी, चहुँ दिसि अगिनि अपार।।५।।

षड्ऋतु खण्ड

रितु बंसत बन उपवन[1] फूला। जोगी जती देखि रँग भूला।।
पूरन काम कमान चढ़ावा। बिरहिन[2] हिए बान अस लावा।।
फूले फूल सिखी गुंजारहिं। लागी आगि अनार के डारहिं।।
कुसुम केतकी मालति बासा। भूले भँवर फिरहिं चहुँ पासा।।
मैं का करूँ कहाँ अब जाऊँ। मो कहँ नाहिं जगत महँ ठाऊँ।।
टेसू फूल जो[3] कीन्ह अँजोरा। लागी आगि जरै चहुँ ओरा।।
तुन फूले और नीब[4] फुलाने। करन करबंद बास बसाने[5]।।
फेरी त्यागि भिरिंग दुख दाहे। कानन भँवर[6] सँदेस सुनाये।।
पीतम भूल गए सुख पाई। निरमोही कहँ दया न आई।।

यह रितु चित कैसेव[7] रहै, सहै बिरह कै पीर।
पुहुपित देखि बसंत रितु, कैसेन[8] धरै सो[9] धीर।।१।।

कवित्त

भागे सोच वियोग विचार सभै, तन कान कोलाहल चाखहिं।
चाखे जोगी जती अनुराग सो, भँवर पतिंग सभै रस पाखहिं[10]।।
पाखे पेम सुरंग से देहँ, सनेह भरित ऋतु लाज जो लागहिं।
लागे टेसू दवाग्नि चहूँ दिस, कौन दिसा होइ बिरहिन भागहिं।।

सोरठा

हरे-हरे ऋतुराज, बन उपबन किसमत भए[11]।
आवे कौने काज, कंत न पूछे बात मोहिं।।
ग्रीषम ऋतु अब[12] परहिं अँगारा। खड़ी[13] अगिनि बिरहिन कहँ जारा।।
यह ऋतु महँ सब जाय सुखाई[14]। बिरह बेल उपजिव पलुहाई[15]।।
ग्रीषम तेज बिरह के आगे। मोरे हिए दवान्ह[16] से[17] लागे।।
मंदिल छाय उसीर सोहावा। रवन भवन रावन्ह[18] मन भावा।।
उमड़ि-घुमड़ि घन चढ़ै अकासा। संजोगिन मन भुदित हुलासा।।

पाठान्तर--१-आदिन, २-बिरही, ३-तो, ४-आँब, ५°- करना करी दिस बास बसाने, ६-भाँवर, ७-कैसे, ८-कैसेहु, ९-न, १०-पावहि, ११°- बनि आवें लोहित भए, १२-उत, १३-छेरि, १४-सुखानी, १५°- बिरह बेल अजहूँ न लहानी, १६-दाँउ, १७-अस, १८-आवन,

परै[1] लाग पावस कर डेरा। घर-घर काम कामिनिहि घेरा[2]।।
तुम[3] बिन[4] मैन जरावै जीऊ। काह करहु[5] निरमोही पीऊ।।
बेल[6] अँबिरित पूरन[7] चहुँ ओरा। हम कहँ बिरह हलाहल घोरा।।
निठुर कंत नहिं पूछै[8] बाता। कपट लगी फल अँबिरित राता[9]।।
नीर घटा उमड़ी घटा, घटा न[10] हम[11] चख नीर।
नैना खेत सीचहिं सदा,[12] घट-घट रही[13] सरीर।।२।।

कवित्त

सूखि समुद्र गए रवि तेज सो, सूखि गई सलिता[14] जलधारी।
सूखि गए पुहुमी रबि[15] मंदिल, सूखि गए जल मेघ सुखारी।।
सूखहिं कूप तड़ाग लता द्रुम, बेलि बली बन औ फुलवारी।
सेख 'निसार' अय बिरहानल, सूखै न ई अखियाँ दुखियारी[16]।।

सोरठा

सूखि भई[17] बेचैन, ग्रीषम ऋतु द्रुम बेलि बन।
एक न सूखे नैन, नित बरसहिं तरसहिं सखी[18]।।
ऋतु पावस घन घोर बिराजे। घोर घमंड घटा चढ़ि गाजे।।
घन गरजहिं दामिन लौकाहीं। नारि कंत के कोर[19] छिपाहीं।।
जौ-जौ गरज चमक अधिकाई[20]। तौ-तौ बाँह नारि उरलाई[21]।।
हम केहिके गिउँ लागहि[22] बाहाँ। पावस समय देहि गलबाहाँ[23]।।
खग मृग कीट[24] औ मानुष सारा। साजि सदन सुख करहिं अपारा।।
घर हमार सब भरिगा पानी। उत राजा हम वहि उतिरानी।।
जिनके[25] छिन बिछुरहि पिउ नाहीं। सुखी नारि पावस ऋतु माहीं।।
करम हमार भयो दुख दाई। का प्रीतम कहँ दोस[26] लगाई।।
दोस हमार जो अवगुन कीन्हा। निरमोही कहँ[27] मन चित दीन्हाँ।।
पावस घन अँधियार महँ कैसेन[28] बचै[29] परान।
होय रैन बज्जर कै, जो जागे सो जान।।३।।

पाठान्तर–१- बरै, २०- फिर घिर(घर) कामक मठ घेरा, ३-तम, ४-तन, ५-करै, ६-फल, ७-बैरे, ८-पूँछहि, ६०- का हियँ लगे फल अँबिरित राता, १०-'न' इस प्रति में नहीं है , ११-मोर, १२०- नैना घट समझहि सदा, १३-ढेर, १४-सरीता, १५-पति, १६०- सुखहिं 'निसार' अंबुनल सूखहिं, नाहिन ये अँखियान दुखारी, १७-भए, १८०- नित तरसहिं बरसहिं सखी, १६-गोद, २००- ज्यों-ज्यों चमक गरज अधिकाई, २१०- त्यों त्यों नाह नारि उर लाई, २२-लावैं, २३-बल नाहीं, २४-कवि, २५-जिन के छिन पिउ तजहिं सुनाहीं, २६-आस, २७-का, २८-कैसे, २६-बचिहे

बोलहिं मोर वियोग भरे, बन[1] कोकिल कूक हिया निज झूलै[2]।
झूलहिं स्याम बिना घनस्याम, घमंड से[3] मेघ चहूँ दिस दूल्है[4]।।
डोलहिं आसन जोगी जती के, 'निसार' महारस घूँघट खोलहिं।
घोलहिं[5] मेघ वियोगिन को दुख, डूबहिं चातक बोल न बोलहिं[6]।।

सोरठा

दादुर मोर अँदोर, एक ओर घनघोर उत।
बसै[7] पवन झकझोर, सूनें मँदिल न जाइ रहि।।
सारद समै रैनि उँजियारी। हँसि-हँसि पिय हिय लागहि नारी।।
देखि वियोगिन कंचन जोरी। सारद जला दिया होलिका री[8]।।
भा परकास अगस्त दिखावा[9]। सरिता सागर नीर सुखावा।।
सरद चाँदनी निरमल देखा। भा हमार बाउर कर लेखा।।
सब निसि बीती गिनत तराईं। सुख सोवहिं जिनके घर साईं।।
सेज अकेल सोम[10] तन जारी। जस घायल कहँ चाँदनि मारी।।
सरद समय पिउ चाहे[11] सेजा। धृक जीवन नहिं[12] फटै कलेजा।।
संयोगिन[13] साजहिं सुख साजा। बरन चाँदनी बसन[14] बिराजा[15]।।
सेत बादला सेत किनारी। हीरा मोति चंद घनसारी।।
सभै सेत[16] ओय दुख अधिकावैं। सेत बहुत सो घन कहँ भावैं[17]।।
सेत भभूत रमाय मुख, कर जोगिन को[18] तंत।
धूनी लायूँ[19] जाय तहँ, जहँ निरमोही कंत।।४।।

कवित्त

हौं तो जरी बिरहानल में, यह प्रीति हमें दिन राति जरावै[20]।
घायल प्रेम के बान ते[21] मोह[22], करै[23] बिन प्रीति सरूप लखावै[24]।।
घायल और जरो न जिए, सभ लोग सहैं सन जोत दिखावै।
काहे ते प्रान बचे[25] सजनी, नित सारद कै ससि संमुख धावै[26]।।

सोरठा

लाग बिरह कै बान[27], जरै बिरह की अगिन सों।
केहि विधि बचै[28] परान, सरद चाँदनी की[29] चिता[30]।।

पाठान्तर–१-'बन' शब्द इस प्रति में नहीं है, २-धोलहिं, ३-ते, ४-झलहिं, ५-खोलहिं, ६*- डूबहिं चित जो पिया मन कूलहिं, ७-सती, ८*- सारद लाय दीन्ह जस होरी, ९-दिखरावा, १०-सोभ, ११-चाहन, १२-हिय, १३-सधिऊ के, १४-निसि, १५-उपराजा, १६-सेज, १७-अधिकाए, १८-भाए, १९-कै, २०-लाऊँ, २१*- हिव सो जरे बिरहानल तें, दिन प्रीत रखै व आगि जराए। २२-ते नहीं है, २३-मोहीं, २४-करि है, २५-लाखाए, २६-तजो, २७*- नित रार करे सें संमुख धाएँ, २८*- लगे प्रेम के बान, २९-तजै, ३०-के, चुनी।

रित[1] हेवंत परगट्यो पाला। हम तन उठहिं बिरह कै ज्वाला।।
आवत जात न दिन निरमाये। रैन पहाड़ परै पुनि आये।।
भई जरि आभा सब संजोगिन। औ ककन मैं फिरहि वियोगिन[2]।।
बदन जुरावा सभ नर-नारी। बिछुरे प्रान जाय दुखारी।।
यक-यक पिछ[3] दुहूँ के होए। मिलि कै ओढ़[4] उपरनह[5] सोए।।
ककन बिछ सभ यह रित माहीं[6]। नित तन बिरह अगिनि निकसाहीं।।
अपने पंख[7] तें पावक झारा[8]। अपने अगिन होय जरि छारा।।
होय चकई निसि जागि बिताऊँ[9]। जस बूड़त महँ थाह न पाऊँ[10]।।
बाढ़ा बिरह रैन जस बाढ़े। अरुझे पेम फाँस हिय गाढ़े।।

निसि हेवंत पहाड़ भय, बिन पिउ कटै न रैन।
जागि बिहाऊँ रैन दिन, जाड़ करै बेचैन।।५।।

कवित्त

छाय गयो जग[11] सीत[12] निसार, लगे खग केलि करै सरसों[13]।
कैसे कटै यह रैन पहाड़ सी[14], बेधे[15] जोन्हाइ, हिया सरसों।।
देखैगो[16] कौन बसंत समय जब, ढ़ाँख[17] सती से बसे सरसों।
हेवंत के रितु मैं सखे[18], अब आँखिन फूलि[19] गई सरसों।।

सोरठा

हेवँत ऋतु अति[20] गाढ़, जाड़[21] जनावै आन तन।
घटा दिवस निसि बाढ़, आगे[22] बिरह विहाय तन[23]।।

लाग सिसिर ऋतु चित बैरागी। पवन उदास भए अब लागी।।
असन-बसन सो लाग सोहावन[24]। सिरी-पंचमी चाह जनावन[25]।।
अंग ते अंग कीन्ह उतसाहा[26]। नर-नारी में[27] उपजे चाहा[28]।।
भए हरख डफ बाजन लागे। कामिनि काम आय मन[29] जागे।।
चहुँ दिसि उड़ै गुलाल अबीरा। केहि विधि धरे बिरहिन[30] धीरा।।
पूरब जनम कर पाप कमावा। जो यह समय बिरह दुख पावा।।

पाठान्तर–१- अब, २•- भए जुरावन सभै सँजोगिन। औ कुफनू भय जरै वियोगिन, ३-पंछि, ४-उठहिं, ५-उटेरे, ६०- कुफनु पंछि सभ यह रितु नाहीं, ७-मुख, ८-छारा, ९-बितावे, १०-पावे, ११-सब, १२-सेत, १३०- लगे खग खग धिर सरसों, १४-सों, १५-बँधे, १६-देखिए, १७-धाँक, १८०- हेवंत गये अपने बिन संगहि, १९-भूलि, २०-उत, २१-बिरह, २२-जागे, २३-तब, २४-लाग बसन सो लाग सुहावे, २५-जनावे, २६०- राग हिएँ अँग कीन्ह अलसाहा, २७-हिय, २८-थाहा, १९-तन, ३०-सुहियरें।

पहिरहिं सखिहिं बसंती बागा। परगट भयो प्रेम अनुरागा।।
खेलहिं फाग जो साँवरि गोरी। हम तन लाय दीन्ह[1] अस[2] होरी।।
बौरे आँब बास महकाए[3]। फूले कुसुम जाड़ अधिकाए[4]।।
बंसी धुन औरे भई[5], बौरे आँब लतान।
मैं बौरी दौरी फिरौं, सुनि कोयल की तान।।६।।

कवित्त

लाग तुषार परै चहुँ ओर सखी यह[6] अंबुज देह डहेगी।
प्यो[7] बिन रैन दुलेही[8] पहार[9] सी, कैसे अकेली है दुःख सहेगी[10]।।
ऊपर[11] जाड़ जनावे निसार[12], हिए बिरहानल जो उलहेगी[13]।
बौरी सी दौरी फिरै ललिता सखि[14], बौरी लता फिर कैसे रहेगी[15]।।

सोरठा

चहु दिस बेल निसान, काम आप जागा हिये[16]।
केहि विधि रहे परान, बिरह बान बेधे सदा।।

पाठान्तर–१- लीन्ह, २-जस, ३-महकाने, ४०- फूले कुसुम चाह अधिकाने, ५०- तियसें तैसे अउर भए, ६-तेहि, ७-पिउ, ८-दुहेली, ९-बिहाय, १०-सहे को, ११-आवे, १२-तुषार, १३-जुआब भए को, १४०- बौरी सभै दौर फिरे ललिता सखि, १५-रहे को, १६०- हिएँ आन जागा मदन।

बीस भाइयों की मिस्र यात्रा खण्ड

सभै नगर भा अन्न दुखारी। दरस काज वह भई भिखारी।।
कबहुँ अन्न उन्ह माँगा नाहीं। करै उपास कुटी के माहीं।।
यूसुफ बात कहहिं सभ आई। चलहु अन्न अब देहु दियाई।।
नाउँ सुनत मुख फेरै सोई। कहाँ अन्न मोहिं देइ सो कोई।।
सेंत दरस नहि प्रीतम देई। अन्न हानि कत कान करेई।।
पै सुनि-सुनि मन होइ हुलासा। बैठे बाट दरस की आसा।।
जहँ सुलतान न पावहिं पारा। को दुबरे कर लेइ जोहारा।।
जेहि पर लावहिं पदुमिनि धूनी। को पूँछै यह वृद्ध बिहूनी।।
ठाढ़ झुरहिं राव औ राना। कहँ कंगाल की बात ओनाना।।

कौन राँखी अस हितू है, कहै जो जाइ सँदेस।
छह ऋतु कौ दुख बरनै, जाइ कहै उपदेस।।१।।

कनआँ नगर काल के मारे। राजा रंक भये सभ कारे।।
तब आये याकूब के पासा। कीन्हा रोइ-रोइ अरदासा।।
दरब साज बित अहै हमारे। पै अब मरहिं अन्न के मारे।।
मिसिर देस महँ अन्न बिकाई। लाखन लोग मोल लै जाई।।
भेजौ पुत्र दरब लै जाहीं। अन्न ल्याइ सभ लोग जियाहीं।।
पूतन आन कहा सभ कोई। जाहिं मिसिर जो अग्याँ होई।।
कहा जाहु औ अन्न ले आवहु। नगर लोग कहँ आनि जियावहु।।
करिकै साज पिता पहँ आये। होइ कै बिदा सो मिस्र सिधाये।।
तब याकूब नयन भरि आये। सँवरि पुत्र, चख जल बरसाये।।

अन्न ले आवहु मिसिर तें, लेहु सो नगर जियाइ।
यूसुफ खोज किहेउ तहाँ, मकु कतहूँ मिलि जाइ।।२।।

कहा कि पुत्र जाहु वह देसा। यूसुफ खोज सो किहेउ नरेसा।।
हँसिकै पुत्र कहैं यह बाता। ग्याँन तुम्हार भयउ का ताता।।
हम परतीत अभै लह नाहीं। यूसुफ कहँ सँवरहु मनमाही।।
यूसुफ होत जियत जगमाहाँ। हम पह देख सो दुख अवगाहाँ।।
सातौ दीप खोज तेहि करते। दुख संताप पिता कर हरते।।

तब याकूब कहा फिर रोई। मोरे हियें न निसचय होई।।
यूसुफ अहै जियत जगमाहीं। पै का करहिं न दरस देखाहीं।।
दसौ बंधु कै भई तयारी। दस ऊँटन पर कीन्ह सवारी।।
औ दस ऊँट सो कोतल कीन्हा। विषै बहुत बेंचै कहँ लीन्हा।।
चले पुत्र सभ मिसिर कहँ, भये बिदा यक बार।
बीस ऊँट लै सँग चले, औ सभ साज सँभार।।३।।
दरब लीन्ह औ कीन्ह पयाना। जाइ सो मिस्र नगर नियराना।।
जहँ खरिहान हतेउ बड़ भारी। तहँ उतरी दस बन्धु सवारी।।
नेगिन कहा कि लेहु बसेरा। काल्हि भोर उठि जाहु सबेरा।।
आन देस कै नायक आवहिं। जाइ सचिव तें अर्थ जनावहिं।।
अग्याँ होइ सचिव कै सोई। पावै अन्न देस सभ कोई।।
दसौ बन्धु तहँ लीन्ह बसेरा। मिस्र नगर महँ कीन्हा फेरा।।
देखा नगर पुहुप जस फूला। करभी देखि बिदेसी भूला।।
पूँछा अरथ बात सभ जाना। नावँ सचिव औ जग सुलताना।।
और नाम नहिं जानै कोई। सचिव मिसिर कह लावै सोई।।
दसौ बन्धु अस्थल तहाँ, कीन्ह जहाँ खरिहान।
देखि अन्न अचरज करहिं, धन्न सुकृत सुलतान।।४।।
नेगिन आइ नाउँ लिखवाए। कनआँ नगर के नायक आए।।
दूतन आनि नबी से कहा। बंजारन कै महिमा महा।।
कनआँ नगर के दस बनजारे। महाबली औ दई सँवारे।।
एकतें एक सरस बलवाना। रूप उजागिर सिद्ध सुजाना।।
भरे दरब औ रूप सुहाये। कारन अन्न मिसिर कहँ आये।।
पातसाह कर जो खरिहाना। तेहिके निकट कीन्ह अस्थाना।।
बहुत अलख कर सेवा करहीं। फिर-फिर माथ भूमि पर धरहीं।।
सुनि यूसुफ मन महँ हुलसाना। औ नैनन आँसू बहिराना।।
जनम भूमि कै माया आई। पिता काज भा दुख अधिकाई।।
समाचार सुनि यूसुफ, हिरदय कीन्ह हुलास।
जनम भूमि कर नाउँ सुनि, उठी मोह उत्थ्यास।।५।।
यूसुफ दल सभ साजि मँगावा। चालिस सहस ओपची[1] आवा।।
मात मतंग बार भै ठाढ़े। एक-एक जस गिरवर गाढ़े।।

पाठान्तर—१- नूर अली की प्रति में 'तुरय' शब्द है।

गूँजहिं सिंह मँजूषा माहीं। गैंडा लरहिं अंदोर कराहीं।।
तीन कोस लह तुरी सवारा। भये ठाढ़ हठि बार दुआरा।।
सुतुरनाल हथनाल चढ़ाये। बान कमान बार सभ छाये।।
खंड-खंड सभ ठाट बनावा। सतयें खंड यूसुफ छबि पावा।।
द्वारपाल सभ पँवर सँभारे। ढलइत और असावल सारे।।
औ नौबत बाजै अधिकारा। गाजै मेघ टकोर नगारा।।
पहिने तास बादला जोरा। ठाढ़े दास भये चहुँओरा।।
तुरी ऊँट रथ पालकी, औ हस्तिन को ठाट।
सरग लाग कैलास वह, तहँ यूसुफ कर पाट।।६।।

कोस एक लह भयउ बिछावन। पुहुप बाटिका सुभग सोहावन।।
जरित जराऊ साजि सिंघासन। बैठा तहाँ सिंह के आसन।।
आग्याँ कीन्ह उन्हैं लै आवहिं। करहिं सुभेंट अन्न तब पावहिं।।
नेगी जाइ बेग लै आये। कहा कि तुम कहँ सचिव बोलाये।।
यूसुफ सौहँ बन्धु जब आये। माया मोह हिये अधिकाये।।
निकट आइ कै कीन्ह जोहारा। भरमे देखि कटक खंधारा।।
अपने निकट सुआसन दीन्हा। औ अग्याँ बैठै कै कीन्हा।।
एक-एक कहँ जब पहिचाना। हुलसा हिया समुद हुलसाना।।
पूँछा नावँ-ठावँ कित अहा। पिता नाम लै आपन कहा।।
पिता तुम्हारे जियत हैं, बल बुधि रूप समेत।
कहा कि दुरबल वृद्ध भै, औ अनयन सुत हेत।।७।।

हम याकूब नबी के बंसा। आये इहाँ अन्न के संसा।।
पूँछा अन्ध भये केहि कारन। तब लागे सभ हिये बिचारन।।
पुत्र एक हुत यूसुफ नाऊँ। सो पुनि खोइ गयउ तजि ठाऊँ।।
जेहिके बिरह भोग तजि दीन्हा। औ निस-दिन उन्ह रोदन कीन्हा।।
रोवत नैन भये दोउ अंधा। सँवरै हियें सदा चित बंधा।।
यूसुफ कहा कि अचरज भारी। बिधनैं दीन्ह पुत्र अधिकारी।।
बारह पुत्र दइयँ तेहि दीन्हा। का भा एक पुत्र हरि लीन्हा।।
महासिद्ध औ अलख के देहाँ। भये अन्ध कत पुत्र के नेहाँ।।
कहा पुत्र वह हतेउ पियारा। महासिद्ध कर प्रान अधारा।।

काहुहि पुत्र न देखहि, रहै सदा बेचैन।
चौबिस बरस व्यतीत भै, रोवत दिन औ रैन।।८।।

बाहर नगर कुटी यक साजे। तहँ बैराग करै सभ त्यागे।।
तेहिके सोग हमैं दुख भारी। पिता लागि नित रहैं दुखारी।।
तेहि सो पुत्र कर है लघु भ्राता। राखै ताहि निकट अब ताता।।
यूसुफ कहा कहौ सति बाता। केहि कारन तेहिके रंग राता।।
केहि गुन ताकहँ चाहत अहा। जेहिके दुख दुखित भा महा।।
लागे कहै रूप अधिकारी। विद्या अधिक हतेउ गुनभारी।।
सभ पुत्रन तें हतेउ प्रबीना। रूप बुद्धि गुन विधनैं दीना।।
बार बयस तें प्रान अधारा। नैन ओट छिन करत न बारा।।
सुनि यूसुफ मन महँ अभिलाखा। तजेउ क्रोध कुछ हियें न राखा।।

दाया कीन्ह अनेक विधि, औ हम्माम भेजाइ।
कै असनान औ मरदन, बसन अनूप पिन्हाइ।।९।।

यूसुफ राज कोप तब कीन्हा। जेहितें जाइ लखा नहिं चीन्हा।।
जो काहू के दूत पठाये। भेद लेइ कहँ हम पहँ आये।।
जो यह बात सत्त कहुँ होई। तुम महँ एक न बाँचै कोई।।
एक-एक कहँ सूरियँ देऊँ। हस्ति चरन तर पस्त करेऊँ।।
लागे कहै कि हम कनआनी। बोलैं बोल सुनहु इबरानी।।
जब इबरी महँ बोल सुनावा। सभ उत्तर यूसुफ तें पावा।।
पहिले जो आपुस महँ बोले। सो सभ भेद सचिव पुनि खोले।।
सुनिकै रहे सभै सिर नाई। काँपि उठे जब कोप सुनाई।।
ना हम दूत न हम हरकारा। सुत याकूब सिद्ध अवतारा।।

नाम तुम्हार जो बिदित है, सुना पितैं तुम नाउँ।
तेहि कारन हम आये, अन्न लेइ यहि ठाउँ।।१०।।

अन्न लागि हम नगर दुखारी। तेहि कारन आये बैपारी।।
करिकै कोप छमा तब कीन्हा। औ पहिराव बन्धु कहँ दीन्हा।।
अनवन भोग अनूप भेजावा। दाया कीन्ह जो कहत न आवा।।
भोर-होत पुनि पास बोलाये। आदर कीन्ह निकट बैठाये।।
कहा अन्न बहु मोल बिकाई। पातसाह कहुँ देइ न जाई।।
कहा कि पितैं सुना तुम नाऊँ। भेजा हमहिं बेगि यहि ठाऊँ।।
लाये बस्तु सो दीन्ह लगाई। पावहिं अन्न तो लोग जियाई।।

सुनिकै नाम पिता सुख माने। धरम-पुन्नि सभ नगर बखाने।।
तेहि यूसुफ पुनि मोल कराई। दुइ सै दिरम सो दीन्ह मँगाई।।
तुम्हैं देखि भइ लालसा, लखौं एकादस बन्ध।
जेहिकै बन्धु हेराना, भये पिता चख अन्ध।।११।।
यूसुफ कहा जाहु नौ भाई। एक बन्धु कहँ तजि पहुनाई।।
जो यक बन्धु रहै हम पाहीं। तो तुम कहँ सुधि भूलै नाहीं।।
कहौ पिता तें यहै सँदेसा। बन्धु छाड़ि हम आये बिदेसा।।
जो तुम पुत्र संग करि देहू। दूजी बार दोऊ सुत लेहू।।
तब आपुस महँ कीन्ह बिचारा। कौन बन्धु इहाँ रहै हमारा।।
यूसुफ कहा कि पाँसा डारहु। जेहि पर परै सो राखि सिधारहु।।
सभऊँ नाम परा पुनि पाँसा। चले ताहि तजि करत हुलासा।।
सभऊँ रहा मिसिर निरमाया। भा अधीन लखि यूसुफ दाया।।
सभऊँ जस यूसुफ दुख दीन्हा। तस मेहमान उनहिं वह कीन्हा।।
सभऊँ कहँ राखा मिसिर, इब्न अमीन के आस।
निसि-दिन रहै वियोग महँ, हियें दरस कै प्यास।।१२।।
भा परभात बिदा तब कीन्हा। बीस ऊँट भरि गेहूँ दीन्हा।।
कहा कि यह घर अहै तुम्हारा। आवहु अन्न बाँटि यह सारा।।
लघु भ्राता कहँ संग लै आवहु। दून अन्न तेहिके संग पावहु।।
देखि बन्धु मन निसचयँ होई। केहि विधि हतेउ बन्धु पुनि सोई।।
जेहि कारन उन्ह रोदन कीन्हा। पुत्र बिछोह नयन तजि दीन्हा।।
जो वह बन्धु ले आवहु नाहीं। अन्न न मिलै रीत फिर जाहीं।।
सभ मिलि कहा ताहि लै आवहिं। पै जो पिता कर अग्याँ पावहिं।।
जबतें यूसुफ कहँ बिग खावा। तबतें पिता न हम पतियावा।।
हतेउ जो बन्धु यहूदा नाऊँ। सो पुनि सपत कीन्ह वह ठाऊँ।।
महा हरष सुखसें गये, पहुँचे कनआँ माहिं।
भेंट कीन्ह जब पिता तें, कुछ पूँछा उन्ह नाहिं।।१३।।
पूँछा यहै कि यूसुफ नाऊँ। कानन सुना पुत्र केहु ठाऊँ।।
बोले पुत्र कहौ तुम काहा। चौबिस बरिस बीत जग माहा।।
यूसुफ कहँ लैकै बिग खावा। पूँछौ खबर सो काह बतावा।।
पूँछौ अरथ मिसिर कर सारा। लाये जासु अन्न अधिकारा।।
मिसिर सचिव अस दाया कीन्हा। अन्न अधिक जिन हम कहँ दीन्हा।।

जस उन्ह कीन्ह सो हम पर दाया। तस नहिं करै मिसिर पर माया।।
सभै मिसिर कहँ मोल जो लीन्हा। तब कुछ अन्न नगर कहँ दीन्हा।।
अस किरपा उन्ह कीन्ह अपारा। कहि न जाइ वह सुख अधिकारा।।
दीन्ह भोग अम्बृत, पहिरावा। अपने निकट हमहिं बैठावा।।
लाख लोग कर जोरैं, ठाढ़े धरैं लिलाट।
हमहिं बोलि बैठावा, निकट सिंहासन पाट।।१४।।
औ फिर-फिर पूँछै तोहि ताता। भा अधीर सुनि दुख कै बाता।।
अन्न दीन्ह बहु आदर कीन्हा। इब्न अमीन कहँ बोलि सो दीन्हा।।
अबकी बार जो तेहि लै जाहीं। दून अन्न लावहिं घर माहीं।।
तब याकूब कहा सुन बाता। कौन काज बोलेउ लघु भ्राता।।
कहा सुतन कीन्हा बहु दाया। देखै लागि सो ताहि बोलाया।।
तेहितें संग देहु सुत सोई। जेहितें अन्न परापत होई।।
सभऊँ कहँ राखेउ बरियाई। इब्न अमीन कहँ ल्यावहु जाई।।
तब याकूब नयन जल ढारा। रोवै लाग सो छाड़ि डफारा।।
मैं यूसुफ कहँ सँग कै दीन्हा। तेहिके सोग नयन हरि लीन्हा।।
कौन रही परतीत तुम्हारी। यक बिछोह अबहीं लगि जारी।।
औ तुम नाम कहा केहि कारन। आयहु फेरि मोर जिउ जारन।।
बात तुम्हारि न सत्त है, सत्त एक करतार।
तेहि सौंपों वह बंस कहँ, जो रे उतारै पार।।१५।।
परजा पवन आनि सभ घेरा। चलहिं मिसिर कहँ फेर बसेरा।।
तब याकूब अन्न कहँ बाँटा। सभ कहँ दीन्ह जहाँ लह आँटा।।
हतेउ जो भार यहूदा केरा। तामहँ दुइ सै दिरहम हेरा।।
कहा कि यह हम जानहिं नाहीं। राखा केइँ यह गेहूँ माहीं।।
मिसिर सचिव यह दाया कीन्हा। दाम हमार फेर उन्ह दीन्हा।।
तब याकूब कहा रिस खाई। बिन आग्याँ जो मोहरैं आई।।
सो लै जाहु सचिव के पासा। आगे धरहु करहु अरदासा।।
धोखें दरब गयउ हम साथा। सो पुनि फेरि ले आये नाथा।।
तुम पर सचिव करहि बड़ दाया। जो देखै तुम सत्त सोहाया।।
दीन्ह दरब पुनि साथ कै, इब्न अमीन कहँ बोल।
कहा कि सौंपा अलख कहँ, जो जग मित्र अमोल।।१६।।

इब्न अमीन कहँ हिये लगाई। कहा कि खोज किहेउ निज भाई।।
लै यूसुफ कर नाम सोहावा। तात पुत्र कहँ रोदन भावा।।
इबराहीम कै पाग सोहाई। दिहेउ सचिव कहँ सौंह लैजाई।।
रोइ-रोइ पुनि बिदा कराई। चले सो संग फेर दस भाई।।
यूसुफ नबी पंथ नित देखै। अनुज हेत निज बिकल सरेखै।।
पहुँचे मिसिर नगर दस भाई। दूतन जाइ सो बात जनाई।।
कनआँ नगर के बहु बनजारे। आये मिसिर नगर कहँ सारे।।
नौ भाई जो आगे आये। एक बन्धु तेहि संग अधिकाये।।
जस आगें उन्ह ठाट सँवारा। तेहितें और साज अधिकारा।।

द्वारपाल दौराइ कै, भेजा बन्धु बोलाइ।
सभै बन्धु मिलि आइकै, बैठ सचिव सिरनाइ।।१७।।

देखत बन्धु प्रान हुलसाना। उमड़े नयन हिय उलथाना।।
बहुरि पिता कर सँवरि बिछोहा। रोवा बहुत उठी हिय छोहा।।
पूँछा खेम कुसल व्यवहारा। पिता कुसल पूँछा कई बारा।।
कहेउ बन्धु तब पिता असीसा। आगे रखा पाग धरि सीसा।।
देखि पाग यूसुफ पहिचाना। चूँबि पाग सिर धरि बिहँसाना।।
औ मन महँ बहु कीन्ह हुलासा। पितैं पाग भेजे भइ आसा।।
जाकहँ यह पहुँची है पागा। महासिद्ध सो भयउ सुभागा।।
विधि किरपा अस अहै अपारा। मिला राज भा सिद्ध अवतारा।।
सिर चढ़ाइ फिर नैनन लावा। पाग न होइ भाग हम आवा।।

धन्न भाग जो पाग यह, पावै नबी के हाथ।
होइ नबी निसचैं सो नर, जगत नवावै माथ।।१८।।

आगे दरब यहूदैं धरा। कोऊ भूलि गेहूँ महँ भरा।।
सो हम फेरि ले आये ताही। जेहितें सत्त धरम तें लाही।।
यूसुफ कहा तुम्हैं हम दीन्हा। औ काहूँ नहिं धोखा कीन्हा।।
मन महँ कहा कि पितैं भेजावा। इन्ह अस सत्त सुकृत कहँ पावा।।
कहा बन्धु यह अहै सोहावा। जाकर जेठ बन्धु बिग खावा।।
बहु बिनती औ हट हम कीन्हा। तब यहि पितैं संग करि दीन्हा।।
और-और कीरति गुन भारी। सुनि हरषित होइ भेज दुखारी।।
कीन्हा अवधि सौंह औ बाचा। तब संग कीन्ह बोल लै साँचा।।

सुत खावा बिग माँझ महारन। तुम परतीति गई केहि कारन।।
हम ताकहँ संग लै गये, लिखा मेटि नहिं जाइ।
यूसुफ भोजन बिग करै, हमतें पिता रिसाइ।।१६।।
तब यूसुफ बाकूल बोलाई। कहा कान महँ तेहि समझाई।।
छः तूरी सभ साज बनाई। आगें धरहु बन्धु के ल्याई।।
अनवन भोग छः तूरी साजा। जो कुछ भोग निरिप कहँ छाजा।।
तूरी साजि कै आनि जनावा। यूसुफ नबी कै अग्याँ पावा।।
कहा कि भोग करहु हम आगू। सेवा करहिं होइ बड़ भागू।।
तुम सो नबी के पुत्र सोहाये। औसर परें यहाँ चलि आये।।
बन्धुन कहा कि दया तुम्हारी। नाहीं कहाँ अस गात हमारी।।
तब बाकूल ले आय छः तूरी। आगे धरा सो जोरी-जोरी।।
यूसुफ कहा बन्धु मिलि जाहू। यक तूरी मिलि दुइ जब खाहू।।
दुइ भाई यक तूर अन, लागे मिलि-मिलि खाइ।
यक तूरा लघु बन्धुकै, आगे धरा रहाइ।।२०।।
एक गरन्थ माहँ अस देखा। भोग बन्धुकर जबहिं बिसेखा।।
कहा चित्रसारी महँ जाहू। सभ यकन्त होइ भोजन खाहू।।
चित्र भवन महँ भाई गये। देखि चित्र चित चकृत भये।।
कहा कि जो करनी हम कीन्हा। सो सभ सत्त-सत्त लिखि दीन्हा।।
डरे हिये औ करहिं बिचारा। केइँ यह भेद लिखावा सारा।।
भूला भोग भई मन त्रासा। आये फिर यूसुफ के पासा।।
यूसुफ कहा कि कागद साँचा। इबरी लिखा जाइ तेहि बाँचा।।
जो तुम पढ़हु तो देहि मँगाई। हम इबरी जानहिं सभ भाई।।
यूसुफ कागद बोलि बढ़ावा। पढ़िकै हिये त्रास अधिकावा।।
बाँचि-बाँचि आपस महँ, कहै सो इबरी बैन।
कहि न सकहिं लाजन मरहिं, भूलि गयउ सुख चैन।।२१।।
इब्न अमीन कहँ कागद दीन्हा। बाँचि अरथ सभ परगट कीन्हा।।
यूसुफ हियें कोप अधिकावा। कीन्ह ठाढ़ जल्लाद बोलावा।।
कहा कि ये झूठे बैपारी। मारौ इन्हैं सो सौंह हमारी।।
भाइन सुनिकै बिनती करहीं। बार-बार सिर पायन धरहीं।।
पिता नाहिं को धरहर करई। यूसुफ नाहिं को माथा धरही।।
यूसुफ साथ जो कीन्ह बुराई। पिता तें मोख न मुकुति कराई।।

यूसुफ तें नहिं मोख करावा। भये प्रगट जो पाप कमावा।।
दोउ जग महँ हम कहँ नहिं ठाऊँ। का अब करहिं होइ कत साऊँ।।
सुनि यूसुफ कहँ दाया आई। औ बन्धुन कै मुकुति कराई।।
तब सो आप कहँ परगट कीन्हा। एक-एक कहँ दरसन दीन्हा।।

इब्न अमीन यूसुफ कहँ, हिये कीन्ह जब ध्यान।
व्यापेउ बिरह हिये महँ, नैनन जल बरसान।।२२।।

सँवरि बन्धु कहँ रोवन लागा। भूला दुख हिरदय महँ जागा।।
कहा कि कस रोवै यह बारा। भोग खात कस रोज पसारा।।
इब्न अमीन तब कहेउ उघारी। करम सँवरि हम भये दुखारी।।
बन्धु हमार सरस गुन रूपा। बिछुरि गयउ वह सिद्ध अनूपा।।
दुइ-दुइ बन्धु खाईं यक संगा। सँवरि दीप हिय भयउ पतंगा।।
झरै हिया चख भर-भर आई। उमँड़ा समुँद थाँमि नहिं जाई।।
बन्धु हमार होत जो आजू। कत अकसर हम बीतत काजू।।
वह सुबन्धु सभ जग उपराहीं। हम अभाग बिछुरेउ जग माहीं।।
ऊभ साँस लै फिर-फिर रोवा। मया मोह हिय जाइ न गोवा।।

लखि यूसुफ निज अनुज कहँ, रोये छाड़ि डफार।
मन के साखी नैन दुइ, माया समुँद अपार।।२३।।

कहा कि जो तुम आग्याँ देहू। यह बालक कर रोज हरेहू।।
तो वह संग भोग मैं खाऊँ। होइ इकन्त जो आयसु पाऊँ।।
कहैं बन्धु यहि कर बड़ भागू। पावै भोग जो ठाकुर आगू।।
तब बाकूल उठायउ तोरा। चलेउ बन्धु दुइ पूरन जोरा।।
होइ इकन्त मुख अंबर टारा। भाई कहँ भरि नैन निहारा।।
लखि यूसुफ कर रूप सुहावा। इब्न अमीन कहँ मुरछा आवा।।
होइ बिकरार परा छिति माहीं। जानहुँ प्रान पिंड महँ नाहीं।।
लै गुलाब तन पर ढरकावा। भई सुद्धि चख जल बरसावा।।
यूसुफ कहा कि मिरगी आई। भोग खात कत चित अकुलाई।।

बंस नबी यह रोग तें, कबहूँ दुखी न होइ।
जेहि कारन व्याकुल भयउँ, कहौं बिथा अब सोइ।।२४।।

बन्धु हमार बिछुरि जो गयऊ। पिता अनैन जासु दुख भयऊ।।
तुम सरूप हुत बन्धु हमारा। आनमान एक साँचैं ढारा।।

नैन बैन मुख सरवन नासा। सातछाल कीन्हेउ परगासा।।
ताहि सँवरि मैं भयउँ बेहाला। होइ अलख जो दीन दयाला।।
तुम मोर बन्धु सत्त होइ जाहू। छाड़ि देइ सूरज जस राहू।।
तब यूसुफ गहि हियें लगाई। रोइ उठा कुछ बात न आई।।
माँता कोखि रकत उलथाये। रोइ उठे दुइ जननी जाये।।
दुख की अगिनि परा जस पानी। डही बेलि फिर कै पलुहानी।।
पूँछै लाग पिता कै बाता। केहि विधि रहै वियोगी ताता।।
बन्धुन मोहिं कूप महँ डारा। बनजारन तहँ आनि निसारा।।

चले संग नायक लियें, तब घेरा फिर आइ।
बेंचा नायक हाथ मोहिं, नौ दिरहम कहँ भाइ।।२५।।

औ चरनन महँ बेरी नवावा। भारी टाट झूल पहिरावा।।
आपन कथा कही पुनि सारी। आदि अन्त लह विथा बिचारी।।
औ कागद वह खोलि देखाई। पिता काज जो रखा छिपाई।।
दीन्ह अनुज कहँ कागद सोई। अब तुम रखौ पास यह गोई।।
मैं छल करौं जतन बहु रंगा। जेहि तें अनुज रहौ मम संगा।।
कहा अनुज जो चहौ सो करहू। बेगि बियोग पिता कर हरहू।।
होइ निस्चिन्त सुखी दोउ भ्राता। आये करत सभा महँ बाता।।
निकट मँदिल यक हतेउ सोहावा। तहाँ रात कहँ बासा पावा।।
बड़े मोलकर नग यक अहा। दीन्ह ताहि नेगी सें कहा।।

इब्न अमीन के ऊँट महँ, पैमाना कसि देहु।
कोस एक चलि जाहिं जब, तब तुम खोज करेहु।।२६।।

भोर होत सभ ऊँट भराये। गेहूँ दीन्ह जहाँ लह आये।।
होइ कै बिदा इग्यारह भाई। कोस एक जब पहुँचे जाई।।
तब पुनि जाइ सवारन घेरा। मग सें बैपारिन कहँ हेरा।।
लाल जरित अनमोल सो भारी। ताहि चोराइ लीन्ह बैपारी।।
कहहिं कि आहिं नबी सुत बारा। हम महँ नाहिं चोर बटपारा।।
करभी मुख बाँधेहिं तब जाहीं। पर-खेती हम ऊँट न खाहीं।।
लेहु हेरि जस चाहौ भाई। यह औगुन बिधि हमैं न लाई।।
औ हम पर कीन्हा अति दाया। को यह करम करै निरमाया।।
ल्याये फेरि ऊँट सभ खोला। सुनि यह बात बन्धु यक बोला।।

जाके ऊँट विषय वह पाई। होइ सो दास करै सेवकाई।।
यहै बेद को भेद है, तसकर बिखै चोराइ।
दास होइ जित दिवस वह करै ताहि सेवकाइ।।२७।।
इब्न अमीन कर भार जो खोला। निकसेउ तामहँ रतन अमोला।।
तब सो लीन्ह नेगिन अगुवाई। चोर-चोर कै चले चलाई।।
दसौ बन्धु तब कीन्ह बिचारा। हम कहँ पिता करहि हत्यारा।।
इब्न अमीन कहँ छाड़ि जो जाहीं। पिता जियत हम पाउब नाहीं।।
तेहितें सभै सचिव पहँ जाई। बिनती करहिं जोरि सिर नाई।।
नेगी कहहिं चले तुम जाहू। तुम महँ दोष न कीन्हा काहू।।
बहुत कहा पर एक न माना। गये बन्धु सँग जस अग्याना।।
यूसुफ कहा कि बेग सिधारहु। इब्न अमीन कहँ जियत न पावहु।।
महासिद्ध कै सुत कहलावहु। करि अकरम फिर मुख दिखलावहु।।
हाथ जोरि बिनती करहिं, हम न लागि कुछ खोर।
यहि कर बन्धु जो चोर हुत, सोइ भयउ यह चोर।।२८।।
बन्धु चोर कर चोरै होई। हम महँ दोष कीन्ह नहिं कोई।।
यही लागि हम संग न लेहीं। राउर अग्याँ काह करेहीं।।
जस दाया तुम कीन्ह अनेका। तस अब करहु दया यक एका।।
देहु छाड़ि यह धरम निरोहा। पिता प्रान तुम करहु बहोरा।।
छाती फाट पिता मरि जाइह। औ हम पर जग हत्या लाइह।।
तुम परताप सिद्ध भये काजा। दाया करहु रहै जेहिं लाजा।।
नाहीं तो प्रान जाइ पति जाई। जो यह चोर रखौ बँदि पाई।।
जो यह बात हियें नहिं आवै। हम महँ एक रखौ जेहि भावै।।
हम सभ बली करहिं बड़ काजू। राखहिं चोर जाइ हम लाजू।।
जो औगुन हम जानते, कैसेहुँ लेत न संग।
भाई को गुन जानिहैं, यह न परेउ परसंग।।२९।।
निज चोरी सुनि हियें लजाहीं। फिर-फिर कै यूसुफ मुसकाहीं।।
सभ दुख दीन्ह मोहिं इन्ह लोगू। अब औगुन लाये सुठि सोगू।।
यह सभ करम कीन्ह निरदायी। अब लह क्रोध न हियतें जाई।।
का औगुन हौं इन्ह कर कीन्हा। दै दुख कोटि, चोर करि दीन्हा।।
मुख मुसुकाइ हिये महँ लाजा। कहा तुमहिं राखौं केहि काजा।।

चोरी करै आन जो कोई। धरै आन कहँ नीति न होई।।
तुम आपुहिं तब कीन्हेउ न्याऊ। सो अब करौं न और उपाऊ।।
तुम सभ जाहु छाड़ि यह चोरा। यह महँ दोष नाहिं कुछ मोरा।।
जो कुछ बेद कहै सो करऊँ। नीति छाड़ि पग अनत न धरऊँ।।
जाहु बेगि घर आपने, दरब अन्न लै साथ।
बन्धु चोर तें जाहु अब, धरहिं धोइ कै हाथ।।३०।।
भाई लाग कहै रिस खाई। सुत राहील सो सदाँ जराई।।
जो दुख दगध जनम भर सहा। सो राहील के सुत तें डहा।।
इब्न अमीन यह सुनत रिसाना। क्रोधवन्त होइ कहै सयाना।।
हमतें कहौ दुक्ख का पायहु। सुत राहील सो सदाँ जरायहु।।
यूसुफ कहँ तुम डारेहु मारी। हमहिं लागि यह जतन सँवारी।।
जेहि न रहै राहील को नाऊँ। तेहि कारन आनेहु यहि ठाऊँ।।
तेहि पर दोष हमहिं तुम लावहु। आपन अवगुन आप छिपावहु।।
लागे कहै बन्धु रिस खाई। चोरी करहु दोष हम लाई।।
यूसुफ कहँ लैकै बिग खावा। का हम करहिं कीन्ह तस पावा।।
सुनि यूसुफ रिस खाइकै, माँगा न्याव परात।
करौं न्याय सुन लीजै, कहै सत्त यह बात।।३१।।
यह सो प्रात सभ न्याव करेई। जो पूँछै सो उत्तर देई।।
यूसुफ छरी थाल महँ मारा। धरी एक लह भइ झनकारा।।
इब्न अमीन भाई तें कहा । पूँछहु कहाँ सो यूसुफ अहा।।
औ यूसुफ सें का कुछ कीन्हा। सो कहि देइ जो दुख इन्ह दीन्हा।।
यूसुफ कहा प्रात महँ मारा। भाइन ताहि कूप महँ डारा।।
सात दिवस दुख सहेउ अपारा। नायक कूप तें ताहि निसारा।।
जब लै चले काढ़ि तेहि नायक। घेरा जाइ ताहि दुख-दायक।।
मारा छड़ी कहौ का भयऊ। यूसुफ फेर कहाँ चलि गयऊ।।
बोला तासु बेंचि उन्ह डारा। लै नायक तेहि मोल सिधारा।।
यहि विधि तासु कथा पुनि कहई। यूसुफ जियत जगत महँ अहई।।
सुनि भाई यह बात सभ, रहे लाज सिर नाइ।
सत्त बात सुनि हिये महँ, काँपि उठे डर खाइ।।३२।।

बिनती बहुत भाँति कै कीन्हा। कैसेहुँ बन्धु छाँड़ि नहिं दीन्हा।।
दीन्हा उतर निकसि सभ आए। इब्न अमीन कहँ घर पहुँचाए।।
जहँ यूसुफ कर सेज अवासा। तहाँ सो दीन्ह बन्धु कहँ बासा।।
सेवक सभै दीन्ह करि साथाँ। रहैं सदा पग लीन्हे हाथाँ।।
दोऊ बन्धु रहैं यक ठाईं। करहिं केलि सुख घर की नाईं।।
औ कबहूँ[1] फिर होइ सवारा। औ संग होइ कटक खंधारा।।
खेलि अहेर बहुरि घर आवै। निस बासर सुख भोग बिहावै।।
दसौ बन्धु मिलि मता करेहीं। इब्न अमीन कहँ चोरि हरेहीं।।
करहिं जूझ औ विकट लड़ाई। मारि बन्धु कहँ लेहि छोड़ाई।।

दसौ बन्धु तब कोपे, लीन्ह रोकि सभ द्वार।
सहसन मन कै पाहन, लाये खोदि पहार।।३३।।

प्रथमहिं हाँक यहूदैं मारा। भीम तें अधिक सो परी पुकारा।।
सुनिकै हाँक नगर सभ काँपा। बालक गोद इस्तिरिन चाँपा।।
गरभ नसान गिरे अवधाना। बालक मुय हलकम्प समाना।।
भागे हस्ती तुरी तुराई। नर नारी कहँ जूड़ी आई।।
सिला उठाइ लीन्ह इकबारी। धरि गोफन महँ दूरि पबारी।।
यूसुफ महल दीन्ह भहराई। मारहिं हाँक मेघ घहराई।।
खलभल परी नगर के माहीं। पातसाह कुछ जानत नाहीं।।
यूसुफ तैं उन्ह कहा बोलाई। कौन दूत जस घन घहराई।।
ये बलवन्त कहाँ तें आये। जेहितें नगर लोग दुख पाये।।

बैपारिन चोरी कियउ, कहा जोरि कै हाथ।
चले सजग होइ जूझ कहँ, कटक बहुत लै साथ।।३४।।

कटक देखि कोपे यक बारा। सिला उठाइ हाँक यक मारा।।
भागे तुरी सो डारि सवारा। बहुतक पुरुष मरे बिन मारा।।
सुनत हाँक जस जीव पराई। उन्ह कै सौंह कौन अब जाई।।
जेहि दिसि सिला पवारहिं सोई। मन्दिल अलँग छार ढहि होई।।
भागी कटक देखि यह हाला। घर-घर नगर आइ भुइँहाला।।
बालक नारि गढ़ ऊपर जाहीं। पातसाह तहँ आप छिपाहीं।।
कहहिं कि कोउ न इन्हतें बाँचै। घर-घर नगर काल अब नाँचै।।

पाठान्तर—१-नूर अली की प्रति में 'नितहूँ' पाठ है।

यूसुफ देख कटक बौसाऊ। काहू कर डिढ़ रहै न पाऊ।।
पातसाह बहु बीर पठाये। भे अधीर लखि सुभट सहाये।।
हाँक सुनत दिल बिचला, सिला देखि सुधि भूल।
काहुक पावँ न थिर रहा, परी नगर महँ हूल।।३५।।

तब रोहील हाँक हठि मारा। सिला साजि दल पेलि हँकारा।।
तब सभऊन चढ़ा पुनि खेता। सुनत हाँक भे लोग अचेता।।
गोफन लीन्ह यहूदा हाथाँ। मारेसि कोपि गरब के साथाँ।।
कन्तानू औ जाद हँकारी। भागे तुरी ऊँट चिंघारी।।
चढ़े कोपि यस्ता औ दाना। मारा हाँक औ कोपि पषाना।।
जियालून यालूत जो कोपे। सुनत हाँक बड़बीर अलोपे।।
पुनि लावी यक सिला पबारा। भागी देखि सो कटक अपारा।।
धरहिं पहार जो गोफन माहीं। मारि सिला औ मँदिल ढहाहीं।।
भीमसेन सुनि हाँक सँकाना। औ हनवन्त बधिर भे काना।।
गोफन गूँजहिं सिंघ सम, उड़हिं सिला चट्टान।
मँदिल कोट ढहिं जाहिं गिरि, हय बारन केहि मान।।३६।।

दस गोफन जब यक मुख छूटहिं। लोह पखान तिरिनि सम टूटहिं।।
गोफन छुटत परै जस गाजा। बली बीर जस जंबुक भाजा।।
मिसिर नगर के बीर डराही। गोफन चलत सो पेलि पराहीं।।
खरग बान औ सेन्ह कुठारा। गोफन सौंह न जाइ सँभारा।।
धरहिं बज्र जब गोफन माहीं। अजगर सम फेरत मन्नाहीं।।
गोफन सबद सुने सुधि जाई। कोऊ अस्त्र न ताहि बसाई।।
दसौ बीर दस दिग्गज भारी। तरपहिं औ गरजहिं यकबारी।।
सहसन मन कै हनहिं पषाना। जस चाकी तर होत पिसाना।।
दलिमलि महल खेह मिलि जाहीं। धीरज रहा काहु महँ नाहीं।।
बिन मारे सभ भरि गये, मिसिर नगर के बीर।
ये अंगद हनुवन्त सम, यक-यक बज्र सरीर।।३७।।

धरि गोफन जब सिला फिरावहिं। जस-जम कातर सरग तें आवहिं।।
नर-नारी सभ भये अधीरा। कहाँ तें आये ये दस बीरा।।
दस दिग्गज तस ये बलवाना। जिन्ह कहँ पील पिपील समाना।।
सहसन मन कै सिला पवारहिं। सम जमराज हाँक ये मारहिं।।
इन्ह के सौंह को राखै पाऊँ। केहि कर जग अस बल बौसाऊँ।।

सभै अस्त्र कर अहै बँचाऊ। यहि गोफन कै नाहि उपाऊ।।
घर-घर मिस्र बज्र अस परई। सुनत हाँक सभ जिउ परिहरई।।
दसौ बीर ये इन्द्र समाना। बरसावहिं करि कोप पषाना।।
कहाँ किसन जो होई सहाई। गिरधरि गोकुल लेइ बँचाई।।

दस दिग्गज दस बीर तस, दसौ मेघ घहराहिं।
दस गोफन दस तारका, बज्र बूँद बरसाहिं।।३८।।

दस गोफन चहुँ दिसि भननाई। भादौं मघा नखत घहराई।।
सहसन मन कै सिला पबारहिं। ढाहहिं गिरि गज कोट ओदारहिं।।
गोफन बज्र परै जस ओला। मिसिरी घुलि-घुलि जाहिं अमोला।।
मीर अमीर कटक सुलताना। भागि-भागि भुइहरैं छिपाना।।
अकसर सचिव ठाढ़ रन माहीं। कटक लोग महँ धीरज नाहीं।।
अंगद सम अकसर पग रोपा। कीन्ह छीन यूसुफ पर छोपा।।
कोमल बदन अंग सुकुमारा। वे यक-यक जस मेरु पहारा।।
कहहिं सचिव तें वै सभ कोई। बँधुवा छाड़ि देहु जस होई।।
सचिव बात यह मानत नाहीं। जानहिं कहा भेद यहि माहीं।।

सात बरिस तुम काल तें, राखि लीन्ह नर-नार।
करहु आपु पर सचिव तुम, बँधुवै कहँ बलिहार।।३९।।

अस बँधुवा राखै नहिं कोई। जेहितें नास नगर कै होई।।
दै बँधुवा यह काल बँचावहु। द्विज बालक होइ भीम छोड़ावहु।।
सभै नगर कर साहस छूटा। सूर चना तें भार न फूटा।।
तुम अकेल दस दिग्गज भारी। तुम बिन होइ सो मिसिर उजारी।।
घर-घर नगर बज्र इन्ह बोवा। जेहिके लाग, सो सुख सें सोवा[1]।।
छिपेउ साह गढ़ ऊपर माहीं। सत साहस काहू महँ नाहीं।।
तुम आपन जिन प्रान नसावहु। बँधुवा देहु औ काल बँचावहु[2]।।
गई जुलेखा पहँ बहु नारी। कहहिं अरथ दोउ हाथ पसारी।।
काहौ छाड़ि अस बँधुवा देही। मिसिर नगर कै जस लै लेही।।

औसर गाँठे पुरुष सो, करै न हठ अधिकार।
तैसी रोपै पीठ नर, जैसी बहै बयार।।४०।।

पाठान्तर–१- नूरअली की प्रति में 'घर घर नगर बज्र इन्ह डारा। सहसन पुरुष होहिं संहरा।।' पाठ है, २*- शेख की प्रति में 'रारि मिटावहु' पाठ है।

कहै जुलेखा सत्त सँभारी। वह परताप तेज है भारी।।
औ वह कर साईं है साँचा। बड़े कस्ट कलोल सें बाँचा।।
तेज भानु तें अहै अपारा। होइहैं बली सत्रु जरि छारा।।
कबहूँ मोर कहा नहिं माना। अब रन चढ़ि को बात ओनाना।।
करहु जाइ सभ नगर पुकारी। बँधुआ छाड़ि मिटावहिं रारी।।
होइ व्याकुल पुहुमीं सिर नावै। लागि जुलेखा दैव मनावै।।
कै सो सचिव कहँ तुम जै देहू। कै बँधुवा दै संधि करेहू।।
लागीं कहै मिसिर कै नारी। जहँ यूसुफ ठाने रन भारी।।
तुम अकेल हो रन महँ ठाढ़े। दसौ बीर दस दिग्गज गाढ़े।।

ऐसे काल अकाल महँ, लीन्ह मिसिर कहँ तार।
रोपा पग तुम किसन सम, इन्द्र कोप यक बार।।४१।।

लिखा सो एक गरन्थ सोहावा। पातसाह जब सचिव बनावा।।
दीन्हा एक सुनारि कुलीना। रूपवन्त औ सुघर नवीना।।
तेहि राईल नाँउ सुकुमारी। हुती नारि वह बार कुमारी।।
तेहितें पुत्र भये जो दोई। फराहीम औ मीसा सोई।।
भये पुत्र वे दोऊ सयाने। यूसुफ बेद भेद सभ जाने।।
बन्धुन खेत पेलि जब लीन्हा। काहू बीर न सरबरि कीन्हा।।
यूसुफ हिये कोप अधिकाना। चला पेलि रन सूर समाना।।
तुम आपन मोहिं बल देखरावहु। अब परहार मोर निरमावहु।।
करौ दया, मैं पथिक बेचारे। नाहिं तो छन महँ डारौं मारे।।

यह कहि कै कोपित भयउ, पेलि चला यकबार।
पातसाह के द्वार कर, लीन्हा खंभ उखार।।४२।।

मर-मर खंभ हतेउ बड़ भारी। तेहि यूसुफ धरि लीन्ह उखारी।।
औ भाइन दिसि ताहि पबारा। चकृत भये देखि परहारा।।
कहहिं कि सचिव सिद्ध अवतारा। तेहि के बल को सरबर पारा।।
लै कर महँ अस सिला पबारा। होते दसौ बीर हम छारा।।
सभऊँ कहँ जब रिस उपजाई। तन महँ रोम खरे होइ जाई।।
निकसहिं रोम जो टाटर फोरी। जग महँ करै न सरबर जोरी।।
जब लह तेहि याकूब को बंसा। रखै न हाथ पीठ निरसंसा।।
तब लह कोप मिटे तेहि नाहीं। औ सरबर नहिं बीर कराहीं।।
सभऊँ कहँ जब रिस उपजानी। कीन्ह कोप तब यूसुफ जानी।।

जब याकूब को बंस कोउ, रखै पीठ पर हाथ।
घटै कोप परहार बल, देइ नाहिं भुइँ माथ।।४३।।

धाये हाँक मारि दस बीरा। कहै हाँक दै देखि अधीरा।।
बन्धु हमार जो छाड़हु नाहीं। मिसिरी घोलि-घोलि पी जाहीं।।
कहहिं लोग यूसुफ वह आई। तुम सो काल तें लीन्ह बँचाई।।
अब यह काल सो घर-घर नाँचा। बिकट काल तें कोउ न बाँचा।।
चरनन परहिं आइ नर नारी। बन्धुवहि करहु सचिव बलिहारी।।
यूसुफ देखि सो नगर अधीरा। कै परमोध कटक यक तीरा।।
जनि संका अब मन महँ करहू। कर पौरुष मन धीरज धरहू[1]।।
फराहीम कहँ दीन्ह सिखाई। सभऊँ पीठ सो हाथ धराई।।
तुरतहिं कोप मिटेउ वह केरा। तब सभऊँ भाइन दिसि हेरा।।

कौन बंस याकूब को, अहै सचिव के साथ।
घटउ कोप परहार मोर, रखा पीठ पर हाथ।।४४।।

इब्न अमीन कहँ बेगि पठावा। इबराहीम कै पाग लै आवा।।
यूसुफ पाग हाथ महँ लीन्हा। भाइन सौंह पाग वह कीन्हा।।
भे बलहीन मलीन सरीरा। हरी बुद्धि औ भये अधीरा।।
यूसुफ जाइ बन्धु के राँधा। एक-एक कहँ निज कर बाँधा।।
सभ कहँ बाँधि मँदिल लै आवा। घर-घर नगर सो बाज बधावा।।
का अस सचिव सो रचेउ उपाऊ। जेहितें हत भें बल बौसाऊ।।
जो न होत अस सचिव सोहावा। को यह काल तें नगर बँचावा।।
धन्न सचिव धनि बुद्धि अनूपा। धनि पौरुष औ सिद्ध सरूपा।।
दुइ सो काल तें लीन्ह बँचाई। यह बड़ काल हतेउ दुख दाई।।

सुपुरुष सचिव सो मिसिर कहँ, दीन्ह भेजि करतार।
जेइ सभ नगर बँचावा, धन्न जुलेखा नार।।४५।।

गई जुलेखा पहँ बहु नारी। भई सो जाइ निकट बलिहारी।।
अस मानिक तैं सेंत बेसाहा। जगत लहा पै तोहि न लाहा।।
बूड़त हतेउ नगर अवगाहा। नूह नबी होइ लाइस थाहा।।
मिन्तहिं चोरि रखि लीन्ह सिंगारा। नाहीं तो होइ नगर अँधियारा।।

पाठान्तर–१-नूर अली की प्रति में इस स्थान पर कुछ अप्रासंगिक चौपाई है। यह चौपाई नूर अली में दोहा संख्या ४७ के ऊपर की तीन चौपाइयों- 'रहेउ न दरब बसन..... नाँउ जुलेखा।।' के स्थान पर दिया है।

दस दिग्गज कहँ यूसुफ टारा। जो जमराज तें जात न मारा।।
जस गोकुल कहँ किसन बँचावा। कर गिरिधर सुरपतिहिं लजावा।।
तुम यूसुफ कहँ बँदि महँ राखा। बात अनुचित मुख तें भाखा।।
तेहि कारन तुमतें मुख फेरा। मुख तुम्हार नहिं नैनन हेरा।।
कस न लेइ यूसुफ संसारा। रहै सदा लै नाम तुम्हारा।।
सुनि कै नारि जुलेखा रोई। चाहौं सदाँ जो बरधित होई।।

सुखी रहै आनन्द से, करै मिसिर प्रतिपाल।
को मेटे जो विधि लिखा, भयउ मोर यह हाल।।४६।।

जेहि दिन जीत सुना बरनारी। भै उन लोगन कै बलिहारी।।
फिर-फिर सीस भूमि लै लावै। आपन देव दयन्त मनावै।।
करहिं नारि सभ बीर बखाना। सँवरहिं हाँक वज्र केहि माना।।
का अस इष्ट सचिव पुनि कीन्हा। दसौ बीर कहँ बाँधि जो लीन्हा।।
तोरै सचिव मिसिर रखि लीन्हा। जेइ बस काल सो पल महँ कीन्हा।।
सुनत जुलेखा होइ हुलासा। देइ काह कुछ रहेउ न पासा।।
रहेउ न दरब बसन पहिरावा। रहेउ न अन्न धन्न बौसावा।।
रही न दासी सँखी सहेली। सेवक दास गये परहेली।।
रहेउ न रूप न रंग न रेखा। रहेउ बिरह औ नाउँ जुलेखा।।

रहेउ न जोबन रूप थिर, धन लछमी सुख भाग।
रहेउ प्रेम हिय-अन्तर, जस पथरे महँ आग।।४७।।

दसौ बीर कहँ बाँधि सुजाना। यूसुफ पातसाह पहँ आना।।
आग्याँ दीन्ह देखि सुलताना। सूरी देहु जगत सभ जाना।।
ये बलवन्त महा बल भारे। तुम प्रताप इन्ह पौरुष हारे।।
तेहितें बेग सो मारहु प्राना। बिलँब न करहु कहा सुलताना।।
तब यूसुफ कर जोरि मनाये। सुनि कै नाम पथिक चलि आये।।
राउर जस चहुँ ओर बसाई। देहिं छाड़ि जो जीति लराई।।
इन्ह कहँ मारे होइ अनीता। तव प्रताप इन्ह कर बल जीता।।
बिना अन्न सभ नगर दुखारी। दीजै छाड़ि जाहिं बैपारी।।
है याकूब नबी के बारा। देइ सराप चहहिं जो[1] मारा।।

पाठान्तर–१-नूर अली की प्रति में 'जिव' पाठ है।

पातसाह तें बहुत विधि, करि यूसुफ मनुहार।
ल्याये अपने मँदिल कहँ, होइ रनजीत निसार।।४८।।

यूसुफ सदन एक तहँ साजा। सो घर चित्र-विचित्र बिराजा।।
तहँ मूरति याकूब बनाई। औ सुचित्र सभ बारह भाई।।
लिख चित्र महँ बन अँधियारा। कूप जहाँ यूसुफ कहँ डारा।।
औ सभऊँ जस छुरा निसारा। यूसुफ हियें त्रास अधिकारा।।
भागि गयउ रोईल के पासा। मारि पबारि सो दीन्ह तरासा।।
सभ भाइन पहँ रोवै धाई। मारहिं वह बैरी निरदायी।।
अन्तकाल सभऊँ धरि छूरा। मारै लाग कोप करि पूरा।।
आनि यहूदैं ताहि बँचावा। करहिं बन्धु सभ ओर चवावा।।
कहा यहूदै जीव न मारहु। रस्सी बाँधि कूप महँ डारहु।।
भाइन यूसुफ कहँ दुख दीन्हा। सो सभ चित्र भवन महँ कीन्हा।।
नगन कीन्ह औ रस्सी बाँधा। सभऊँ काटि दीन्ह बिख साँधा।।

सो सभ लिखा सो धाम महँ, जो कुछ करम सो कीन्ह।
एक-एक कुछ चित्र महँ, कुछ इबरी लिख दीन्ह।।४९।।

कहुँ सभऊँ पानी ढरकावा। कहु पाँवरि पग काटि बहावा।।
कहुँ सभऊँ गहि अलक उखारै। कहुँ लाबी औ दान जो मारै।।
कहुँ कूप तें बालक काढ़ा। भाइन हिये क्रोध अस बाढ़ा।।
कहुँ बालक कहँ देहिं तरासा। यह बालक है दोषी दासा।।
कहुँ बालक तिन मोल करावा। औ यूसुफ कहँ त्रास देखावा।।
कहुँ ताकहँ कागद लिखि दीन्हा। बन्धुन छाप मोहर अस कीन्हा।।
टाट झूल जस ताहि पिन्हावा। औ पायन जस बेरी नवावा।।
औ जस औगुन बरनि सुनावा। भागि जाइ जो पावै दावा।।
नाहिंन दास यह राखै लायक। डारहु बेंचि दूर लै नायक।।

यह सभ चित्र-विचित्र महँ, साजा सदन अनूप।
पिता बन्धु कर चित्र महँ, यक-यक लिखा सरूप।।५०।।

ल्याइ सो मँदिल मुक्त करि दीन्हा। अन्न दीन्ह औ आदर कीन्हा।।
दसौ बन्धु तब कीन्ह पयाना। रहा यहूदा निज अस्थाना।।
आपुस महँ सभ मता करेहीं। यूसुफ नाम सो फिर-फिर लेहीं।।
का जानहिं यह यूसुफ होई। कत छाड़त हम दूसर कोई।।
बहुत कहहिं का कहौ अपारा। यूसुफ सुख दीन्हेउ अधिकारा।।

जो यूसुफ यह होत अयाना। आग्याँ पाइ न छाड़त प्राना।।
अब यह दोष न छाड़त केहूँ। करिकै दया देत फिर गेहूँ।।
का जानहिं कस सुपुरुष साँचा। जेहिके चलत प्रान अब बाँचा।।
नौ भाई कनआँ कहँ गये। मिसिर यहूदा इस्थित भये।।
लिखा यहूदा पिता कहँ, इब्न अमीन की बात।
दोष कीन्ह तेहि कारन, दास भये अब तात।।५१।।

पहुँचे जाइ पिता के पासा। भयउ हिये सुठि अधिक उदासा।।
सभ मिलि कहा दोष कुछ नाहीं। अहै यहूदा मिस्र के माहीं।।
सुत तुम्हार अस चोरी कीन्हा। धरम निहोर छाड़ि जिव दीन्हा।।
औ हमार पति पानिप खोवा। फिर-फिर यहै यहूदा रोवा।।
आदर करत सचिव बहु भाँती। दीन्ह अन्न भा काल संघाती।।
उन्ह अस खोंट कीन्ह अग्यानी। गयउ उतरि हम सभ कर पानी।।
औ हम जूझ कीन्ह अस भारी। रही सो कटक मिसिर कै हारी।।
अगसर मिसिर सचिव चलि आवा। निज हाथन लै बसन देखावा।।
देखत बसन भयउ बलहीना। तब पुनि सचिव बाँधि हम लीन्हा।।
रहा यहूदा मिसिर महँ, जस तुम कहौ सो तात।
तस हम करहिं सो जाइ फिर, और न एकौ बात।।५२।।

पातसाह मारन कहँ चाहा। बहुरि सचिव वहँ कीन्ह निबाहा।।
दीन्ह छाड़ि उन्ह अन्न समेता। कीन्ह बिदा सुख सहित सहेता।।
अब तुम पास यहै चलि आये। अन्न सो नगर माहँ पहुँचाये।।
कहौ तो जाइ जीव अब देहीं। कै भाई कहँ चोरियँ लेहीं।।
इब्न अमीन नित करै सवारी। काँपे मिसिर देखि दल भारी।।
अस बँधुवा औ चोर न देखा। चौगुन ठाट सचिव तें लेखा।।
जब याकूब सुना यह बाता। पीत रंग मुख होइगा राता।।
मन महँ कहेसि कि यूसुफ होई। पाग मरम का जानत कोई।।
बन्धु लागि यह छल उपराजा। राखै काज, चोर कै साजा।।
दीना धिय कहँ पिता बोलाये। अपनी ओर तें पत्र लिखाये।।
लागि लिखै तब दीना, अरबी बचन विभास।
तुम लै जाहु सचिव कहँ, दैव पुरावै आस।।५३।।

परथम नाम अलख कर साँचा। इबराहीम अगिनि तें बाँचा।।
दूतनि कहा कि होहिं सहाई। दीन्ह अगिनि छन माहँ बुझाई।।
इबराहीम एक नहिं माना। जग सहाय कुछ कीन्ह न काना।।
तात हमार कंठ तें छूरी। लीन्ह बँचाइ दया करि पूरी।।
जो चाहै सो करै गोसाईं। जो स्रोता द्रष्टा सभ ठाईं।।
हम कहँ दीन्ह सुपुत्र विछोहा। नैनन अन्ध भये तेहि कोहा।।
जो फिर दया करै करतारा। देइ मिलाइ होइ उजियारा।।
पुत्र विछोह जात नहिं सहा। यह जीवन जस दूभर अहा।।
तेहि विछोह महँ तुम दुख दीन्हा। लघु बालक कहँ तस्कर कीन्हा।।
परी विपति अवगाह मोहिं, सभै कीन्ह सन्तोख।
सत साहस के प्रान्त पुनि, कीन्ह दई गति मोख।।१।।
सुनि तुम्हार गुन सुकिरित भारी। दुखित प्रान यह भयउ सुखारी।।
सिद्ध तनय नहिं तस्कर होई। का भा झूठ लगावै कोई।।
यूसुफ बिरह अन्ध मोहिं कीन्हा। इब्न अमीन दुख बुधि हरि लीन्हा।।
टूटी लंक यहूदा कोहा। करहु दया अब हरहु विछोहा।।
दुखतें भयउँ सो बहुत दुखारी। अब जिन देहु मोहिं दुख भारी।।
नाम तुम्हार सुनत सुख पावा। करहु दया अब और न भावा।।
अरबी महँ यह पत्र लिखावा। काहूँ अरथ जानि नहिं पावा।।
जो निदान वह यूसुफ होई। अरबी उतर लिखहिं पुनि सोई।।
इबरानी भाखा सभ जानहिं। अरबी महासिद्ध पहिचानहिं।।
अरबी पत्र जो बाँच सुत, लिखै जो अरबी माँहिं।
तो जानहिं वह यूसुफ, छुट दूसर कोउ नाहिं।।२।।
दीन्ह पत्र लै यूसुफ हाथा। अरबी बचन पढ़ा सुख साथा।।
रोइ-रोइ सभ पत्रै बाँचा। सँवरेउ हियें निरंजन साँचा।।
लिखा उतर तब अरबी माहीं। तुम समान दूजा नर नाहीं।।
पिता तुम्हार सहेउ दुख पीरा। अन्त दयाल बँधायउ धीरा।।
दूत सहाय जो मानेउ नाहीं। दइयँ सो दुक्ख हरेउ पल माहीं।।
भयउ मोख, संतोख जो कीन्हा। जेइँ दुख दीन्ह सो दुख हरि लीन्हा।।

तुमहुँ करहु दुख महँ संतोखा। यक दिन करै निरंजन मोखा।।
जो तुम लिखा चोर नहिं होई। पुत्र तुम्हार कहेनि सभ कोई।।
जेठ बन्धु यह चोर के भाई। हतेउ चोर बहु विषै चोराई।।

संग चारि सै सेवक, सेवा करत अनेक।
तास बादला पहिरहिं, सुन्दर एक तें एक।।३।।

लिख उत्तर बन्धुन कहँ दीन्हा। आदर भाव बहुत विधि कीन्हा।।
बैठे हुते बन्धु बल भारी। इब्न अमीन कै आइ सवारी।।
चालिस सहस कटक तेहि संगा। हस्ती चढ़ा महीप के रंगा।।
औ नौ रतन भुजन महँ सोहै। देखि रूप संसार विमोहै।।
चार सहस चेली औ दासा। पहिने झार बादला तासा।।
भाई देखि सुद्धि गइ सारी। देखा जगमग जोति अम्बारी।।
कहहिं चोर अस रखै न कोई। होइ न होइ सो यूसुफ होई।।
पितै बाँच वह पत्र सोहावा। बिछुरा प्रान पिंड महँ आवा।।
निसचयँ भई कि यूसुफ अहई। अरबी बचन और को कहई।।
कहा कि वेग मिसिर कहँ जाहीं। रहौ सचिव की सेवा माहीं।।

सेवा किहें पसीजै, करै सो दया निदान।
छाड़ि देइ जब बन्धु कहँ, तब तुम करेहु पयान।।४।।

यहै यहूदा कहँ लिखि दीन्हा। अन्न काज अनुसासन कीन्हा।।
निस दिन बन्धु पास चलि जाहीं। औ सेवा बहु भाँति कराहीं।।
दीन्हा अन्न सो कनआँ आवा। आप तहाँ सेवा मन लावा।।
इब्न अमीन कर देखि बढ़ावा। सभ बन्धुन कहँ निस्चयँ आवा।।
कहहिं कि यह यूसुफ निज होई। यह कर भेद न जानै कोई।।
जो यूसुफ यह होइ निदाना। परगट भयें सो मारहिं प्राना।।
तेहितें जाइ पितहिं लै आवहु। तेहितें मोख मुकुति तुम पावहु।।
डरहिं बहुत फिर करहिं अँदेसा। हमतो बहुत रहे यह देसा।।
जो यहि के मन उपजत द्रोहू। मारत जीव सो पहिले कोहू।।

हम सभ कीन्ह बुराई, वइँ सो भलाई कीन्ह।
तेहि कारन वह अलख पुनि, अन्न धन्न सुख दीन्ह।।५।।

यह सभ दोष किहें नहिं मारा। अबहूँ करहिं मोख निस्तारा।।
जो हमसें वह करै बुराई। तो हम सम ओहू होइ जाई।।
हम सभ करहिं नाइ सिर सेवा। हम सेवक वह साँई देवा।।

वह दाता हम जाचक भये। कै करि बुरा दास होइ गये।।
तेहितें चलहु ढीठ अब बोलहिं। कहहिं कि मुख तें अम्बर खोलहिं।।
जो चाहौ सो हम कहँ करहू। मारहु जीव कि पातख हरहू।।
नित उठिकै संसा मिटि जाई। जो चाहै सो करै गोसाईं।।
तब सभ बन्धु भये यक ठाईं। आये सचिव पहँ बन्धु की नाईं।।
नावा सीस हाथ पुनि जोरा। कहहिं करहु अब दोष बहोरा।।
मुख आपन तुम खोलिकै, देहु दरस यक बार।
जस भावै तस करहु तुम, हम सभ चोर तुम्हार।।६।।

तुम यूसुफ हम चोर तुम्हारे। तुम कृपान ये कंठ हमारे।।
इब्न अमीन तब बिनती करई। होइ परगट अब औगुन हरई।।
करहु सो बेग बन्धु परगासा। पिता दुखित कर पूजै आसा।।
औ कनआँ जस सूखै धानी। सुनि तव नाम परै पुनि पानी।।
औ भाइन कहँ उपजै लाजा। लज्जित होहिं कीन्ह जस काजा।।
यूसुफ कहा काहें ते जाना। गूढ़ बात को सुनै सयाना।।
कहौ कि वह कहँ बिग लै खावा। फिर कैसे वह बाँच सोहावा।।
तब सभ कहहिं झूठ हम भाखा। वह कहँ अलख जियत जग राखा।।
मुख अम्बर खोलहु अब भाई। तब संदेह सोच मिटि जाई।।
मुख अम्बर तब खोलिकै, मिला हियें महँ लाइ।
कहा दोस कुछ नाहिन, करम लिखा सो पाइ।।७।।

वे फिर-फिर रोवहिं सिर नाई। सौंह दिष्टि लखि सकहिं न भाई।।
हम औगुन अस कीन्ह तुम्हारा। सनमुख डीठ न जाइ निहारा।।
हम सभ कहँ तुम डारहु मारी। होइ बन्धु तब मुकुति हमारी।।
यूसुफ नबी बोध तब कीन्हा। एक-एक कहँ अंकम दीन्हा।।
मैं तो मिसिर हतेउँ यक दासा। लोग कुटुम्ब कोउ आस न पासा।।
तुमतें भयउँ सो बिदित कुलीना। बढ़ेउ तेज जस हतेउँ मलीना।।
नाउँ न ठाउँ न गुरू न चेला। अकल अतात अनाथ अकेला।।
तुम आपन बल बीर देखावा। भयउ देस महँ सूर सोहावा।।
अब सभ देस नगर सुलताना। बन्धु तुम्हार सो मो कहँ जाना।।
तुम परताप मिसिर महँ, भयउँ सो बिदित बिकास।
सुत याकूब कहायउँ, हतेउँ सचिव कर दास।।८।।

सभ कहँ दीन्ह इतर पहिरावा। बार-बार गहि अंकम लावा।।
जो मैं कीन्ह दइयँ मोहिं दीन्हा। जग पावै सभ आपन कीन्हा।।
काहू कर दूखन कछु नाहीं। होइ जो लिखा निमात के माहीं।।
अब तो बेगि पितहिं लै आवहु। जेहि परताप धरम पद पावहु।।
पिता अन्ध केहि कारन भयऊ। केहि विधि नयन जोति हरि गयऊ।।
बन्धुन कहा दुकूल तुम्हारा। रकत भरा उन्ह नैन निहारा।।
सो दुकूल नित लावै नैना। रोवै बिलखि होइ बेचैना।।
रोवत लावत नैन दुकूला। भये अनैन फूल जस फूला।।
तरु बिछोह तर कुटी बनावा। छुट रोदन कुछ और न भावा।।

सो दुकूल लावत नयन, रोवत दिन औ रैन।
भये अन्ध यह विधि पिता, गयउ खोइ सुख चैन।।६।।

बाईस यूसुफ-याकूब मिलन खण्ड

बन्धु एक हुत दान के नाऊँ। जोजन बीस चलै निज पाऊँ।।
सो बन्धुन कहँ भोग खवाये। तब सो दान कहँ निकट बोलाये।।
आपन दीन्ह दुकूल मँगाई। कहा कि ताहि बेगि लै जाई।।
ल्यावहु जाइ पिता कहँ साथा। फिर-फिर धरेहु चरन पर माथा।।
औ आपन आनहु सुत नारी। औ सभ लोग कुटुँब परिवारी।।
दान यहूदा अग्याँ पाई। चले साँड़िनी चढ़ि दोउ भाई।।
यूसुफ कहा सुनौ अब भ्राता। तुमसें आज कहौं यक बाता।।
मिसिर नगर के बाहर जाई। झारयो मम दुकूल फहराई।।
जाइहं बास पिता के पासा। बास पाइ मन होइ हुलासा।।

कुरता खोलि यहूदैं, झारा भई बिकास।
पहुँची तब याकूब कहँ, तहँ यूसुफ कै बास।।१।।

कहा यहूदै कुरता लेऊ। लै कै हाथ पिता के देऊ।।
रकत भरा कुरता तेइँ दीन्हा। जासु अनैन पिता कहँ कीन्हा।।
यह कुरता तें फिर चख पावै। मोर दोख अब लखत मिटावै।।
छाड़ि साँड़नी दान सिधारा। पवन तें बल कर लीन्ह उधारा।।
जब कुरतें कहँ बाहर झारा। पवन बास लै बेग सिधारा।।
जहँ याकूब कुटी के माहाँ। हते बंस सुत दुहिता ताहाँ।।
आई बास सो कीन्ह हुलासा। कहा यूसुफ कै आवै बासा।।
बोले बंस पिता का कहऊ। अब लह तात सो बाउर अहऊ।।
जुग बीता यूसुफ के गए। ऊनर जोति नयन के भए।।
कहाँ बास! कित यूसुफ ताता। का तुम कहहु पिता यह बाता।।
आयउ दान नबी के पासा। कहेसि आइ मन मगन हुलासा।।

इब्न अमीन औ यूसुफ, दोऊ किहेउ जुहार।
औ आए तुम लेन कहँ, हस्ती तुरी तुखार।।२।।

पाछें आवै यहूदा भाई। अन्न भोग सुख साज बनाई।।
औ यूसुफ कर कुरता ल्यावै। जेहिके बास नैन फिर पावै।।
सुत याकूब धरेउ भुइँ माथा। विनवै जोरि-जोरि कै हाथा।।
कहा कि दान सुनहु यक बाता। कहौं सोच मोरि हरै विधाता।।

यूसुफ कहँ केहि मारग पायउ। ताकहँ अलख कवन मग लायउ।।
पुत्र दीन महँ अहै हमारे। कै सुलतान को दीन सम्हारे।।
बोला दान कि पन्थ तुम्हारे। सभ यूसुफ महँ लखौं निहारे।।
निसि-दिन करै अलख कै सेवा। जेहि विधि कीन्ह बराहिम देवा।।
जप-तप आरति व्रत औ पूजा। छुट खलील मग लखौं न दूजा।।
भई धूम सभ नगर महँ, बाजै लाग बधाव।
परेदसी कै सुद्धि सुनि, नयो जनम भा आव।।३।।
तब याकूब सीस भुइँ लावा। बिनती कीन्ह अलख चित भावा।।
घर-घर नगर बधावा बाजा। दुख बैराग देस तजि भाजा।।
सुनिकै लोग चहूँ दिसि धाये। इष्ट-इष्ट कल्यान मनाये।।
भोर यहूदा आइ तुलाना। दीन्हा प्रथम खबरि जो दाना।।
कुरता आनि पिता कहँ दीन्हा। नैनन लाइ बसन उन्ह लीन्हा।।
लावत बसन बढ़ी चख जोती। फिर कै पानि चढ़ै जस मोती।।
छिन महँ मेटि गयउ अँधियारा। होइगै नैन जोति उजियारा।।
कुरता देखि हिये हुलसाना। मन महँ माया-मोह समाना।।
नैन लाइ फिर लावै छाती। हुलसा अंग-अंग लखि गाती।।
नैन जोति पूरन भये, धरत बसन चख माहिं।
पेम कै बात अनूप है, सभ कोउ जानत नाहिं।।४।।
एक गरन्थ माहँ अस देखा। सुनहु कथा होइ सुचित सरेखा।।
इब्न अमीन जब लीन्ह औतारा। माता मुई छोड़ि कै बारा।।
दासी एक कहूँ तें आई। लीन पुत्र वह नारि सोहाई।।
तेहि याकूब मोल पुनि लीन्हा। औ दासी कहँ धाई कीन्हा।।
नाम बसीर हुतो तेहि केरा। लीन्ह बिदेसी मोल सो चेरा।।
ताकर पुत्र बेंचि जब डारा। सो बालक लै मिस्र सिधारा।।
पुत्र बिछोह सो दासी रोई। नबी पुत्र तें मोहिं बिछोई।।
भइ अकासबानी यक बारा। जस उन्ह बेंचि पुत्र तोर डारा।।
तेहि कर पुत्र जो सभ महँ प्यारा। सो यह तें मैं करौं निनारा।।
बेंचहि ताहि सो ताके भाई। थोर दरब जो हियें लजाई।।
पहिले पुत्र मिलाऊँ तोरा। तब यूसुफ याकूब बहोरा।।
मिसिर सचिव यह बालक, भयउ जाइ पतिपाल।
मरे प्रान्त लै आनिकै, यूसुफ बसन तेहि काल।।५।।

मिसिर सचिव पहँ बालक सोई। रहा जाइ जानै नहिं कोई।।
मिसिर सचिव जब सरग सिधारा। यूसुफ हाथ आय घर-बारा।।
जहँ लह दास औ सेवक चेरी। भे आग्याँ महँ यूसुफ केरी।।
जब यूसुफ मुख खोलि देखावा। औ भाइन कहँ अंकम लावा।।
तब जिबरील सरग तें आये। अलख सँदेस सो बरनि सुनाये।।
भेजेउ कुरता पिता के पासा। नयन जोति लखि भयउ हुलासा।।
बाहर नगर जो कुरता झारे। पौन बास लै तहाँ सिधारे।।

यूसुफ नबी सो कुरता, दीन्ह बसीर के हाथ।
कहा जाहु ले पिता पहँ, मम भाइन के साथ।।६।।

जब बसीर कनआँ महँ आवा। पूँछै घर याकूब सोहावा।।
तासु माँतु यक सरबर तीरा। धोवै बसन याकूब गँभीरा।।
तासों कहा बसीर सो जाई। घर याकूब सो देहु बताई।।
दासी कहा कहाँ तैं बारा। कुटुँब लोग सो रहैं निनारा।।
तब बसीर पुनि बरनि सुनावा। यूसुफ पत्र-बसन लै आवा।।
लावत बसन होइ चख जोती। जैसे पानि चढ़ै फिर मोती।।
सुनि दासी लागी तब रोवै। करि अपघात प्रान जस खोवै।।
हे रे दई अवधि तैं दीन्हा। औ मोतें बाचा अस कीन्हा।।
पहिले पुत्र मिलाऊँ तोरा। तब यूसुफ याकूब बहोरा।।

यूसुफ खबर सो आई, पाती बसन समेत।
मोहिं न पुत्र मिलाये, हेरे दई केहि हेत।।७।।

तब बसीर पूँछा कहु नाऊँ। पुत्र तोर कहु ताकर ठाऊँ।।
कहा बसीर नाम तेहि आहा। और न जानौ कहवाँ आहा।।
तब बसीर माता हिय लाई। कहा अवधि विधि सत्त कराई।।
मैं बसीर तोर पुत्र सोहावा। पहिले दई सो तोहिं मिलावा।।
सुनि दासी तेहि हियें लगाई। रोइ उठी तन मुरछा आई।।
तब बसीर याकूब पहँ आवा। लैके बसन नेत्र महँ लावा।।
चख खुलि गये बसन के लागे। देखा तब बसीर कहँ आगे।।
औ बोलाइ तेहि हियें लगावा। पूँछा नावँ ठावँ बहु भावा[1]।।
कहा कि मैं बसीर हूँ नाथा। बेंचा जाहि बिदेसी हाथा[2]।।

पाठान्तर–१,२*- दोहा संख्या ८ के ऊपर की दो चौपाइयाँ- 'औ बोलाइ तेहि.....बिदेशी हाथा।' नूर अली की प्रति में नहीं है।

तब याकूब अधीन होइ, रोवा छाड़ि डफार।
जस मैं कीन्ह सो पावा, साँई के दरबार।।८।।

तोरे दोष मोहिं दुख दीन्हा। पुत्र बिछोह अन्ध मोहिं कीन्हा।।
अब माँता कहँ दरसन देहू। ताकर दुख बैराग हरेहू।।
तब बसीर माँता पहँ गयऊ। हियें लाइकै रोवत भयऊ।।
हिय लागत माँता तब जागी। फिर-फिर पुत्र हियें महँ लागी।।
कहै कि रे दयाल सुखदाता। तोरे निकट यक केतिक बाता।।
जस तैं मोहिं दीन्ह हुत आसा। पुत्र मिलाय सो कीन्ह हुलासा।।
कहँ लह करौं सो तोर बखाना। किंचित गिरा अहै केहि बाना।।
सो तोर गुन बरनै का कोई। रोम-रोम जो रसना होई।।
तबहुँ न तोर दया कहि आवै। कहँ यह जोग जीभ कोउ पावै।।
दुख हरता करता सुखदाई। बिछुरा सुत मोहि दीन्ह मिलाई।।
देखौ खेल अपार यह, औ चरित्र करतार।
दासी सुत के कारन, दीन्ह नबी दुख धार।।९।।

चार ऊँट भरि मुहरैं आई। सहस ऊँट भर अन्न भेजाई।।
बीस ऊँट भरि बसन सोहावा। औ फल भोग जो बरनि न आवा।।
सभ कनआँ के जावत लोगू। भेजा सभ कहँ जो जेहि जोगू।।
एक-एक कहँ आयउ पाहुर। अम्बृत भोग दरब पहिराउर।।
बसन दरब औ अम्बृत भोगू। घर-घर नगर पाइ सभ लोगू।।
फिरी दसा कनआँ कै आई। दुख अकाल जस भाग पराई।।
जो सपूत उपजै कुल माहाँ। करै सो नगर देस पर छाहाँ।।
घर-घर होइ अनन्द बधावा। औ तरुनिनि मिलि मंगल गावा।।
छत्तिस कुरी दरस की आसा। पानि पाइ जस मरत पियासा।।
कनआँ नगर अनन्द भा, घर-घर मंगलचार।
यूसुफ दरस की लालसा, सभै दुखित नर-नार।।१०।।

यूसुफ गयउ जहाँ सुलताना। आदि अन्त लह कथा बखाना।।
अग्याँ होइ तो लेउँ बोलाई। आवहिं पिता सहित दस भाई।।
कहा साह जनि बिलँब करेहू। बाहन दरब भेजि सभ देहू।।
ऐसे बीर रहैं जो साथा। रहै देस सभ अपने हाथा।।
जिन्हकी हाँक सिंध ते भारी। यक-यक भीम और गिरवर धारी।।
बन्धव बल तजि और न दूजा। सातौ दीप करै तोहि पूजा।।

दस दिग्गज तस बन्धु तुम्हारे। होइ देस महँ हाँक हमारे।।
आवै नबी हमारे देसा। देखहिं सिद्ध हरै सभ लेसा।।
धन्नभाग वह देस सोहावा। जहाँ सिद्ध कर होइ टिकावा।।
नृप आग्याँ लै यूसुफ, भाइन बिदा कराइ।
रथ बारन सुखपाल हय, गरदभ ऊँट पठाइ।।११।।
सभै बन्धु कनआँ कहँ गये। रंक भिखारि धनी नर भये।।
सभ कहँ दरब दीन्ह जस आँटा। बसन भोग फल घर-घर बाँटा।।
औ सभ कनआँ कीन्ह तयारी। नर-नारी कहँ आइ सवारी।।
गरदभ तुरी हस्ति सुखपाला। रथ करभी चँडोल बिसाला।।
चले सो लोग छतीसौ जाती। सुनि यूसुफ कहँ हुलसै छाती।।
चढ़ि-चढ़ि चले पुरुष औ नारी। रंक धनी सभ साज सँवारी।।
कहहिं कि धनि यूसुफ कुल आवा। पाँगुल रंक बेवान चढ़ावा।।
जिन्ह कबहूँ भरपेट न खाई। तेहि यूसुफ चंडोल चढ़ाई।।
मिलै न जाहि कामरी कारी। चले दुसाला ओढि भिखारी।।
रंक भिखारि चले सभै, बाँधि सो टेढ़ी पाग।
कब यूसुफ कहँ देखिए, सभै यही धुन लाग।।१२।।
औ सभ लोग कुटुम्ब परिवारा। चले सँवरि वह रूप अधारा।।
निसि-दिन चले जाहिं मग माहीं। मारग महँ बिलम्बहिं कछुँ नाहीं।।
पहुँचे जाय मिसिर जब धारा। दूतन अरथ जनायहु सारा।।
आवहिं बहुत सो लोग अनूपा। उन्ह सँग एक बिरिद्ध सरूपा।।
सिद्ध सरूप जोति उजियारी। मनु माथे महँ दिपै निनारी।।
यूसुफ आइ साह से कहा। आगू लेइ कहँ आयसु चहा।।
बोला साह जाहु अगवाना। करहु पिता कर बहु सनमाना।।
पै बाहन तें उतरेहु नाहीं। पाउ न धरहु भूमि के माहीं।।
राज तेज सभ तेज तें भारी। सेवहिं सिद्ध औ तपा भिखारी।।
बाहन नगर तें जाइकै, लै आवहु अगवान।
चढ़ें तुरी पर कीजियो, तुम जोहार सनमान।।१३।।
मैं अब बिरिध भयउँ बलहीना। राज प्रताप तुम्हैं सभ दीना।।
महासिद्ध है पिता तुम्हारा। राज प्रताप सो अहै हमारा।।
उतरें भूमि तेज मिटि जाई। सत्रु अनेक होहिं दुखदाई।।
छत्र हमार लिहेउ तुम साथा। फेरत छत्र जाहु निज माँथा।।

औ नौबत बाजत लै जाहीं। औ संग लेहु मरातिब माहीं।।
उहाँ से जाइ पिता कहँ ल्यावहु। निज आसन पर करहु जो भावहु।।
यूसुफ कहा जो आग्याँ होई। सो मैं करब और नहिं कोई।।
चालिस सहस कटक लै साथा। सेवक धरैं भूमि पै माँथा।।
इब्न अमीन औ यूसुफ दोई। बाहर नगर चले पुनि सोई।।

मन महँ कीन्ह बिचार तब, काह करहिं करतार।
पातसाह वह विधि कहेउ, पिता कै आँच अपार।।१४।।

जोजन एक गयउ जब दूरी। सेवा करै लाग भर पूरी।।
उतरि तुरी तें आसन कीन्हाँ। औ पुनि जोग-जाप चित दीन्हाँ।।
करि सेवा तेहि निद्रा आई। देखा सपन अँदेस हेराई।।
जो कुछ तोहि कहेउ सुलताना। सो तुम करहु न मानहु आना।।
तब यूसुफ फिर भयउ सवारा। अब मैं कहा करौं करतारा।।
जब पहुँची तहँ जाइ सवारी। जहँ आवत याकूब दुखारी।।
कहै बात जस बाउर ताता। सभ कोउ तें पूँछै रँगराता।।
देखा ठाट भार औ भीरा। जगमग लाल जवाहिर हीरा।।
फेर-फेर पूतन तें कहई। यह फरऊन मिसिर कर अहई।।

माही और मरातिब, सभ सोहै तेहि संग।
चालिस सहस सवार बिच, सोहै दिनमनि रंग।।१५।।

प्रभु दूतन कहँ आग्याँ दीन्हा। यूसुफ संग दूत करि दीन्हा।।
जगमग जोति करहु अस भारी। जहँ यूसुफ कै आवै सवारी।।
देखै सुत याकूब सोहावा। रहै न हियें सोच पछितावा।।
यूसुफ लागि कीन्ह जस जोगू। तस अब देखि सो हरै वियोगू।।
भै आग्याँ दामिनि कहँ आई। यूसुफ के सिर पर चमकाई।।
सिर पर मेघ छाहँ करि दीन्हा। तामहँ बीजु कौंध दुति कीन्हा।।
लिये दूत सभ नूर कै आसे। चकृत होइ लखि डीठ तमासे।।
सूरज सहस कला उजियारा। यूसुफ बसन करत चमकारा।।
किरन अनेक बसन पर आई। सहसन रंग अनूप देखाई।।

ऊरध दूत उदोत कर, अधिक जोति करि दीन्ह।
अरध नृपति कर ठाट सभ, यूसुफ के सँग कीन्ह।।१६।।

सिर पर छत्र झला झल होई। देखत डीठ न ठहरै सोई।।
हीरा लाल जवाहिर जरा। झलमलात अम्बर तेहि करा।।

ऊपर दूत सो छत्तर धारी। तेहि की जोति अधिक उजियारी।।
कहा सुतन यूसुफ है सोई। जेहिके सिर पर छत्तर होई।।
कलंगी नग चमकै जेहि पागा। औ तन बसै तास कर बागा।।
ढारहिं चँवर होइ चमकारा। देखत चौंध बीजु अस मारा।।
मरफातास दुंदुभी गाजै। औ नौबत सुन्दर धुनि बाजै।।
चहुँ दिसि बोलहिं पालक द्वारा। आगे करखा होइ पँवारा।।
करत सो धूम लुटावत दाना। पिता सौंह यूसुफ नियराना।।

रूप सोन के बूँद सम, बरसै चहुँ दिसि मेंह।
जाचक रहा न मिश्र महँ भरा दरब निज गेह।।१७।।

दोउ हाथ से दरब लुटावै। दुखी-सुखी जाचक नर पावै।।
सहसन रंक औ तपा भिखारी। होइगै धनी दरब अधिकारी।।
जब याकूब निकट भे आये। यूसुफ तुरी बैठ सिर नाये।।
पिता चरन सुत सिर लै लावा। पितइँ पुत्र कहँ हियें लगावा।।
तब लह रहेउ हियें महँ लाई। जब लह उर कै आग बुझाई।।
बरजेउ साह तेज अधिकाई। दीन्हा अलख तुरी बैठाई[1]।।
पिता पुत्र अस रोये दोई। रोदन कीन्ह जगत सभ कोई।।
पाहन की छाती बिहरानी। पंछी पतंग न जाइ बखानी।।
भर नैनन जब रूप निहारा। बिछुरि मिला भा नव अवतरा।।

दोउ रोदन सुनि लाजेउ, मेघ बलाहक बार।
जो बिछुरै सो जानै, यह दुख दगध अपार।।१८।।

तीस बरिस पर भयउ मिलापू। जनु न रहा कुछ दुख सन्तापू।।
पिता तरुन सो बिरधा भयऊ। पुत्र बाल तरुना होइ गयऊ।।
पिता देखि सुत अचरज मानै। तात पुत्र फिर-फिर पहिचानै।।
दिन दस कर यह जग व्यवहारा। जाइ बसन्त होइ पतझारा।।
भये सवार पुत्र सँग ताता। चले नगर कहँ चालत बाता।।
पूँछा पितउँ कहौ अब मोही। केहि विधि बन्धु परिहरा तोही।।
कहा-तात जनि पूँछहु सोई। कहें बात अबिचारी होई।।
निज मुख तें मैं कहब न बाता। पूँछहु अरथ कहैं जो भ्राता।।

१- 'दीन्हा अलख तुरी बैठाई।' मर्यादा रक्षा के लिए ईश्वर ने यूसुफ के घोड़े को बैठा दिया। अतः उन्हें (यूसुफ को) घोड़े से उतरने की आवश्यकता ही न पड़ी। क्योंकि पिता के सम्मान में घोड़े से उतरना चाहिए था, किन्तु ऐसा करने से शाह ने मना किया था।

मैं कुछ दोस हियें नहिं आना। करहु पिता तुम छमाँ निदाना।।
पूँछहु अरथ सो सुतन तें, कहा सभन सिर नाइ।
रोम-रोम औगुन भरे, लाजन कहा न जाइ।।१६।।

इब्न अमीन वह पत्र देखावा। देखि पिता हिय कोप बढ़ावा।।
सभऊँ लिखा पितइँ पहिचानी। औ सभ सुत कै छाप निसानी।।
तुम यूसुफ कहँ दास बनाई। निलज लोग जेहिं लाज न आई।।
यूसुफ की माता की चेरी। तेहिके सुत तुम आप न हेरी।।
जो वह कहै दास तुव सोहै। वह सभ जग कुलीन कहु को है।।
इबराहीम खलील को पोता। लूत नबी कर नाती होता।।
जासु बंस निज तात सुभावा। सोइ पुत्र जग माहिं कहावा।।
देइ सराप होहु जरि छारा। रहै न जगमहँ रेख तुम्हारा।।
ताकहँ दास औ चोर बनायहु। यह सो झूठ कहि का सचु पायहु।।
झूठ कहेउ तुम मोतें। बिग झूठा करि दीन्ह।
चोर कहेउ यूसुफ कहँ। मन महँ लाज न कीन्ह।।२०।।

निसि-दिन करै तपस्या सारी। एक झूठ सभ देइ बिगारी।।
धनि यूसुफ धनि ताकर दाया। क्रोध न कीन्ह कीन्ह फिर माया।।
जाकहँ 'दैव' बड़ा करि देई। का भा कोटि जो बैर करेई।।
करै डाह सो होइ निपाता। ताकहँ बरधित करै विधाता।।
यूसुफ रैन सपन जो देखा। किहेउ डाह औ कोटि परेखा।।
डारेहु कूप सो दइयँ निसारा। नायक हाथ बेंचि पुनि डारा।।
कहौ सो सपन साँच कै नाहीं। देखहु अब बिचारि मन माहीं।।
गरह एकादस तुम सभ भाई। माँतु तुम्हार चंद सम आई।।
औ हम सूर समान कुलीना। सभ यूसुफ के भये अधीना।।
जाकहँ लिखा सो राज विधि, सो निज राज कराइ।
कोटि जतन दुरजन करहिं, मरहिं रोइ विष खाइ।।२१।।

सुनि असबात बात यह जागे। पिता सौहँ सभ रोवन लागे।।
देहु पिता अब हमहिं असीसा। जेहितें छमा करै जगदीसा।।
औगुन कीन्ह महा अस भारी। मुकुति भरोस नाहिं परचारी।।
जस यूसुफ सभ दूषन हरा। तस प्रभु हरै होइ तब खरा।।
तब करि मया किहेउ अस बाता। यूसुफ मुकुति सो मानै विधाता।।
वहिकै छमा अलख अघ मेटै। दोष तुम्हार दयाल समेटै।।

पुत्र काज याकूब सोहावा। होइ कै ठाढ़ दयाल मनावा।।
औ पाछें यूसुफ भा खरा। हाथ जोरि बिनती अनुसरा।।
दसौ पुत्र तेहि पाछें रोवहिं। मुकुति काज मुकतानि पिरोवहिं।।
बारह पुत्र पिता सहित, बिनती कीन्ह अनेक।
जब लह प्रभु चाहो नहीं, परगट भयउ न एक।।२२।।

बाप पूत बिनती करि हारे। रहे दिवस भरि हाथ पसारे।।
जिबरईल नहिं आये पासा। पुत्र तात मन भई निरासा।।
बीस बरिस लह रोदन कीन्हा। तात असीस अनुज सँग दीन्हा।।
तब पुनि मोख कीन्ह करतारा। आये जिबरईल तेहि बारा।।
कहा नाहिं ये तारन जोगू। बड़ अपराध कीन्ह इन्ह लोगू।।
कहा झूठ औ छल-बल कीन्हा। यूसुफ कहँ बिरथा दुख दीन्हा।।
झूँठ बोलि बेंचा तेहि हाथा। कुरतहिं झूठ रँगा छल साथा।।
का मुख लाइ सो माँगहिं मोखू। रोम-रोम औगुन औ दोखू।।
यूसुफ लागि मोख करि दीन्हा। औ असबात नाम तेहि कीन्हा।।
यूसुफ कारन मोख अब, दीन्ह इनहिं करतार।
भये सिद्ध असबात पुनि, धनि यूसुफ अवतार।।२३।।

करआँ नगर कै नारि सोहाई। गावहिं मंगल बाज बधाई।।
नर-नारी नेउछावरि सारहिं। औ फिर-फिर वह रूप निहारहिं।।
जस यूसुफ लीन्हेउ अवतारा। भयउ सो राग रंग झनकारा।।
कोइ नैनन से नीर बहावै। औ काहू कहँ मुरछा आवै।।
मंगलचार होइ चहुँ ओरा। जानहुँ रैनि भई है भोरा।।
जब याकूब मँदिल महँ आवा। देखत महल महा सुख पावा।।
लै सो पाट पर तेहि बैठावा। सभै नगर मोजरै कहँ आवा।।
आयउ भेंट काज सुलताना। देखि सिद्ध कहँ निसचै माना।।
कीन्ह कबूल दीन वह केरा। निज मारग सें पितु मुख हेरा।।
परगट दीन सोहावा, कीन्ह मिसिर परकास।
पिता पाइ सुख पावा, घट-घट भयउ हुलास।।२४।।

सिगरे मिसिर दीन तब जागा। दुखी-सुखी सभ मारग लागा।।
पिता पुत्र औ सभ परिवारा। करहिं भोग सुख संग अहारा।।
सभ दुख हरा सोग-संतापू। जनु न रहा कुछ कष्ट कलापू।।
वृद्ध तेज भयऊ सुलताना। आइ काल तब हनेउ निसाना।।

तब यूसुफ कहँ पास बोलावा। सौंपा पुत्र औ अरथ सुनावा।।
किहउँ पुत्र करि तुम प्रतिपाला। तोहि सौंपौं सभ बालक बाला।।
घर औ बार औ राज तुम्हारा। तुमहिं सौंपि अब चहौं सिधारा।।
यह जग राज पाट औ साजू। भयउ परार चले उठि आजू।।
लोग कुटँब सभ छाड़ि अकेले। देखहु आज सो अनतहिं खेले।।
आये जगत अकेलै, चले अकसरै पंथ।
लोग कुटुब सभ मिथ्याँ, देखहु बाँचि गरंथ।।२५।।
अकसर चले औ अकसर आये। दिन पाँचेक कै भीर बनाये।।
कोउ न चले कटक खन्धारा। अरथ-दरब औ साज भँडारा।।
पातसाह जब रोदन कीन्हा। घर औ बार सौंप सभ दीन्हा।।
यूसुफ कहँ करुना होइ आई। रोवै लाग सँवरि प्रभुताई।।
मोह जाल संसार पसारा। चाटक खेलि रहा करतारा।।
पातसाह निजलोक सिधारा। ठावहिं ठावँ रहा पुनि-सारा।।
जोति अनूप देहँ तजि गई। चारि घरी तब दूभर भई।।
सभै हतेउ औ मीत पियारा। चाहहिं बाहर बेगि निसारा।।
एक घरी रखि सकै न कोई। कैसौ मीत पियारा होई।।
कुमकुम लावत जेहि बदन, पौन न जात सँभार।
तापर लोग ओढ़ावहिं, सहसन मन तन छार।।२६।।
पातसाह कै गति पति कीन्हा। पुत्र हाथ सें माटी दीन्हा।।
छार मिलाइ छार करि कूरा। आये घर बालक हित पूरा।।
घरी चारि कर हतेउ छलावा। भूलि गयउ जनु दिष्टि न आवा।।
जहाँ ते आये गये तेहि ठाऊँ। रहिगा जगत माहिं यक नाऊँ।।
सोऊ नाम लाख महँ एका। रहै जगत जो करहिं बिवेका।।
साह तनय कहँ पाट चढ़ावा। यूसुफ राज करै जस भावा।।
दसौ बन्धु कहँ दीन्ह बढ़ाई। कटक भँडार देस सभ पाई।।
वै अस बली औ सुपुरुष बीरा। लीन्हा देस पेलि निज बीरा।।
कोऊ रूम साम कोउ लीन्हा। सभ तें जूझि जीत पुनि कीन्हा।।
यक-यक बन्धु सपूत सभ, सुपुरुष औ बलवान।
यूसुफ कै महिमा करहिं, सात दीप सुलतान।।२७।।
यूसुफ नबी भये सुलताना। चहुँ दिसि बन्धु सँम्हारैं थाना।।
दिन-दिन राज-साज अधिकाई। सभै बन्धु कहँ निरिप बनाई।।

यकदिन लावी गयउ अहेरा। तहँ मृगराज आनि कै घेरा।।
करिकै जूझ पकरि लै आवा। मिसिर नगर महँ अचरज छावा।।
औ याकूब नबी सुख पावा। सभ पुत्रन कर देखि बढ़ावा।।
यूसुफ पास रहै दिन राती। देखि पुत्र कहँ हुलसै छाती।।
पितातें पूँछि करै नित न्याऊ। घर-घर उदित भयउ सुख चाऊ।।
दुखी न रहा मिसिर महँ कोई। परजा सुखी, पाइ सुख सोई।।
ठाउँ-ठाउँ साजी धरमसाला। करै पथिक कै बहु प्रतिपाला।।
देस-देस महँ हाँक भै, दीन्ह सभै सतराह।
नीति-धरम जग छावा, भई दीन कै चाह।।२८।।

मंदिल कोट बनी फुलवारी। पोखर कुआँ सराय सँवारी।।
पुत्रन कै लखि संपति साजा। दुख दारुन[1] याकूब को भाजा।।
वै 'असबात' बली बरिवंडा। खंड-खंड करि देहिं अखंडा।।
रूम देस रोईल जो लीन्हा। चीन[2] यहूदै निज बस कीन्हा।।
खुरासान सभऊँ रन जीता। समर कन्द लावी बस कीता।।
सात दीप महँ भई अहाना। सभ सतराह दीन्ह सुलताना।।
जस दुख सहा पुत्र के लागी। तस याकूब बुझी हिय आगी।।
मानौं जनम फेर विधि दीन्हा। पुत्र मिलाप पिता तें कीन्हा।।
घर-घर मिसिर सो आनंद छावा। कनआँ कर सभ लोग बसावा।।
न्याव कीन्ह अस यूसुफ , खंजन और सचान।
रहहिं रात-दिन एक सँग, बली निबल नहिं जान।।२९।।

पाठान्तर–१- दरिद, २-साष

तेईस मिलन एवं विरह निवेदन खण्ड

यूसुफ भयउ[1] मिसिर कर भूपा। न्याव दान नित करै अनूपा।।
यक दिन हिये कीन्ह अस ग्याना। मोकहँ दइयँ कीन्ह सुलताना।।
बिन मंत्री जो होय महीपा। जैसे सदन होय बिन दीपा।।
पै कोऊ अस डीठि न आवै[2]। जाहि[3] सचिव कहँ[4] कुरिय[5] चढ़ावै[6]।।
जिबराइल[7] तेहि अवसर आये। सचिव कुरी कहँ अरथ जनाये।।
भोर मंदिर तें बाहर आवा। लकड़ी लिए जो मुख देखरावा[8]।।
उत दुरबल औ नृपबल हीना। महादुखी औ जीरन दीना।।
तब मन महँ निज कीन्ह बिचारा। कत उठाव[9] ये[10] जगकर भारा।।
भये सोच यह[11] डाह तँबाई। जिबराइल[12] तब आइ सुनाई।।
कौन सोच हिरदै करौ, औ मन होहु अधीर।
सचिव करहु यह पुरुष[13] कहँ, दुरबल दीन्ह सरीर।।१।।
इन तुम्हतें बहु कीन्ह भलाई। दई चहें तोहिं उरिन कराई।।
यूसुफ कहा बहुत गत कीन्हा। दियो अरथ मैं ताह न चीन्हा।।
कहा कि है बालक यह सोई। ताकर मरम न जानै कोई।।
मिसिर सचिव तोहि चह[14] सँघारा। दै साखी तोर प्रान उबारा।।
तैं मानुस कर बालक अहा। जिन मुख बचन न्याव को कहा।।
सो बालक यह दुरबल दीन्हा। जहाँ नाहि ओ रूप बिहीना।।
सचिव ग्यान कर चाहै आगर। सो यह होय बुद्धि कर सागर।।
तब यूसुफ तेहि हिये लगावा। औ ताकहँ हम्माम भेजावा।।
करि असनान पन्हावा जोरा। तास-बादला जोत अँजोरा।।
कँदली[15] औ नवरतन पन्हावा[16]। ताह सचिव कै कुरियँ[17] चढ़ावा।।
अलख निरंजन न्याय कर, एकहि एक बिचार।
काहू कै सेवा नृफल, करै न तनिक निसार।।२।।
अब बरनौ वह बिरह वियोगिन। यूसुफ लाय भई जो जोगिन।।

पाठान्तर–१-भयो, २*- नूर अली की प्रति में-पै कोई ऐस दिष्टि न आवे, पाठ दिया है। ३- जाह, ४-कै, ५-कोरे, ६-चढ़ावै, ७-जबराइल, ८*- नूर अली की प्रति में इस अर्द्धाली के स्थान पर-'पहले मिले सो सचिव बनावहु' पाठ दिया गया है। ९-उठावे, १०-यह, ११-महँ, १२-जिबरैल, १३-पुरख, १४-चहा, १५-कँलगी, १६-पेन्हावा, १७-कोरि।

चालिस बरस जोग जिन्ह कीन्हा। दरब भँडार खोय सभ दीन्हा।।
जेहि दिन नाँव लिये कोउ आए। तेहि दिन खंजन भोग कराए।।
जेहि नाँव सुनै तेहिं नारी। रोय-रोय काटै निस कारी।।
कुछ न रहा तब जोग कमाई। दरब-अरथ सभ दीन्ह लुटाई।।
रोवत नैन भये अँधियारे। रोम-रोम तन विरहिन जारे।।
जब लहि नैन हुते वह केरे। तब लहि दरस प्रीतमहिं हेरे।।
गये नयन भइ रंक भिखारी। बिरह स्वरूप भई वह नारी।।
कूबर निकसि पीठ महँ आवा। बक्र अंग भा[1] सूध सोहावा।।

लै लकुटी हेरत फिरै, नित यूसुफ कै बाट।
जो कोइ नाँव सुनावै, भुइँ महँ धरे लिलाट।।३।।

बालक झूँठि सुनावहि आई। यूसुफ गाँउ सुनत बौराई।।
कहै कि निकसौ आज सवारी। धाई फिरै होत बलिहारी।।
जब लहि हत्यौ दरब औ दाना। दीन्ह नावँ सुनि कौड़ि[2] समाना।।
यूसुफ काज सबहि कुछ दीन्हा। कुछ न रहा तब काहु न चीन्हा।।
तब सब लोग सो बाउर कहै। विपत परे कोउ संग न रहै।।
पावहिं अरथ दरब पहिरावा। खाहिं भोग लै नाम सोहावा।।
जब न रहा कुछ सभ अलगाना। हत्यौ नेत्र सभ भये बेगाना।।
जेहितें कहै बात पर नारी। सो रिस खाय देइ तेहि गारी।।

लगुटी लिये गली-गली, फिरै मंत्रि के आस।
सुनत सवारी मंत्रि कै, धाइ फिरै चहुँ पास।।४।।

गई निकसि सभ दासी चेरी। अपने यक प्रीतम कहँ हेरी।।
सेवक दासी रहा न कोई। विपत पड़े कोइ साथ न होई।।
रहै बहुन महँ अकसर दुखी। होय अछरार[3] रहै बिकमुखी।।
जो कुछ रहा सो सब्है गँवावा। पिया प्रेम बिन अवर न भावा।।
हर्‌यो भोग सुख नींद विलासा। हर्‌यो चैन औ हर्‌यो हुलासा।।
हर्‌यो दरब औ बचन सोहावा। हर्‌यो रूप जो जग कहँ भावा।।
जोवन हर्‌यो रूप हरि गयो। विरध[4] स्वरूप सभै तन भयो।।
भयो अंग सब्ह ढील समाना। चैन गयो तेहि प्रेम को बाना।।
गये तेज तन पौरुख हारा। नैनन मेटि गयो उजियारा।।

पाठान्तर--१- मा, २-कौटि, ३-अदरार, ४-बिरध,

नास कीन विधि सब गयो, खोये सुख अरु चैन[1]।
जोवन रूप न थिर रहा, रहा बिरह तन मैन।।५।।

एक दिन एक नारि पहँ जाई। रोवै लागि सँवरि सुखदाई।।
तेहिके चरन सीस लै आवा। आवा पुनि सभ भेख[2] देखावा।।
यूसुफ नबी कै मोहि सवारी। देहु दिखाय होहुँ बलिहारी।।
सँवर नार पाछिल दिन सोई। लाखन दरब लीन्ह सभ कोई।।
उठै मया भइ तेहिके संगा। जो दीपक सँग भई पतिंगा।।
चहुँ दिसि फिरै संग लै नारी। अकस्मात मिलि गई सवारी।।
उठै धूम तिल ऊपर भयऊ। चहुँ दिस अरध अवध होय गयऊ।।
लै सो पाट पर ताहि बैठावा। कहा चेत अब यूसुफ आवा।।
औ यूसुफ ते कहा पुकारी। बैठे पाट जुलेखा नारी।।

नाम जुलेखा नार मुख, पड़ा जो यूसुफ कान।
मया मोह जब उपजै, हिये प्रेम कर मान।।६।।

देखा विरिध भई वह बाला। ना वह रूप न रंग न हाला।।
कंठा एक करै महँ सोहै। पूँछै लोग कि यूसुफ को है।।
नैन नाह जो देखै नारी। पौरुख नाह जो होय बलिहारी।।
लगुटी लिये बाट पर ठाढ़ी। बक्र पंथ महँ चिंता गाढ़ी।।
रोवत ठाऊँ ठाठ जो कोरी। जोबन रतन लीन्ह क्यों छोरी।।
हर गये जोत नैन से पानी। माँस झुरान नसै अरुझानी।।
अंबुज रंग हरिद रँग भयऊ। रती माँस सभ झूरा भयऊ।।
जो देखै सो निकट न जाये। देखि बिरिध मुख जाय हेराये।।
जो सवार आये तेहि पासा। कहे न आव मंत्रि कै वासा।।

सब्ह सवार के पाछे, यूसुफ नबी जो आय।
कहा भये हैं यूसुफ, जिन मोहि ऐस बनाय।।७।।

लखि यूसुफ मन भयो दुखारी। कौन हाल तुम्ह कीन्हो नारी।।
औ कैसे मोहि चीन्यहु बाला। नैन अंध औ हाल बेहाला।।
सब्ह सवार आये तुम्ह पासा। काहू देखि न किह्यो हुलासा।।
कहा नारि सुन प्रेम पियारे। चालिस बरस बिरह दुख जारे।।
जब तुरंग हम सौंह चलावा। चारिव घरी सो हियें चढ़ावा।।
तुम्ह दौड़ाय तुरी लै लाये। हम ऊपर खुर खंद कराये।।

पाठान्तर–१- बेन, २-भे।

चालिस बरस बिरह कै आगी। मोरे हिये रैन दिन जागी।।
कठिन बिरह को ताह सँभारे। छिन महँ अगिन जगत कहँ जारे।।
जो यह अगिन समुद्र[1] महँ डारैं। सोख समुद्र मधवानल जारैं।।

डारौं अगिन समीर पर, तो अंजन होय जाय।
धन सो हिया अति मूरख, जेहिं यह आगि समाय।।८।।

जस सो अगिन महँ रहै समुंदर। औ समुद्र महँ बसै जलंधर।।
तस होऊँ यह समुंदर माहाँ। जीवन मोर अगिन कै नाहाँ।।
जो यह अगिन न हिय महँ होती। जस घट महँ वह पूरन जोती।।
तो कत जीवन होत हमारा। बिरह अगिन मोर प्रान अधारा।।
निस दिन अगिन हिये सुलगावै। हिय पसीज चख आँसू आवै।।
बड़वानल तस प्रान हमारा। जिन यह अगिन प्रेम सँभारा।।
चित डौंडी बुधि फेरी लावै। मन दूनौ कै भीड़ उठावै।।
वह सो अगिन कर अहै पसीना। धरहिं नैन तैं तेज बिहीना।।
बिरह बुद्धि दोउ करहिं लराई। जस पारा लखि अगिन हेराई।।

बसै समुँदर अगिन महँ, ताको जीवन सोय।
छिन बिछुड़ै तन लागे, पुन जो[2] निजीवन होय।।९।।

यूसुफ कहा कि बात अपारा। हियें अगिन को राखै पारा।।
राखि न सकै आगि यह कोई। दग्धे तनु जरि छार सो होई।।
तुम्ह महँ हाल रहा कछु नाहीं। एक सो झूठ रहा तन माहीं।।
झूठ प्रेम कर का फल पावै। झूठ बात कहि धरम नसावै।।
कहा नारि सोचहु मन माहीं। जग महँ अगिन कहाँ है नाहीं।।
अगिन बंध[3] जेहि ओर न छोरा। पूरन वहै अगिन चहु ओरा।।
देखहु अगिन बीच कै छारा। सूरज अगिन जगत सब्ह जारा।।
अगिन भार जरत होय लोका। गरज-गरज महँ देख भभूका।।
मधवानल वहि अगिन समानी। अगिन अगस्त सोखावत पानी।।

अगिन[4] सरब रबि ससि, चंदन घन नखत निहार।
कत मानुष[5] वह अगिन तें, रहा न लोह निसार।।१०।।

अगिन तरुन नित लावत दाऊँ। अगिन विरिछ महँ लावहिं ठाँऊ।।
अगिन विपत तें करै प्रकासा। भूमि अगिन चढ़ि जात अकासा।।

पाठान्तर–१- नूरअली की प्रति में 'मधुद' शब्द दिया है। २-सो, ३-धुंध, ४-आगिन, ५-मानुख,

सब महँ अगिन परघट परचंडा। गूदर बाँस सरहर सरकण्डा।।
जो नाहीं आगे दुख देखहु। काह माँह वह अगिन विसेखहु।।
कहा कि[1] तुम सब्ह पढ़ा औ जाना। प्रेम अगिन तेहि हियें समाना।।
सुन यह बात जुलेखा रोवै। परघट अगिन हिये जो गोवै।।
तोरे हाथ कुछ यूसुफ अहै। कहा कि जाकहँ ताजिना कहै।।
कहा कि मो देहु पकराई। बिरह अगिन तब देहुँ दिखाई।।
फुंदन लीन्ह कोंड़ कर हाथाँ। लै लायो ताकहँ हिय साथाँ।।

फुंदन जर[2] तजियाना जारा, दस्ता जरै जो लाग।
डार दीन्ह तब यूसुफ, देखि बिरह कै आग।।११।।

कहा जुलेखा सुन नरनाँहा। राख्यों अगिन जो हिरदैं माँहा।।
जबही बुध मानुख उपराजा। चार तत्त कर पंजर साजा।।
यहै अगिन जो आदि सँवारा। आदि जोत वह अगिन सँचारा।।
तेहि छुट दूत होय ससि सूरू। कोउ न सकेहु रखि प्रेम अँकूरू।।
चमकत तें जस पथरी झारै। उठा भभूका हियें परचारै।।
आद पिता कहँ अगिन सो दीन्हा। जेहि तें सभ नर परगट कीन्हा।।
सब्ह तेहि सकेउ न आग सँभारी। प्रेम[3] हियें राख्यों परचारी।।
सो पावक मैं हिये निचोवा। चालिस बरस बीस जस गोवा।।
तेहि सो आग कै एक चिंगारी। जग नायक यह[4] सकेहु सँभारी।।
पूरन चहुँ दिसि अगिन विसाला। खाल माहँ दिह[5] अगिन कै ज्वाला।।

देख अवस्था नारि कै, औ हिरदै कै आग।
सभै लोग अचरज करहिं, प्रेम हिये महँ जाग।।१२।।

धन यह नार आग जिन बोई। बिरह बीज जस हियें निचोई।।
अहै अगिन वह प्रेम कै थाती। दीपक माहँ जरै जस बाती।।
धनि वह हिया अगिन जिन राखा। धन वह नारि प्रेमरस चाखा।।
पीठ औ पेट सरापन लागा। अबहु न मिटेहु बिरह बैरागा।।
ज्यों-ज्यों बिरध होय सरीर। लाज[6] बढ़ै[7] ओ होय अधीरा।।
यह मन कबहूँ मरे न मारा। जब लहिं पड़े न तन पर भारा।।
मन मारै सोई बड़ साईं। धाय निसार पड़ै तेहि पाईं।।
भयो अंग सब्ह टील समाना। निकसत तेहि तें प्रेम को बाना।।

पाठान्तर—१-का, २-जस, ३-पेपै, ४-यक, ५-वदिह, ६-लाजन, ७-बठै

नैनन रूप न देखहुँ, काननं सौंह न बात।
केहि कारन पछिता करौं, भयौ रैन परभात।।१३।।

धन संपत औ सब्ह सुख साजा। बिन पौरुख सभ कौने काजा।।
अब तन नैन गये सब्ह खोई। तबहुँ न दरस परापत होई।।
तोकहँ देखि आय कहँ रोवा। मोरे लिखत सबै दुख खोवा।।
कहाँ रूप वह जोबन जोरा। कहाँ नैन जस समुंद हिलोरा।।
कहाँ अधर सुरंग अमोला। कहाँ मदन वह सिरह कपोला।।
कहाँ कंठ वह कोकिल बोली। कहँ कठोर गुजराती चोली।।
कहाँ लंक जो बार भुवारा। लचि-लचि जायँ बार कै भारा।।
कहाँ चरन वह कँवल सोभावा। कहाँ अंग वह सूध सोहावा।।
कहाँ कपोतहि जोबन बाला। सदा जो सौतिन कै तन साला।।
कहाँ सरवर कहँ हँस वह, मोती चुन-चुन खाय।
लाग चुनै अब काँकर, झूरे में मरि जाय।।१४।।

का भा तोर सरूप सोहावा। चाँद सूरज जेहि देखि लजावा।।
कहा कि रूप तुम्हें सब्ह दीन्हा। तोरे विरह अगिन हर लीन्हा।।
कहा कि तें जो कीन्ह निठुराई। मैं जोबन ओ जोर गँवाई।।
कहा कि वह जीवन औ जोरा। जाके सौंह न काहुन जोरा।।
कहा कि नैन कटाक्ष सोहाये। कहा गये कोऊ हिये न लाये।।
कहा कि रोय-रोय मैं खोवा। गये नैन तोर विरह विछोहा।।
कहाँ गये वह अमिरित बानी। जेहि तें भये आग ओ पानी।।
तोरे प्रेम सभै हरि लीन्हा। सभै बात मैं तोहि कहँ दीन्हा।।
कहाँ गये लाल जवाहर मोती। लेइ तेहि झलक सो रब कै जोती।।
सुनेउँ नाँउ तोर मैं, दीन्हों सभै लुटाय।
सभ कुछ गयो न कुछ रहा, रहा प्रेम चित छाय।।१५।।

कहाँ गये वह दासी चेरी। रूपवंत जो काहू न हेरी।।
तास बादला रंग हरीरा। असावरी कर करै को चीरा।।
कहा कि टूक-टूक करि डारा। तोरे बिरह बसन सब फारा।।
अब तन पर कामरी टूका। हियें फिरावहिं विरह भभूका।।
तेहि कामरी पर देखी सोहै। प्रेमै लोग देखि तेहि मोहै।।
कहाँ गयो वह गरब तुम्हारा। जेहितें न काहुक ओर निहारा।।
दरब गरब औ जोबन जोरा। सब्ह यह अहै हरा मन तोरा।।

नैन अधीन औ रंग नियावा। गरुई कोऊ बैरन खावा।।
तोरे प्रेम सभै कुछ खोवा। एक प्रेम निज हिरदै गोवा।।
तोरे बिरह हर्‌यो सभै, नैन बैन गुन ग्यान।
सब कुछ गयो न रहा कछु, रहा एक तोर दगान।।१६।।

लागै कहै रोय पर नारी। चालिस बरस बीत कैसारी।।
निस दिन अगिन सो हियें निचोई। सुलगत रहै न चाँपा कोई।।
यहि सो अगिन कै तेहि करसाना। थाँमहि निकरयो जगत सुलताना।।
तुम सुलतान करो सुख भोगू। का जानहु दुख विरह ओ सोगू।।
चालिस बरस अगिन परचारा। छुट तोर बिरह और सब्ह जारा।।
जो कुछ दुख सह्यो दिन राती। का कोउ सहै वज्र कै छाती।।
कागद सात अकास बनावै। सात संमुद्र सियाही[1] लावै।।
लिखनी विरिछ होय जग सेरे। तीन लोक सब्ह होहिं लिखेरे।।
चारिव जुग[2] बीतहिं तेहि माहीं। दुख हमार लिखि जाय सो नाहीं।।
बारह मास वियोग दुख, यूसुफ सो भयो हमार।
चालीस बरस तन जारे, तेहि सभ दुखद अपार।।१७।।

चालिस[3] बरस जो आग निजोई। बारह मास कहुँ दुख रोई[4]।।
यक-यक दिन जुग होय बीता। कहँ लौं कहौं अहै सुनीता।।
दिन यक दुख जो सुनहु हमारा। तुम्हे[5] राज जुग-जुग अधिकारा।।
तोहिं बुध कीन्ह छत्रपत[6] भारी। सुनहु दुःख जो अहै दुखारी।।
जा कहँ दई बड़ा कर देई। सो दुखिया दुख कहा करेई।।
कबहूँ मोर कहा न माना। व्याह न भयो गवन नियराना।।
कबहूँ दृष्टि न मो तन फेरे। भयो अंध तब देखहुँ हेरे।।
भयऊँ बिरिध अब मरत सँघाती। सुनहु विरह दुख हुलसै छाती।।
जो दुख सुनहु करो तुम दाया। मानहु दीन्ह अनेकन माया।।
मैं तुमतें माँगहु यहै, सुनहु विथा दुख मोर।
होय मीच सुख सो भरौं, रिझौं सो अवगुन तोर।।१८।।

पाठान्तर—१-भियानी, २-जग, ३-चालीस, ४-रोई, ५-तुम्हो, ६-पुत

बारहमासा खण्ड

चैत मास पिउ[1] गयो बिछोई[2]। तबतें रकत आँसु मैं रोई[3]।।
सब्ह जग होय बसन्त धमारी। मोकहँ बिरह आगि ते जारी।।
बन उपबन[4] हरियर होय फूला। कीट पतंग चहूँ दिस भूला[5]।।
भँवर भुलान फिरै चहुँ ओरा। कुहकै कोकिल चातक मोरा।।
पिय कर नाउँ पपीहा लेई। बिरह हिये अधिक[6] दुख देई।।
सीतल पवन अंग कहँ भावै। बिरहिन को[7] तन अधिक जरावै[8]।।
रित बसंत सोहै सखी, काहें लगी कहंत[9]।
जग तरुवर[10] फूलै फलैं, विरहिन बेल दहंत[11]।।१।।

कवित्त

चैत तरुवर फूल फूले, भँवर सब्ह भूले फिरैं।
पवन सीतल तन सिराने, केतकी पर अलि गिरैं[12]।।
रित अनूप लखि स्याम सुन्दर[13], मंदिल सुख से जिया करैं[14]।
आँसु की सलिता[15] बढ़ी[16], तन बिरहिनै बूड़ैं मरैं।।[17]
माधौ[18] मास सुहावन आवा। रित बसंत संजोगिन भावा।।
बन[19] बसाय औ हिया लहकाई[20]। भूले भँवर पवन महकाई।।
कुँज छाँह तन[21] लाग सोहावा। सीतल पवन हिये कहँ भावा।।
उपजै सुभग समै अनुरागा। कामी काम आय तन जागा[22]।।
जती सती तन कन्दपे छावा[23]। रित बसंत सबके मन भावा।।
टेसू[24] आग लाग बन[25] माहीं। बिरहिन[26] कहाँ भाग अब जाहीं।।
अब रूखन[27] मुहँ[28] भरे अँगारा। बिरहिन हिया सरागन जारा।।
फूले फूल सुरंग कचनारन। लागे आग अनार के डारन।।
करनबास मैं बसै चहुँ ओरा[29]। बोलहिं कोकिल चातक मोरा।।
सुख सोहाग के समय यह[30], लोग कहैं रितुराज[31]।
हमें नष्ट दुख देय यह, आवै कौने काज[32]।।२।।

पाठान्तर–१- तपि, २-बिछोये, ३-रोये, ४-उनये ५°- केतक भिरँग तबस्ता फूला, ६-अधिको, ७-के, ८-लगावै, ९°- काह लगै बिन पंथ, १०-तरूर, ११-उदंत, १२°- कवित के प्रानन करैं, १३-सुँदिल, १४°- सुख सज्जा करैं, १५-सरित, १६-बढ़ै, १७°- निदुर बिरहिन बूड़ै मरैं, १८- बारहु, १९- तन, २०-भिंगाये, २१-बन, २२°- कमी आय काम तन जागा, २३°- चितै सती तन गँधरय छावा, २४-तेसे, २५-मन, २६-हरी, २७-अवगुन, २८-महँ, २९°- कर माया मैं बसी चहुँ ओरा, ३०-नहि, ३१-रबराज, ३२°- हमहिं बसंत दुख दइ यह, सरपंजर सम साज।

कवित्त

मास माघो सुठि[1] सोहावन, जगत सुख छायो सभै।
हरित पुहपित फलित तरुवर, केलि से पूरन अहै[2]।।
मौन[3] सीतल छाँह सुन्दर, सुख संजोगिन कै रहै।
कौन हरियर करै पिउ बिन, वेल विरही[4] से डहे।।

सोरठा

सीतल छाँह गँभीर, लाग सोहाय कामिनी[5]।
सुख औ भोग सरीर, सदन[6] उसीर सोहाय रित[7]।।

लाग जेठ[8] अब तपै करेजा। कामी काम करे सुख सेजा।।
फल पाके अमिरित रस पाके। काम आय कामिन तन जागे।।
रैन घटी दिन नित प्रति बाढ़ा[9]। बिरहिन आग अंग लै डाढ़ा[10]।।
कठिन घाम तन जरै हमारा। भूखन मंदिल उसीर[11] सँवारा।।
सीसी लै गुलाब डरवावहिं। औ कुमकुम घनसार[12] लगावहिं।।
सीतल मौन पौन जो आवै। नारि पुरुष कर सुख अधिकावै[13]।।
बात कहत निसि जाय बिहाई। दिन कहँ भोग भगत अधिकाई।।
जेठ[14] मास बिरहिन कहँ[15] जारा। दीन्हा आग लाय संसारा।।
बरखा हितु अब तपै करेजा। कहँ सोहाय बिन पीतम सेजा[16]।।
ग्रीषम रितु अगिन बढ़ै[17] ढूँढ़हि सीतल छाहँ।
ऐसे समय वियोगिनी, भाग सोख दिस[18] जाँह।।३।।

कवित्त

जेठ ग्रीषम विषम उषमा, भोग सुख वनिता करैं[19]।
नार पिउ के छाह बैठी, अंग कै उषमा हरैं[20]।।
भुवन सीतल पवन आवै, रवन रवनी चित धरैं[21]।
गुपुत परगट[22] एक पिव बिन, बिरहिनै निसि दिन जरैं।।

पाठान्तर--१-सनेह, २*- विटप फूलत फलत तरुवर, अंबसों बौरन भये, ३-बहुत, ४-बिरही, ५-अंग सोहाय सोकालिनी, ६-सदा, ७-अब, ८-चैत, ९*- रैन घटी दिन बहुत बढ़ावा, १०-लावा, ११-ओ सपर, १२-कहिं अंग, १३*- रोवँ रोवँ औ सुख अधिकाये। बिसै करत अंग सुख पाये।। १४-चैत, १५- कहै, १६*- करेज भयो रंगरेज क रंजा, १७-बैठ, १८-दस, १९*- जेठ ग्रीषम विषम आगम पान भोग विना करैं। २०*- निसार वियोगी छाँह तपिहै, अंग कै सीतल करैं।। २१*- रोवँ रोवँ मैं चित धरै, २२-परघट।

सोरठा

जेठ जरावे देह, नेहबाह नारी सुखी[1]।
चहुँ दिस बढ़यो[2] सनेह, बिरहिन कै दारुन समैं।।

लाग असाढ़ सो गाढ़ जनाई। घन गरजै दामिन चमकाई।।
उमड़ घुमड़[3] घन घोर तराजै[4]। काम निसान[5] चहो[6] खँड बाजै।।
कौंधत मेंह चकचौधत जीऊ[7]। केहिके कंठ लगै बिन पीऊ।।
पँछिय पतिंग सबहि घर साजा। जगत काम कर बाजन बाजा।।
गोर कुटी को छावै पीऊ। केहि विधि दया[8] देइ तोर जीऊ।।
दादुर मोर जो करहिं अँदोरा। नार कंत छिन तजहिं न कोरा।।
बिछुड़े होय[9] सो दुओ दुखारी। बिकल जरा भा सभ नर नारी।।
कोकिल कूक-कूक[10] हिय लावै। कुकनु सम भभूक परचावै[11]।।
कैसे कटै सो यह रितु भारी। बिन पिउ घमँड घोर अँधियारी।।

मास असाढ़ सोहावने[12], मन भावन ना सेज[13]।
देख घटा औ दामिनी, काँपै मोर करेज।।४।।

कवित्त

अब[14] अषाढ़ घन घोरि[15] आयउ[16], लागि चमकै दामिनी।
अति[17] घमंड से[18] मेघ धाये, दिवस भई जस जामिनी।।
ऋतु सुहावन[19] देखि मन महँ, हरष बाढ़ै[20] भामिनी।
रैन दिन करुना करै, घर में अकेली[21] कामनी[22]।।

सोरठा

बीता[23] जात अषाढ़, कंत भूलि सुख महँ रहे।
बिरहिन के[24] दिन गाढ़, पिउ[25] बिनु[26] कहु कैसे कटै।।

अयाउ[27] सखी सोहावन सावन। भाव न भवन[28] बिना मनभावन।।
घर-घर कामिनि साज हिंडोला। देख समै सरगुर चित डोला।।
जोगी जती को आसन छूटा। साधु[29] संत कर[30] मनका[31] टूटा।।
काहु को चित्त रहा थिर नाहीं। भैं हरषित चित यह[32] ऋतु[33] माहीं।।
भवन वियोगिनि काटे[34] खाई। देखि-देखि यह समय[35] सोहाई।।
परहि जो आँसु भूमि पर टूटी। रेंगि[36] चलै[37] जस बीर बहूटी।।

पाठान्तर–१०- नेह माहँ मारै सखी, २- उठै, ३- घमंड, ४-विराजै, ५-बिसाल, ६- नवो, ७०- कूँधत माहँ चकूँधत जीऊ, ८-दय, ९-मुये, १०- लूक, ११-रचावै, १२-सोहावें, १३-पिव भावे निज सेज,१४-रितु, १५-घेर, १६-आयो, १७-रितु, १८-सों, १९-सोहावन, २०- बैठ, २१-अकेली, २२- सामिनी, २३-बीतो, २४-यह, २५-पिय, २६-बिन, २७-आयो, २८-रैन, २९-साथ, ३०-को, ३१-मंका, ३२-यहै, ३३-रित, ३४-काटै, ३५-समै, ३६-रेंग, ३७, चली।

जुगनू चमक-झमक[1] देखराहीं। बरसै[2] अगिनि[3] जो सावन माहीं।।
कैसे रहै भवन के माहीं। सावन जो मनभावन नाहीं[4]।।
सावन मास सोहावन बीता[5]। तन मन[6] काम अपरबल जीता[7]।।
सावन मन भावन नहीं, जीवन[8] विरथा जाइ।
काल न आवै[9] यह समै, कैसे रैनि[10] बिहाइ[11]।।५।।

कवित्त

मास[12] सावन अति[13] सोहावन, मौन मन भावै नहीं[14]।
काम कलपावै[15] सखी, छिन एक कल पावै नहीं।।
बैस बीती जात सजनी, कंत चित ल्यावै नहीं[16]।
जाहु सावन केर[17] आवन, लाल घर आवै नहीं[18]।।

सोरठा

तुम सावन फिर आहु, अबके गये न आवहू।
बिरह बिथा अवगाहु, तहाँ तुम्हार न काज कहू[19]।।

भादौं भवन भयावन भयऊ[20]। देखत घटा प्रान हरि गयऊ[21]।।
दिन औ रैन जाइ नहिं जानी। उनई घटा रहै भरि पानी।।
जल थल पूर सो नीर अपारा। रोकै[22] एक नदी औ नारा।।
जल परवाह जगत महँ[23] बाढ़ा। बिरहिनि[24] विरह परेउ[25] दुख गाढ़ा।।
घन गरजत तन[26] लरजै[27] मोरा। दामिनि[28] दमकि[29] चहै पिउ[30] कोरा[31]।।
गरज[32] कौंध[33] लखि मरि-मरि जाई। बिना कन्त के[34] लेइ जियाई।।
ऐसे समय सो नारि अकेली। निठुर कन्त जेइ[35] दुख परहेली।।
धन अकेल[36] औ भादौं राती। धन सो अहै बजर कै छाती।।
जेइ[37] भादौ[38] कर[39] मास सँवारा। जेइँ सो नारि औ दुख संचारा[40]।।
भादौं रैनि भयावनी[41], केहि विधि रहै[42] अकेल[43]।
धृग जीवन तेहि नारि[44] कहँ[45], जेहि स्वामी[46] परहेल[47]।।६।।

पाठान्तर–१-चमक, २-बरस, ३-अगिन, ४*- यह चौपाई इस प्रति में नहीं है। ५-बीना, ६-तन, ७-बीना, ८-जोवन, ९-आवे, १०-रैन, ११-बिहाय, १२-भा, १३-रितु, १४-भावन मन भावे नहीं, १५-कला पावा, १६०- सेज सुख पावा नहीं, १७-बहुर, १८०- कत घर आवहिं नहीं, १९*- यह सोरठा इस प्रति में नहीं है। २००- भादौं भुवन बेहावन भयो, २१-गयो, २२, होय गये, २३-माँ, २४- विरही, २५-परा, २६-'तन' शब्द यहाँ 'लरजै' के बाद आया है। २७-लरजत, २८-दामिनि, २९-दमक, ३०-पिव, ३१-कोरा, ३२-गरजै, ३३-कूँध, ३४-को, ३५-जिन, ३६-अकेलि, ३७-घन, ३८-भादों, ३९-कै, ४०-तासो नार औ पुरुष सँचारा, ४१-बिहावन, ४२-रहै, ४३-अकेली, ४४-नार, ४५-का, ४६-सामी, ४७-परहेली

कवित्त

मास भादौं रैनि कारी, देखि[1] कै[2] दूभर भई।
कन्त बिन सखि सेज सूनी[3], नींद नैनन से गई।।
मन हमारो[4] निपट बेकल[5], स्याम बिन दुख निरमई[6]।
विरह सलिता[7] उमँड़ि आई, कैसे कै बाँचै[8] दई।।

सोरठा

भादौं घेर घमीर, धीर धरै केहि विधि सखी[9]।
बढ़ी[10] विरह कै[11] पीर, कन्त[12] न पूछै बात मोरि[13]।।

लाग कुआँर सरद ऋतु आई। निघट नीर अगस्त दिखाई[14]।।
जहँ तहँ पंथी तुरी पलाना। बैपारिन बाहर बहिराना[15]।।
जो कहुँ छाइ रहे बनजारे[16]। सो फिर कै परदेस सिधारे[17]।।
हम पंछी नहिं[18] सोच हमारी। ऐसे समय जो[19] दीन्ह बिसारी[20]।।
रहै[21] नगर महँ लाल हमारा। नैन[22] ओट मोहिं कोट पहारा।।
जो निरदई करै नहिं दाया। का भा[23] निकट रहै निरमाया।।
सहस कोस तें[24] पंथी[25] आवै। माया मोह हिये[26] उपजावै।।
रहै मँदिल महँ[27] करै[28] न दाया। सहस कोस ताकहँ निरमाया।।
मास कुआर घटा जल सारा। भयउ[29] प्रकास[30] मिटेउ[31] अँधियारा।।
सारद समय सुहावनी[32], मन भावन नहिं पास।
भै सूरत अलखावनी[33], जो हिय नाहिं[34] हुलास।।७।।

कवित्त

क्वार[35] मास अब लाग सुन्दर, चाँदनी निर्मल[36] भई।
सरद राका विमल सोहत[37], सरद आवत निरमई।।
जल अगस्त सम सोखि लीन्हेउ[38], नींद नैनन सो गई।
चख वियोगिनि के न सूखे, और जल सूखे दई।।[39]

पाठान्तर–१-देख, २-कर, ३-सोई, ४-हमार, ५- व्याकुल, ६-स्याम बिन सब दुख हिये, ७- सरिता, ८-बचिये, ९*- भादों केहि रँग मीर, धरै धीर केहि विधि हिया। १०-बाढ़ै, ११-क, १२- कंथ, १३-मोहिं, १४*- घटा जु नीर सब अंग सुखाए। १५*- पीय प्रान बाहर बेहराना, १६-बंजारा, १७-सिधारा, १८-तेहि, १९-सो, २०-बेसारे, २१- रहे, २२- नैनन, २३- भो, २४- तेहि, २५- पाछे, २६- हिया, २७-महँ, २८- करे, २९- भय, ३०-परकास, ३१- मिटेहु, ३२, सुहावन, ३३-लखावनी, ३४, नहीं, ३५, कुआर, ३६- निरमल, ३७*- सरद रंग बेभाल, सोहित, ३८*- जल अंग सब सोन लीन्हो, ३९*- चख वियोगिन के नहि सूखैं, अवर जल सोखै दई।

सोरठा

यह ऋतु सूखेउ[1] नीर, गगन अगस्त उदित भयउ[2]।
नैना भये अधीर,[3] रात दिवस पूरन रहै[4]।।

कातिक मास अधिक[5] उजियारी। संजोगिनि सुख समय पियारी।।
देखि चाँदनी करै हुलासा। जिन्ह के कन्त रहै नित पासा[6]।।
चहुँ दिसि होइ[7] हरष अनुरागा। कामिनि काम अंग महँ जागा[8]।।
यह ऋतु महँ सोहै उँजियारी। कैसे जियै[9] वियोगिनि[10] नारी।।
पिय कै लगन हियें अधिकाई। गगन नखत लखि[11] रैनि बिहाई[12]।।
सभै लगन वृसचीक[13] समाना। काटे खाइ न जाइ पराना[14]।।
विरहिन विरह अगिनि तन[15] जारी। चंद चाँदनी डारत[16] मारी।।
घायल विरह वियोगिनि बाला। निरखि चाँदनी होइ[17] बेहाला।।
सरद समै[18] बहु दुख अधिकारा[19]। बिरहिन प्रान जुआ जस हारा[20]।।
मोहन प्रीति जगावहिं[21], पिय मोहन[22] के लाग।
कहँ मोहन अस पावा, मिटै हिये कै आग।।८।।

कवित्त

मास कातिक सुठि[23] सुहेला[24], चाँदनी लखि चित हरैं।
देखिकै[25] यह रैनि[26] सुन्दर, नारि कत पिउ परिहरैं[27]।।
दाउदी सदबर्ग फूले,[28] देखि कै बिरहिन जरैं[29]।
सरद रितु की चाँदनी, बिरह के मारे मरैं।।

सोरठा

कातिक भा दिन खीन, बढ़ेउ भोग रजनी बढ़ी[30]।
बिरहिन बदन मलीन, भयउ देखि राकाससी[31]।।

पाठान्तर–१- सोख्यो, २*- जब अगस्त ऊदित भयो, ३*- नयनन भयो अधार रितु, ४-रह्यो, ५- महा, ६- बासा। ७-होहि, ८*- कामिन काम एक महँ लागा, ९- जियें, १०-बियोगिन, ११- सखि, १२- बेहाई, १३-संजोग, १४*- काटे खाय न जाय बखाना, १५-से, १६-डारै, १७- होय, १८-समय, १९-अधिकारी, २०- हारी, २१*- मोही निदित जगावा, २२- मोही, २३- सुठ, २४-सहेला, २५- देख, २६- रितू, २७*- नार कथ पिव परहरै, २८*- दुओ दिस बिरख फूले, २९- चरै, ३०*- कातिक बेहावन घन बैठ, भोग रजनी बैठ। ३१*- बिरहिन बरन मलीन भय, देख रंगी सखी।

अगहन दिवस घटा निसि बाढ़ी[1]। बिरहिन बेलि[2] तुषारन डाढ़ी[3]।।
जाड़ आइ जग माहिं जनावा। तन-मन असन बसन अधिकावा[4]।।
साजहिं सिविर[5] सुपेती[6] नारी। हरियर स्याम[7] पीत[8] रतनारी।।
पवन उदास अहै[10] अब लागी। हम कुकुनूँ[11] सम झारहिं आगी।।
भाँति-भाँति के[12] बसन सोहाये। संजोगिनि[13] प्रीतम संग भाये[14]।।
सरसों फूलि[15] रही चहुँ ओरा। लाग तुषार जनावै जोरा[16]।।
बाढ़ी रैनि बढ़ा सुख भोगू[17]। लागे केलि[18] करै सब लोगू।।
बिरहिन भई रैनि[19] यह[20] भारी। जागत[21] जाइ[22] सो विरह दुखारी।।
बिन पिउ जाउ न जाइ अभागा। रहै रात दिन हियरै लागा[23]।।

अगहन मास सोहावनो,[24] भै[25] दूभर बिन कन्त।
सेज अकेली रैनि यह, मिलै न आदि न अन्त[26]।।६।।

कवित्त

मास अगहन जाड़ व्यापेउ[27], देहँ लागै थरथरी[28]।
कन्त बिन दूभर भई, यह रैनि होइ गिरवर वरी[29]।।
निठुर पिउ नहिं बात पूँछै, माँस मारग परिहरी[30]।।
सुख सुहागिनि[31] सेज सोहै, एक हम[32] बिरहिन जरी[33]।।

सोरठा

हेवन्त[34] ऋतु अवगाह[35], जाड़ जनावै[36] देहँ अति[37]।
मोहि प्रीतम कै[38] चाह, वै भूले सुख राज महँ[39]।।

पूस जाड़ अधिकौ तन लागा। घर-घर नारि पुरुष अनुरागा।।
बढ़ी[40] रैनि[41] तन काम बढ़ावा[42]। घटा दिवस मोहिं चैन घटावा[43]।।
लाग परै[44] जग माहँ तुसारा। कँवल बदन मोर[45] विरहै[46] जारा।।
अंबुज बरन भयउ जरि खेहाँ। परगट जाड़ ते काँपै देहाँ[47]।।

पाठान्तर- १- बाढ़ै, २-बेल, ३-डाढ़ै, ४*- जाड़ आन तन माँह समाना। घर-घर आसन बसन अधिकाना।। ५- सौर, ६-सपेती, ७- सब, ८- मसियत, ९→- भयो चार ते प्रीतम प्यारी । जेहि तन तें नहिं होय निनारी, १०- बहै, ११-कुकनू, १२-कै, १३-संजोगिन, १४-धाये, १५- फूल, १६०- लाग तुसार परै निसि भोरा, १७०- बाढ़ै रैन बढ़ा संग भोगू, १८-केल, १९-रैन, २०- बहु, २१-जगत, २२, जाय, २३*- यह चौपाई इस प्रति में नहीं है। २४- सोहावन, २५- भा, २६*- सेज अकेले रैन महँ, मिलै न आवत कंत। २७- व्यापै, २८- थरे, २९*- कंत बिना दूभर भये, ढहि रैन होय करवट परे। ३०*- निठुर कंत नहिं बात पूँछे मास अगहन हर हरे। ३१- सोहागिन, ३२- दम, ३३-जरे, ३४-हेवँत, ३५-अनैग, ३६-कँपावे, ३७-कहँ, ३८-की, ३९०- बात न पूँछे निठुर वह, ४०- बाढ़ै, ४१-रैन, ४२- समान, ४३०- घटा दिवस सुख साज हेराना। ४४-परे, ४५- हम, ४६- बिरहिन, ४७*- अंबुज बदन भयो जर कारा। प्रगट जाड़ में काँपति दारा।।

छिन बिछुरहिं नहिं जिन्हके स्वामी। चिरजीवी वे सुख विसरामी[1]।।
हम का करहिं जाहिं कित[2] भागी। चहुँ दिसि जरै[3] विरह की आगी।।
रैनि[4] पहार न जाइ[5] बिहाई। काँपि-काँपि[6] तन उठै छोहाई[7]।।
हे[8] रे निठुर नाथ[9] दुख दाता। कबहुँ[10] न पूँछै[11] हम दुख बाता।।
तोरे हिये न दाया आई[12]। हमहिं जाड़[13] दिन रात सताई[14]।।
पूस मास दिन खीन[15] होइ,[16] आवत[17] जात[18] न बार।
बिरहिनि कै दारुन निसा, होइ कै परी पहार[19]।।१०।।

कवित्त

पूस मास भै नास दिन को, रैनि जुग सम होइ गई[20]।।
तन तुसार सम कँवल के, जरि छार बिरहिनि की भई[21]।।
कन्त तेहि[22] बिन सेज सूनी, रैनि[23] दूभर निरमई।
ऐसी[24] ऋतु में लाल बिन, कैसे जियै[25] ललिता दई।।

सोरठा

पूष भयउ दिन छोट, रैन बिहाइ[26] न पुरुष[27] बिन।
बिरहिन लाग न खोंट, निठुर लाल दाया तजी[28]।।
माघ माँस सोहै सुख साजा। तिल-तिल दिन बाढ़ा सुख[29] भाजा।।
जेहि दिन पवन तेज[30] अधिकाई[31]। तेहि दिन देहुँ तुषार झुराई[32]।।
कैसे बीतै मास सोहावा। निठुर नाह नहिं दरस देखावा।।
सिरी पंचमी मूल[33] सोहाई[34]। ऋतु वसन्त कर आगम पाई[35]।।
राग[36] बसन्त सो लाग सोहावा। विरह वियोगिनि[37] दुख अधिकावा।।
यह सो मास बिन कन्त न भावै[38]। प्रेम कठिन[39] अब हिया जरावै।।
दारुन विरह जरावै[40] देहाँ। सुनि बसन्त तन बढ़ै सनेहा[41]।।
अब कैसे यह दिवस बिहावै[42]। बिन पिउ राग बसन्त न भावै[43]।।
धाये[44] काम कमान चढ़ाई[45]। विरहिन हिय बेधा सरकाई[46]।।

पाठान्तर–१*- छिन बिरही जिनके तेहि सामे। उनका यह रित कथ बिसरामे।। २-कब, ३-जारी, ४- रैन, ५-जाय, ६, काँप-काँप, ७- झुराई, ८- है, ९- नाह, १०-कबहूँ, ११-पूँछ, १२*- निठुर नाह नहि दाया आवै, १३-जाइ, १४-सतावै, १५-धन, १६-अब, १७- आवै, १८- जाय, १९*- बिरहिन निस दारुन भये, हाथ के परे निसार। २०*- पूस मास भये निस दिन, रैन जग सम होय गये, २१*- जर छार बिरहिन के भये, २२- तोहि, २३- रैन, २४-ऐस, २५- जिवैं। २६-बेहाय, २७- कंत, २८*- निठुर कंत पूँछे नहीं, २९- दुख, ३०-नीच, ३१- अधिकाये, ३२-तेहि दिन देहि तुसार कराये, ३३- बौर, ३४- सोहाये, ३५-माली बौर देख ये आये, ३६- रंग, ३७-बियोगिन, ३८- बेहावै, ३९- काज, ४०- जरावै, ४१- सून बसंत बिन उपजै नेहाँ, ४२- बेहाऊँ, ४३*- बिना पीव रँग बसंत गवाऊँ। ४४-धावै, ४५, चढ़ाये, ४६*- बिरहिन हिया बोझ सिर लाये।

माघ विछोहे कन्त जेहि, धृग कामिनि पुनि सोइ[1]।
ऐसी[2] ऋतु अकसर रहै[3], कैसे जीवन होइ[4]।।११।।

कवित्त

माहँ थर-थर देहँ काँपे, बस अकेली सोवहीं[5]।
नींद नैनन में न आवै[6], सँवरी साँई सेवहीं[7]।।
कन्त बिन विरहिन जरै[8] तन, प्रान विरथा खोवहीं[9]।
वैस सुन्दर जात पिउ बिन, आँसु से मुख धोवहीं[10]।।

सोरठा

माहँ न आवहिं नाहँ[11], कौन[12] छाँह हम पर[13] करै।
कठिन समय अवगाहँ, कैसे कै धीरज धरै[14]।।
फागुन मास कीन्ह परकासा[15]। घर-घर उपजेउ[16] राग हुलासा[17]।।
बाजै डफ मिरदंग[18] सोहाई[19]। काम आइ[20] निज रूप देखाई[21]।।
लागी पौन बहै हरहरा[22]। तरुवन[23] पात भूमि[24] खसि परा।।
तस[25] विरहिन तन[26] भा पतझारा। रोम-रोम जस विरहिनि[27] जारा।।
संजोगिनि[28] सभ खेलहिं होरी। बीर[29] गुलाल सो भरि[30]-भरि झोरी।।
डारहिं रंग औ राग[31] हँकारहिं। दुख दारुन[32] कहँ मारि[33] निसारहिं।।
ज्यों[34]-ज्यों पवन तेज अधिकाई। विरहिन हिय[35] वैराग[36] समाई।।
धृग जीवन जेहि कन्त न पासा[37]। मरै वियोगिनि दरस पिपासा[38]।।
यह रितु महँ[39] भा सुख परकासू[40]। विरहिन जरै विरह दुख जासू[41]।।

फागुन सभै सोहावने, मन भावन नहिं सेज।
रन तुरंग अरंग कहि, बिरहिन जरै करेज।।१२।।

पाठान्तर–१°- धृक कामिन तन सोय २-ऐसे, ३- रहे, ४- होस, ५°- माघ थिर-थिर देह काँपै, निस अकेले सोय। ६- आवे, ७°- सँवर प्रीतम रोय, ८- तपै, ९■- प्रान कर लेहि खोय, यह पंक्ति इस प्रति में नीचे दी गयी है तथा नीचे की पंक्ति इस स्थान पर है, १०- धोय, ११°- मोहन आगे नाहि, १२- कवन, १३- कहँ, १४- रहै, १५- परगासा, १६- उपज्यो, १७- रंग, १८- मृदंग, १९- सोहाये, २०- आय, २१- देखाये, २२°- लागे पवन बहे हरिहरा, २३- तरुवर, २४- सबै, २५- निस, २६- पुन, २७, बिरहिन। २८-संजोगिन, २९- रंग, ३०- भर-भर, ३१- सोरंग, ३२- दारिद, ३३-मार, ३४-जिवँ-जिवँ, ३५- हिये, ३६- न रंग, ३७- नियासा, ३८°- मरे वियोगिन दरस के आसा, ३९- माँ, ४०- परगासू, ४१°- बिरहिन जेर बिरह दुख बासू।

पच्चीस जुलेखा रूप-वय प्राप्ति खण्ड

एक बरिस दुख बरनि सुनावा। यहि विधि चालिस बरिस बितावा।।
सदा बसन्त औ पावस आवै। मोकहँ नित ऋतु ग्रीषम लावै[1]।।
निसि दिन लागि रहै जस होरी। देइ[2] जराइ विरह तन गोरी[3]।।
वहै रैनि वह दिन नित आवै। माँस-माँस ऋतु और दिखावै।।
मोकहँ[4] सदा गिरीषम अहा[5]। विरह अनल दुख जाइ न कहा[6]।।
चालिस बरिस विरह अधिकाना। नित उठ हिये लगावै[7] बाना।।
वहै भोर वह साँझहिं आवै। भोर दिवस नहिं फिरै फिरावै[8]।।
दिन-दिन विरह तेज अधिकाई। चालिस बरिस सो रोइ गँवाई।।
तुम प्रीतम कुछ कीन्ह न दाया। अस तुम भूलि गयउ निरमाया।।

प्रेम न विरथा होत जग, मैं सो जरिउँ यह आग।
तोरे मन व्यापै नहीं, धिरग विरह वैराग[9]।।१।।

कहा जुलेखा प्रेम कहानी। नैन भरे जस सावन[10] पानी।।
रोइ-रोइ सभ बरनि सुनाई। सुनि यूसुफ मन उठेउ छोहाई।।
कहा कि झूँठ प्रेम तुम कीन्हा। सो अब दइयँ साँच करि दीन्हा[11]।।
सेवक सँग कै मँदिल भेजावा[12]। आप अहेर खेलि फिर आवा[13]।।
आयउ मँदिल पाट[14] पर गयऊ। हिये जुलेखा सँवरत[15] भयऊ।।
कहा बोलाई चहौ का नारी। सो सभ[16] देहुँ जो होहु सुखारी।।
[17]→ लेहु गाँव औ मँदिल सोहावा। चेरी दास दरब जित[18] भावा।।
कहा जुलेखा एक न चाहौं। सोना रूप भार लै वाहौं[19]।।
[21]→ मंदिल गाँव मोर बाग सोहाई। जहाँ मरे पर देहु सोवाई[20]।।

पाठान्तर–१०- नूर अली की प्रति में 'मोहि कहँ उठि विरह जरावे, पाठ है, २- दिये, ३- कोरी, ४-मोहि कहँ, ५- रहा, ६-कहा, ७-लाग जस, ८०- नूर अली की प्रति में'निस दिन विरहिन हिये जरावै' पाठ है। ९०- नूर अली की प्रति में यह दोहा इस प्रकार दिया है'प्रीतम बिरथा जाय जग, मैं सो जरयौं जेहि लाग। तुम्हारे मन उपज्यो नहीं, धिरिग मोर बैराग।। १०–पावस, ११*- यह चौपाई नूर अली की प्रति में नहीं है। १२- पठावा, १३०- नूर अली की प्रति में 'आय अहेर खेल लखरावा, पाठ है। १४-सेज, १५-सो रत, १६–अब, १७→- नूर अली की प्रति में जो माँगहु सो देउँ मँगाई। सोनरूप नग बसन सोहाई।। चौपाई दी गई है। १८*- लेहु चित, १९०- नूर अली की प्रति में-'धन लछमी सभ झार बहावौं। पाठ है। २००- नूर अली की प्रति में 'जो माँगे तेहि देउँ मँगाये' पाठ दिया है। २१→- नूर अली की प्रति में निम्नलिखित अतिरिक्त चौपाई दी गई है- महासिद्ध के सुत कहलावहु। औ तुम्ह सिद्ध सदा सुख पावहु।

कीन्हों बहुत तपस्या जोगू। अलख लुप्त तुम कीन्ह न भोगू।।

माँगहु तुम्ह करतार ते, देइ नयन कै जोति[1]।
जेहिते देखहुँ तोर मुख, चहौं न हीरा मोति।।२।।

यूसुफ अर्थ पिता से कहा। आदि अन्त लह जो कहु अहा[2]।।
सुना जुलेखा नबी को[3] नाऊँ। परी जाइ याकूब के पाऊँ।।
महासिद्ध औ पर उपकारी। सुनहु कान दै विथा हमारी।।
जेहिके अंग विरह दुख भीजै[4]। सो दुखिया दुख देहुँ[5] पसीजै।।
तुम जस जरहु पुत्र के लागी[6]। तेहिते अधिक जरहिं[7] वह आगी।।
तुम समझहु मोरे हिय कै पीरा[8]। पुत्र विरह तुम दहेउ[9] सरीरा।।
वह निरदयी न जानै प्रेमा। जानै स्वच्छ धरम औ नेमा[10]।।
तुम सबकुछ ताहि पढ़ावा[11]। कस तेहितें तुम प्रेम छिपावा[12]।।
चालिस बरिस जरायउँ देहाँ[13]। वहके हियें न उपजेउ नेहाँ।।
जेहि तें जानहिं प्रेम दुख,[14] बेगि पढ़ावहु सोइ।
देहु असीस उठाइ कर, नैन जोति जेहि होइ।।३।।

अब कुछ और न चाहौं नाथा। रहौं सदा चेरिन कै साथा।।
पै हमार अब न्याव करेहू। निरदायी सुत कहँ सिख देहू[15]।।
सभ गरन्थ तेहि दीन्ह पढ़ाई। प्रेम अछर कत रखौ छिपाई[16]।।
पावै नयन दरष जेहि देखौं। निरदायी कर रूप विसेखौं[17]।।
किहउँ जनम भर मूरति पूजा। तेहि छुट और न जानेउँ दूजा।।
अब तेहि पर कीन्हेउँ अनखानी। फोरेउँ सीस रोइ बिलखानी।।
यूसुफ अलख जो[18] अहै सोहावा। जेइँ सेवक से भूप बनावा।।

पाठान्तर–१*- नूर अली की प्रति में-देहि नैन कर जो, पाठ है। २*- नूर अली की प्रति में-'तब याकूब यूसुफ तें कहा। जो कुछ अरथ भेद सब रहा।। पाठ है। ३- कर, ४- भेजे, ५- दीन्हे, ६*- नूर अली में यह अर्द्धाली इस प्रकार है- 'तुम्ह जस जरयो सो विरह के आगी।' ७- जरयो, ८*- नूर अली की प्रति में-'तुम्ह समुझयो मोरे दुख कै पीरा।' पाठ है। ९- डहो, १०*- नूर अली की प्रति में-'जानहिं सो जेहि धरम ओ नेमा। ११*- नूर अली की प्रति में- 'तुम्ह सभ कुछ तेहि पंथ न पावहु।' पाठ है। १२- छिपावहु, १३*- नूर अली की प्रति में- 'चालिस बरस जरायो देहाँ।' पाठ दिया है। १४- बै, १५-१६*- नूर अली की प्रति में यह चौपाई दोहा संख्या तीन के ऊपर दी गई है, जो इस प्रकार है-

तुम्ह अब न्याव हमार करेऊ। निरदाई सुन कहँ सुख देऊँ।।
सबहिं गरन्थ तेहि देहु सिखाई। प्रेम के अच्छर ज देहु पढ़ाई।।

१८*- नूर अली की प्रति में- 'पाऊँ नैन दरस जो देखहुँ। जब लगि जिवौं सरूप विसेखहुँ।।' पाठ है। १८- सो,

मैं सो जनम भर तोहि सिर[1] नाई[2]। तैं[3] दर-दर मोहिं भीख मँगाई।।
तैं[4] मोर अलख किये यह हाला। भई अगति यह सुन्दर बाला[5]।।
वह दाता करतार जेइ,[6] सभ यूसुफ कहँ दीन्ह।
तेहि सो अलख अनादि कहँ, काहे न पूजा कीन्ह[7]।।४।।
जब मोरि आस पुरायति नाहीं। भयउ क्रोध मोरे हिय माहीं[8]।
तब रिसाइ मैं मूरति फोरा। टूक-टूक फैकेउँ चहुँ ओरा[9]।।
यूसुफ अलख ते अब मन लायउँ। औ मूरति से[10] हाथ उठायउँ[10]।।
दीन मंत्र अब मोहिं पढ़ावहु। प्रेम अच्छर सुत सत्त सिखावहु।।
तब याकूब कहा सुनु नारी। जो चाहौं तरुना पुनि प्यारी।।
परलै काल अन्त जब होई। तरुन बयस पावै सभ कोई।।
तुम जो इहाँ चाहौ तरुनाई। अन्तकाल विधि वृद्ध उठाई।।
यह संसार स्वप्न निरमावा। इहाँ को सुख सभ आह छलावा।।
लै आवा अब जीवन थोरा। थोर सुकून औ बड़ा निहोरा।।
तरुनि उठावहिं वृद्ध कहँ, फिर कै जोबन देइ।
यहि जग महँ जो दुख सहै, वह जग महँ सुख लेइ[12]।।५।।
अन्त काल तोहि तरुन उठावहिं। यूसुफ दरस परस रस पावहिं।।
कहा जुलेखा सुनु नरनाथा। यह जग रहौं जो यूसुफ साथा।।
वह जग वृद्ध उठावहिं मोहीं। साखी सत्त देत हौं तोही।।
वह जग चहौं न मैं तरुनाई। यह जग महँ जो कुछ मन भाई।।
खोयउँ बैस रूप तरुनापन। यह जग महँ चाहौं मैं आपन।।
वह जग जो चाहौं सो करई। यह जग मोर बिरह दुख हरई।।
तब याकूब सो हाथ उठावा। बार-बार सिर भुइँ लै आवा।।
प्रेमी प्रेम न निसफल गयऊ। काहँ निरास जुलेखा भयऊ।।
औ चहुँ दिसि तें उन्ह मुख फेरा। अब तुहि एक अलख कहँ हेरा।।
बहुत दुख उन्ह सहा गोसाईं। पावै नैन जो देखै साईं।।
देव दयन्त पुजिकै हारी। अब आई यह सरन तुम्हारी।।
आवै हारि निरास होइ, जो नर तेरे द्वार।
ताकहँ विमुख न कीजिए, ऐ दाता करतार[13]।।६।।

पाठान्तर–१-सीस, २-नवावा, ३- तुहँ, ४-तुहँ, ५*- नूर अली की प्रति में-'दर-दर माँगहु भीख बेहाला।' पाठ दिया है। ६- जिन्ह, ७*- नूर अली की प्रति में- 'ग्यान ध्यान मैं कीन्ह' पाठ है। ८,९,१०*-चौपाइयाँ नूर अली की प्रति में दोहा सं० ४ के ऊपर दी गई है। ११- ते, १२,१३*- नूर अली की प्रति में दोहा सं०५ तथा ६ एवं उसकी चौपाइयाँ नहीं है।

इसराइल तेहि सीस उठावा। जिबरईल तेहि अवसर आवा[1]।।
कहा जुलेखा कहँ लै जाहीं। मंजन औ असनान कराहीं[2]।।
नारि[3] अनेक संग[4] करि[5] दीन्हा। तब प्रवेस[6] हम्माम सों कीन्हा।।
मंजन औ असनान करावा। अंगराग मर्दन मन भावा[7]।।
जब असनान कीन्ह वह नारी। चौदह बरिस[8] की[9] भई कुमारी।।
आदि[10] रूप जस हतेउ[11] सोहावा। तेहितें जोवन रूप सवावा[12]।।
चौदह बरिस[13] कै[14] भई कुमारी। नयन[15] कटाच्छ तेज अधिकारी।।
लाय सखी यक आरसि दीन्हा। देखत रूप सो अचरज कीन्हा।।
धन करता हरता सुखदाई। तुइँ सभहीन्ह सो कहत नियाई।।
प्रेमी प्रेम न निरफल गयऊ। कस सो निरास जुलेखा भयऊ।।

मैं तो तोहिं न जान्यो, जनम अकारथ खोइ।
धन्य गरीब नेवाज तुइ, को अस दूसर होइ।।७।।

ईगुर अंग मंजन असनाना। हरिहर मानख सुघर सु जाना।।
लागे षट-दस होय सिंगारा। चोटी गूँथ सो माँग सँवारा।।
तेल फुलेल लाय के साजा। पाटी पार माँग उपराजा।।
बार-बार गूँथे गज मोती। सेंदुर दीन्ह सूरज[16] कै जोती।।
गुल गेसुत कपोलन लावा। दै अंजन खंजनै बढ़ावा।।
मेंहदी कर पग सोहाग सँवारा। बीर बहूती कै रंग धारा।।
दाँतन स्याम सो मिसी जमाए। चमक सोभाग मो बरन न जाए।।
मुख तँबोल गह्यो अपने पाना। अतर लगाय कीन्ह अरगाना।।
फूल सो लाय पेन्हावे जोड़ा। पुहुप माल तन सोहे कोड़ा।।

आयसु रहा सिंगार के, बारह अभरन लाय।
दीन्ह नार कुमार कहँ, सभ अभरन पहिराय।।८।।

बारह अभरन साज बनावा। सहस फूल औ मंडन भावा।।
बेसर औ कनफूल सोहावा। करन भूखन सब्हन पहिनावा।।
कंठा भूखन सोहे जेहि ताईं। गर भूखन उर पास सोहाईं।।
कंठ माल बाजूबँद साजा। कर भूखन सो पहुँची बिराजा।।

पाठान्तर–१*- नूर अली की प्रति में -'तब याकूब सो हाथ उठाया। तेहि अवसर जबरैल सोहावा।।' पाठ दिया है। २-नूर अली की प्रति में-'कहो तखिन हम्माम कराहीं' पाठ है। ३- नार, ४-संघ, ५-कै, ६-बरबस, ७*- नूर अली की प्रति मे-'ईंगुर अंग चंदन तन भावा।' पाठ है। ८- बरस, ९-क, १०-आइ, ११-हत्यो, १२*- नूर अली की प्रति में- 'तेहि तें अधिक रूप छबि पावा।' पाठ है। १३-बरस, १४-क, १५-नैन, १६-सुरज।

अँगुरी मुँदरी उत छवि देहीं। नेवलबंद गुन ज्ञान हरेहीं।।
साज सिंगार सखी सब्ह मोहैं। रूप अपछरा तासों सोहैं।।
धन वह अलख रूप जिन दीन्हा। भर के बार कुमार सो कीन्हा।।
लाय सेज पैठारहि कोरी। मिले न तीन भुवन महँ जोरी।।
उर केसर फिर अधिक सोहाए। मंगल बूँद सो रंग बनाए।।

बैठी सेज सु नार, भूखन साज सिंगार।
अब नख-सिख का बरनौं, सब सुंदर सुघर निसार।।६।।

छब्बीस

विवाह एवं प्रेम-भक्ति खण्ड

तब जिबरैल[1] कहा तेहि बाता। रूप नैन तेहि दीन्ह विधाता।।
देखहु जाय जुलेखा सोई। प्रेम न सकत अबिरथा होई।।
को अस पुरुष प्रेम करेई। सुफल प्रेम पग दिन दुख हरई।।
दूसर जनम जुलेखा लीन्हा। सो दयाल अब तुमकाँ दीन्हा।।
तुम पुरुष[2] वह नार तुम्हारी। दूजै बार सो दई सँवारी।।
जेहितें रहै सो मुरत हुलासा। रहहु जुलेखा के नित पासा।।
वह के सुख दयाल सुख मानै। दुखी भये परभू दुख मानै।।
वह आज्ञा[3] तज किह्यो न काजू। वह समान यह जगत न राजू।।
ना अस रूप न प्रेम न ज्ञाना। दई दीन्ह सब्ह ताह सुजाना।।

सुन यूसुफ सिर नाइ के, कीन्ह व्याह कै चार।
बाजै लाग जो नौबत, नाच गौड़ झंकार।।१।।

जो कुछ होत व्याह कै चारा। सो सब्ह कीन्ह राग रँग सारा।।
सुफल घरी मा व्याह सोहावा। दुखिया दान दरब बहु पावा।।
आन्यो भोग छतीसो जाती। भये किनआँ के लोग बराती।।
तब याकूब निकाह पढ़ावा। देख जुलेखा बहु सुख पावा।।
बाढ़ा प्रेम धन नार सोहागिन। धन्य अलख जिन्ह कीन्ह सोहागिन।।
सेज[4] सँवार सो रंग सोहाए। दुलहिन व्याह दुलह पहँ आये।।
यूसुफ देख हिए हुलसाना। धन वह अलख दीन्ह जिन्ह दाना।।
जस मैं रूप आदि निरमावा। तेहि तें जोबन रूप सोहावा।।
रहस नार कहँ कंठ लगावा। जनम-जनम दुख विरह नसावा।।

प्रेम जुलेखा कहँ मिट्यो[5], यूसुफ कहँ दुख दाह।
भई जुलेखा भगत अब, यूसुफ कहँ दुख आह।।२।।

दिन दुइ चार कीन्ह रस भोगू। लागी करै जुलेखा जोगू।।
मैं विरथा यह जनम गँवावा। प्रेम विपत मानुख सो लावा।।
काहे न प्रेम अलख ते लाऊँ। जेहिंते मोख मुगत पुन पाऊँ।।

पाठान्तर–१- जबरैइल, २-पूरुख, ३-अज्ञा, ४-सेज्ज, ५-मिट्यो

का मानुख मानुख का चाहै। चाहै अलख मुगत कर लाहै।।
निस-दिन लाग तपस्या करै। जब जोगित ते प्रीति छबि धरै।।
अलख काज छुट अवर न काजू। यूसुफ देख बाढ़ उर लाजू।।
निस बासर जप तप कै माहीं। एको छिन प्रभु बिसरै नाहीं।।
यूसुफ प्रेम हिये तें भागा। अलख प्रेम[1] आठौ अँग जागा।।
कुछ यूसुफ कै चिंता नाहीं। कबहूँ न सोच करै मन माहीं।।

निस दिन वह तप जप करै, सँवरै अलख सुजान।
जेहि की दाया तें मिला, अब रूप बैस गुन ग्यान।।३।।

यूसुफ नबी सो रहे अधीरा। बाढ़ै हिये प्रेम कै पीरा।।
जब लहिं दरस देहि[2] नहिं नारी। तब लहि यूसुफ रहें दुखारी।।
वह निस दिन राखै तेहि प्रीती। भई जुलेखा आन सो रीती।।
कहै कि सँवरो वह करतारा। अंत काल जो लावै पारा[3]।।
मैं मानुख का प्रीति[4] हमारी। जोवन रूप रहै दिन चारी।।
बहुर न यहि जोवन नहिं रूपा। सँवरहु पुरुष अकाल अनूपा।।
यूसुफ नबी करें मनुहारी। होय न सुचित जुलेखा नारी।।
कहा जुलेखा मोहिं न सतावहु। जाय सो ध्यान अलख महँ लावहु।।
मैं जीवन अरु रूप उतंगा। देखि लीन्ह कुछ रहे न संगा।।

जाय फूल कुँभिलाय जब, रहै न[5] रंग न बास।
तेहिते सँवरहु एक वह, जेहिके दुओ जग आस।।४।।

यूसुफ कहा सुनो अब प्यारी। जतन नाह नित रहौं दुखारी।।
बिन देखे मोहिं कल न परई। दारुन विरह कठिन दुख धरई।।
दया करो औ दरसन देहू। मोहिं[6] दुखित जिन रार करेहू।।
प्रान तें अधिक तुम्हें मैं जानहु। रूप तुम्हार हिये महँ आनहु।।
निस दिन रहे सो ध्यान तुम्हारा। मन अधीन जस व्याकुल पारा।।
जस तुम्ह विरह अगिन ते जारा। तस अब करहु भोग सुख सारा।।
मोहिं दुखित जिन राख्यो प्यारी। छमा मोख दुख देहु निनारी।।
दई बढ़ावा हम तुम प्रीती। राखहु दया प्रेम की रीती।।
दई देह यह रूप सोहावा। मोहि कारन तुम्ह फिर कै पावा।।

पाठान्तर–१- पेम, २-देइ, ३-बारा, ४-प्रीत, ५-'न' नहीं है, ६- मोहिं।

मोहिं ते होह न निठुर अब, हिये लखहु अब और।
कहै जुलेखा नाम, सुनहु दास तुम मोर।।५।।

एक दिन बहुत कहा नहिं माना। कहा जान मोहिं दास समाना।।
जस आगे तुम्ह राखब प्रीती। राखहु दया हियें तें रीती।।
अब सो अलख कर दीन्ह सँजोगू। देहु मिटाय बिछोह बियोगू।।
जस दुख सबहिं करै अब प्यारी। जाय भुलाय बिरह दुख भारी।।
चालिस[1] बरस कीन्ह तप जोगू। रात दिवस तुम छोह बियोगू।।
करहु सेज सुख भोग बिलासा। निस दिन होय सो दुख कै पासा।।
कोटि बिनति कै यूसुफ हारा। चाहा हाथ गले मा डारा।।
कहा जुलेखा मोहि न भावै। अलख ध्यान छुट आन न आवै[2]।।
मोहिको एक अलख कै आसा। बिरथा यह सुख भोग बिलासा।।
दिना पाँच का रूप सिंगारा। होइह अंत देह तेहि छारा।।

जोबन रूप सिंगार सब, संघ जाय तेहि खोय।
काहे न सँवर सो अलख कहँ, जानो मुकुत कब होय।।६।।

अब मोहिका सुख भोग न भावै। मृत्यु भये कुछ काज न आवै।।
यहि जग मा छुट जीवन थोरा। अब जिन करहु खोज तुम मोरा।।
निसि दिन लेहु अलख कर नाऊँ। जेहितें मिलै सरग महँ[3] ठाऊँ।।
मैं अब निजु जान्यो तेहि साईं। जिन सब्ह दीन मोहिं बरियाई।।
सो साईं तज अवर न भावै। बिरथा सुक्ख भोग चित लावै।।
यूसुफ नबी बहुत समुझावा। एक जुलेखा कान न लावा।।
तब बरबस उठि हाथ चलावा। भागि जुलेखा यूसुफ धावा।।
दामन फाट रहा तेहि हाथा। गई भाग वह दार के साथा[4]।।
धन चरित्र वह अलख देखावा। यह कर करा सो वह कर पावा।।

एक दिन हत्यो जुलेखा, फारा यूसुफ पाट।
अब यूसुफ के हाथ तें धन कर दामन फाट।।७।।

यह विधि रहै जुलेखा भागी। यूसुफ लगन रहै नित लागी।।
निस दिन रहै नार से ध्याना। नार हिये उपज्यो अब ज्ञाना।।
राज काज कुछ ताहि न भावै। नित चित हित बनिता तें लावै।।
बरबस करै नारि से भोगू। आवै ताह जाय ओ जोगू।।

पाठान्तर–१- चालीस, २-भावै, ३-माँ, ४-हाथाँ,

यूसुफ कहै भयौ तोहि काहा। का भा तोर प्रीति[1] औ चाहा।।
कहा सुनो सामी सब बाता। तब सो मोर मन तोहँ सो राता।।
मूरत तोर हिये महँ आन्यो। छुट तोर प्रीति[2] आन नहिं जान्यो।।
तब सो अलख कहँ जान्यों[3] नाहीं। मूरत तोर रहै हिय माहीं।।
अब सो अलख हिये तर बासा। तेहिकर ध्यान हिये परकासा।।
एक हिये दुइ[4] प्रेम अब, कैसे कहो समाय।
जग सामी कै प्रीति अब, रहै हिये महँ छाय।।८।।

बरबस करै भोग सुख सारा। सुत नित दिये तेहिं करतारा।।
पाँच पूत दुइ[5] दुहिता भयो। जब तप करै प्रान पर छयो।।
दुहिता सुत सामी नहिं भावै। नित उठ चित अलख से लावै।।
धाई कोट रहे सुख बारा। औ प्रतिपाल करै करतारा।।
करै जुलेखा निसि दिन जोगू। भावै ना तेहि सुख औ भोगू।।
धन करता कहँ खेल सोहावा। करै सोय जो वह मन भावा।।
कबहुँ पुरुष कहँ नारि कैं चेता। कबहुँ नार कहँ पुरुष कै मीता।।
वहिक पास यह मन नित आवै। जेहिक प्रीति दिन रैन सुहावै।।
बारह बंधु के बंस पुन, भये बहुत अधिकार।
करै राज सुख भोग सब, बढ़ै बहुत परिवार।।९।।

भये याकूब सुखी मन माहाँ। निसि दिन करै पुत्र पर छाहाँ।।
सब सुख देख कुटिल परिवारा। तब लहि आय पुन काल हमारा।।
बिरथा तेज नबी जब भयो। सेवा का यूसुफ चलि गयो।।
सभै पुत्र का पास बोलावा। कीन्ह बहुत उपदेस सोहावा।।
औ यूसुफ कहै सब परिवारा। सो तब आप सिवलोक सिधारा।।
जब याकूब देह तजि दीन्हा। तब यूसुफ बहु रोदन कीन्हा।।
औ रोवैं सगरो परिवारा। बारह पुत्र पौत्र औ सारा।।
रोवैं सभै सुतन की नारी। औ रोवैं दुहिता पुनि सारी।।
दुहित पुत्र कै बंस सोहाये। रोय-रोय सिर छार चढ़ाये।।
भा अँदोर सभ नगर महँ, रोवें नर औ नार।
ऐसे पुरुष सो चलि बसे, को दूसर संसार।।१०।।

पाठान्तर–१- प्रीत, २-प्रीत, ३-जान्हों, ४-हुई, ५-दुई

रोई बहुत जुलेखा नारी। सँवर मुरत तज भई दुखारी।।
यूसुफ पिता कै अन्हवावा। औ पुत्रन सभ साज बनावा।।
चले साज कै पिता जनाजा। दुख बाजन घर-घर महँ बाजा।।
मिसिर नगर महँ परै अँदोरा। नारिन करै रोर चहुँ ओरा।।
औ यूसुफ का भा दुखभारी। रोवें बहुत सो छाँड़ डफारी।।
छाड़ सो लोग-कुटुँब परिवारा। होय अकेल अब पिता सिधारा।।
बहुत बंस कुछ काज न आए। अकसर पिता सो सरग सिधाए।।
सुत बिन बंधु पुत्र औ नारी। सब्ह तजि गयो गयो पै यारी।।
कोऊ न सँघ जाय तोहि गेला। गयो अकेल छाड़ सब्ह खेला।।
छिन बिछुरे दुख होई। छिन-छिन राख सकै नहिं कोई।।

वचन अमियँ जेहि मुख कहत, रहत लोभ सभ हाथ[1]।
एक घरी दूभर भयो[2], राखि[3] न सकै कोउ[4] साथ[5]।।११।।

गये समूल छाड़ कै नाऊँ। रहा सूख सब्ह ठावें ठाऊँ।।
यूसुफ नबी साज सब साजा। स्याम देस लै गये जनाजा।।
ऐस नाम याकूब कै भाई। एक संग विधि जनम गँवाई।।
तेहि दिन ऐस भरे तेहि देसा। औ याकूब पहुँच परबेसा।।
एकै संग वै दुनौं भाई। रहे सोय दुओ खुमार समाई।।
एकै संग जनम वै लीन्हा। एकै संग प्रान तजि दीना।।
एकै संग रहै यक पासा। एकै संग गये कैलासा।।

जगत धन्ध सब छाड़ कै, गय अकेल निजधाम।
लोग कुटुँम्ब परिवार सब्ह, कोऊ न आयो काम।।१२।।

दोउ पिता कै गत-पत कीन्हा। मुरत अमोल छार रख दीन्हा।।
खावा भोग ओ भूल अँदेसा। धंधा लाग करै सब देसा।।
फूल चढ़ाय फिरे सभ लोगू। लागे खाय अन्न औ भोगू।।
महासिद्ध जग रहै न कोई। दूसर कौन अमर जग होई।।
यूसुफ नबी बहुत दुख माना। बेद भेद को करे बखाना।।
अब न पिता देखब जग माँही। कवन करै हमहि अब छाँही।।
केहितें दुख-सुख बरन सुनाऊँ। केहितें अपरम मरम सो पाऊँ।।

पाठान्तर–१०- यह अर्द्धाली नूर अली की प्रति में अपूर्ण है, अंत में 'सभ साथ' पाठ है। २०- यह चरण नूर अली में नहीं है। ३- राख, ४-कोऊ, ५-हाथ

कवन करै हमकौ उपदेसा। कवन सुनाइह अलख सँदेसा।।
काटिय गाढ़ सो कवन हमारी। कूट बचन बरनै को भारी।।
गाढ़ परे केहि सँवरब, कूट साँच उपदेस।
अब न पिता को देखियब, गये सो कौने देस।।१३।।

तब जबरैल सरग तें आए। यूसुफ कहँ सुठ वचन सुनाए।।
करहु पिता कर अब संतोखा। जेहिते[1] होय दुओ जग मोखा।।
पैठी तुम सो पिता के ठाऊँ। सँवरहु सदा अलख कर नाऊँ।।
औ सुख देहु करहु सुख सारा। पूजै तुम्हें सभै संसारा।।
तुम का नबी अलख अब कीन्हा। बुद्धि-सुद्धि सभ तुमकौ दीन्हा।।
तब यूसुफ सभ नगर बोलावा। अलख संदेश सो वरन सुनावा।।
सभ जग आय सो सीस नवावा। औ सुख भयो मंत्र सभ पावा।।
तुम सो अहो याकूब के ठाऊँ। हम अधार[2] सो राउर नाऊँ।।
जस वे बेद भेद बतलावहिं। हिन्दु तुरुक कहँ राउर नावहिं[3]।।
सभ जग सीस नवावा, दीन्ह नबी कहँ हाथ।
दीन्हा सभ सुख पूजा, अवर भये सब साथ।।१४।।

भयो बिरिध बालक घट्यो राहा। घट्यो चाह औ[4] घट्यो परहारा।।
रूप रंग बल बुध सुख खाँगा। यूसुफ मीच देवतन्ह माँगा।।
उपज्यो क्रोध औ काम हेराना। कामिन देख सो नैन लजाना।।
रह्यो न रूप सो सभ जग चाहा। रह्यो न बल जेहि करब बेसाहा।।
रह्यो न केस भँवर अस कारी। रह्यो[5] न दसन दाड़िवँ जेहि हारी।।
रह्यो न सरवन सुरत अमोला। रह्यो न सुन्दर स्वभाव कपोला।।
रह्यो न दृग[6] मृग खंजन भंजन। रह्यो न बानी कोकिल गंजन।।
नार पुरुष नहिं आदर करहीं। नारि विरिध कर नाउँ सो धरहीं।।
जेहि के ओर चाहे[7] चख हेरा। देख विरिध सो अब मुख फेरा।।
रहे न हाथ पाँव के सोभा। जेहि का देख सबे जग लोभा।।
रह्यो न रंग रूप वह, जेहि चाहे संसार।
कँवल बदन कुँमिलात नित, मनसा सब[8] गा हार।।१५।।

जो मन चाहत रंग सोहागा। सो सब होइ लाग बछनागा[9]।।
जो मन चाहत उड़न खटोला। सो ताजन लागे नहि डोला[10]।।

पाठान्तर–१- दें, २-आधार, ३-नाऊँ, ४-और, ५-रह्यो, ६-दग, ७-आहे, ८-तब, ९,१०- यह अर्द्धाली नूर अली की प्रति में अपूर्ण है।

हंस अमोल जो सरवन सोहा। जा कहँ देख सती जग मोहा।।
बिन पानी अब हंस पियासा। लखि सरवर मन भयो उदासा।।
कहाँ गये वे दिवस सोहाये। रूप रंग दिन-दिन अधिकाये।।
अब दिन-दिन वह रोब घटाहीं। बल बुध जाह सो जात हेराई।।
रहे न सुन्दर मुरत न मानी। ठौर-ठौर रह गये निसानी।।
गये नैन[1] भूला सुख चाहू। भयो भोर उठ गयो बटाहू।।
मोती लर जस चमक बतीसी। सो सँग चाड़ भयो परदेसी।।

रूप भाव नहिं रह गये, डार कंठ ले हाथ।
भूल बात सब चल बसे, गयो झाड़ कै हाथ।।१६।।

हँस-हँस झूल भुम्म खलि परैं। देख सकामिन रोदन करैं।।
फूले फूल भये पतझारा। यहै हाल अब होय हमारा।।
तब लहि मोर बात नहिं मानै। जब पतझार होय तब जानै।।
औ दयाल तुइ सब्ह कुछ दीन्हा। सब दाता सोई मोहिं कीन्हा।।
दीन्ह जनम मोर नबी के बारा। नबी के सुत[2] नहिं मोर अधारा।।
वहै रूप सब्ह जग उपराहीं। दीन्हा वेद भेद जग माहीं[3]।।
भाइन मोहिं कूप महँ डारा। नबी कृपा कर मोहिं निसारा।।
बहू देस सब गाहक मोरा। बंद डार तुम कीन्ह बहोरा।।
भये राज बाढ़ा सभ भोगू। मात-पिता कीन्हें संयोगू।।
भाई लोग सब भये अधीना। पिता मिलाय सभै दुख दीन्हा।।
दीन्हा नार जगत उपराहीं[4]। दीन्हा सुख संतति जग माहीं।।

सब कुछ दीन्ह दयाल तोहिं, कछु हींछा अब नाँह।
करौ कूच अब जगत से, करो सो महि पर छाँह।।१७।।

यहि जग मा जस कीन्हे दाया। वह जग करो अभय निधि माया।।
मुनि रिसि सिद्ध रहे जेहि ठाऊँ। तहँ मोर अलख कहावहु नाऊँ।।
अब मोहि अवर न इंछा मोहे। यही जगत मन व्याकुल होये।।
अब तहँ चलूँ जहाँ कै आसा। रहौ सदा जेहि मंदिल उदासा।।
अब यह जग मोहिं तनिक न भावै। चलौं अंत जहँ सब कोउ जावै।।
अब दिन-दिन अवगुन अधिकाई। गयो रूप जेहि जगत लुभाई।।

पाठान्तर–१- रैन, २-सुन, ३०- नूर अली की प्रति में यह अर्द्धाली अपूर्ण है। ४-उमराहीं,

अब जीवन से भला सो मरना। रस न रहा दिन बरबस भरना[1]।।
तेहि ते बेग उठावहु मोहीं। देखहु पिता जो कियो बिछोही।।
भोर आय नियराया, लेउँ न रैन बसेर।
जेहि बस्ती रहना नहीं, चलना तहाँ सबेर[2]।।१८।।
पुन दस बरस जो यूसुफ जिया। सत्त स्वभाव जगत महँ किया।।
धरम नीति ते[3] कीन्हँ सो राजू[4]। दीन्ह सुधार दुखी कर काजू।।
दरब दान दुखिया को[5] दीन्हा[6]। नीति छाँह परजा पर कीन्हा।।
धरम नीति औ न्याव करेहीं। बेद भेद सब्ह कौ सुख देहीं।।
पुत्र समान हिये सुख माहीं। मात-पिता के सर पर छाहीं।।
बेद भेद सब सुख निरभावा। बंधु बंस कहँ बेद पढ़ावा[7]।।
यूसुफ नबी को अमर न बारा। जेहि घर माँ मूसै अवतारा।।
ताको अलख नबी अस पावा। आद गरंथ तुरन्त भेजावा।।
दीन्हां अलख बंस अधिकारा। बारह कुटी बैठ संसारा।।
बारह पुत्र के बंस वै, इसराइल कहाहिं।
मिसिर नगर सभ भर गयउ, तासु बंस अधिकाहिं[8]।।१९।।

पाठान्तर–१०- नूर अली की प्रति में- 'रस बावन' पाठ है साथ ही यह अर्द्धाली अपूर्ण है। २०- नूर अली की प्रति में दोहा संख्या १७ की यह अर्द्धाली अपूर्ण है। ३- सें, ४-काजू, ५- कौ, ६-कीन्हा, ७-पठाला, ८०- नूर अली की प्रति में दोहा संख्या १८ की अर्द्धाली अपूर्ण है-'मिसिर .....नगर लौं बसा अधिकाहिं।

सत्ताईस

यूसुफ जुलेखा क्षार मिलन खण्ड

पातसाह सबके सुत आवा। सो फिरोज जग माहँ कहावा।।
इब्न अमी सुत कै सुत मूसा। डार दीन्ह जग जान्ह मँजूसा।।
दसवें बरस आय जमराजू। यूसुफ नबी प्रान कै काजू।।
कहा अलख जो आसा कीन्हा। चहौं प्रान तोर मैं लीन्हा।।
यूसुफ कहा जो आज्ञा होई। तो सभ[2] लेउँ सीस पर सोई।।
देख लेउ मैं दरस जुलेखा। तब हम करहु जो अवगुन लेखा।।
तब जमराज कहा यह बाता। आज्ञा नाह लखे मुख राता।।
अब तुम तजो प्रेम वहि केरा। करहु प्रेम जो करहि निबेरा।।
बहुत भाँति बिनती कै हारा। पाव न जुलेखा रूप निहारा।।

यूसुफ चाहा बहुत मन, लखै जुलेखा रूप।
पै जमराज न माना, आज्ञा अलख अनूप।।१।।

जब लहि आय जुलेखा पासा। तब लहि फूल गयो तजि बासा।।
आय नार जो पीव के तीरा। देखै परा सो सून सरीरा।।
पुन निहार यूसुफ कहँ देखा। रह्यो न रूप रंग न रेखा।।
मूँदे नयन खुलै अब नाहीं। बैन हरे मुख बोलत नाहीं।।
हाथ पाँव मुख सरवन नासा। सबतें हरत गए जस बासा।।
सून सरीर परा बिन जीऊ। ठहक मार देखहि मुख पीऊ।।
धँसक आइ[3] हिय माँह समाना। गयो छाँड़ देहँ से प्राना।।
मुरझ रहै नारि बेसँभारा। रहेउ न चेत हरेउ चित सारा[4]।।
नार देख पिउ कर तन सूना। बिना प्रान सभ पिंड बिहूना।।

कवन हंस सरवर हत्यो, केहि दिसि गयो हेराय।
जेहि पुन सून सरीर मैं, काहु न कहा सोहाय।।२।।

परी जुलेखा होय बिन जीऊ। बहुर न देखा आपन पीऊ।।
तब नहलाय साज सभ कीन्हा। लै गये सौंप छार कहँ दीन्हा।।
छार मिलाय सो छार उड़ावा। थाती सौंप लोक फिर आवा।।

पाठान्तर–१→– नूर अली की प्रति में– 'सो पुन कथा अहै विस्तारा। कहौं कथा यूसुफ कर सारा।।' पाठ है। २-सम, ३-अहै, ४•– नूर अली की प्रति में 'मुरझ रहै नार बस फिरै।.....।।' पाठ है, जो अपूर्ण है।

जो जाकर सो[1] सौंपा सोई। साथी संग रहा नहिं कोई।।
तीन दिवस दुख रह्यो अपारा। रही जुलेखा अति[2] बेकरारा।।
पिव गवनव कछु जानत नाहीं। रहै सो नार सूख पर माहीं।।
तिसरे दिवस भोर होय गयो। तब पुन चेत जुलेखा भयो।।
देख खोल नयन चहुँ ओरा। कहा कि आज भयो कस भोरा।।
पिउ जागत सब मोहिं जगावै। आज सखी कहुँ दिस न आवै।।
अब मैं आज भोर कै जागी। गयो पीउ कस अवसर भागी।।
पिउ कर मुख नहिं देखहु आजू। मोहिं तज अजहुँ करत न काजू।।

जब लगि रहौं सेज पर, कंत न छाँड़हिं मोंह।
अब राज त्याग कहाँ गयो, लाल सो मोहिं बिछोह।।३।।

कहा सखी उन सरग सिधारे। हमकाँ विरह आग महँ जारे।।
सुन यह बात सो खाइ पछारा। फिर-फिर सीस भुम्म पर मारा।।
जहाँ सो पीउ होय निहिचिंता। तहँ लै चलो जहाँ मोर मिंता।।
चलै सखी सँग व्याकुल नारी। जहाँ कंथ सोवै सो नारी।।
तेहि के ठहर जाय सिर नावा। परथम केस तोर छितरावा।।
छितराइस मोतिन कै हारा। जूड़ा टूक-टूक कर डारा।।
बार खसोट तुरंतहिं डारा। अभरन तोर बहु सह सिंगारा।।
चूरी फोर सीसन तन फोरा। झार मिलाय दीन्ह वह चूरा।।
परै ढेर पर झार उड़ावहिं। विपदा-विपत मुख बैन सुनावहिं।।

नैन काढ़ि दोऊ लिहिस, दीन्हेसि ढेर पर डार।
जेहि नैनन पिउ तोहिं लखौं, देखौं काह निहार।।४।।

कहा कंत तुम कहँवा गयऊ। नैन बैन मुख सून सब भयऊ।।
गात गुलाब देख मुरझाई। सो तन झार लीन्ह अब खाई।।
जेहि मुख बोलत अमिरित बानी। अमृत बोल वे कहाँ हेरानी।।
नित मो प्रीतम करत जो दाया। कस अब लाल भयो निर्माया।।
मैं पापी तुम संग न लागी। अहौ करम की सदा अभागी।।
मोहिं छाड़ कत कंत सिधारे। नैन ओट न करत बयारे।।
जब यमराज प्रान तोर लीन्हा। निठुर लाल मोहिं खबर न दीन्हा।।
मैं जम ते अस करत निहोरा। लिह्यो लाल सँग प्रान सो मोरा।।

पाठान्तर-१- तेहि, २-अतिहि।

एकहुँ छिन न मोहिं बिसारेहु। चलत बार मोहिं कस न पुकारेहु।।
नैन ओट कहुँ होत रहु, मोहिते आग्या लेहु।
ऐसे कंत बितेस कहँ, मोर न खोज करेहु।।५।।
चालिस बरस जो जोग कमावा। तब प्रियतम हम तुम को पावा।।
दरब अरथ सब देहु लुटाई। जोबन रूप अनूप गँवाई।।
कीन्ह दया तब अलख गोसाईं। दीन्हा रूप सोय सुख माहीं।।
तब महिमा मैं तोर न जानी। निस दिन रह्यो हिये अभिमानी।।
सो अब कंत कहाँ तोहि पाओं। चरन लाय सिर तोहि मनाओं।।
तुम्ह नित करो मोर मनुहारी। मैं न करौ कछु कान तुम्हारी।।
का अब करहुँ मनाऊँ कैसे। बिनती करहुँ कीन्ह तुम्ह जैसे।।
तुम्ह साईं मैं चेरी तोरी[1]। का अब करहुँ अहौं मति थोरी।।
नित सिर पर राख्यो तोर चरना। का अब करहुँ दई कर करना।।
सात बरस बँद राख्यो, लायो दोख न मोहिं।
औगुन मोर छिपायो, कह्यो न तुम कछु मोहिं।।६।।
सात बरस राख्यो बँद माहीं। मन महँ रोस कियो कछु नाहीं।।
चलत बार तोर रूप न देख्यों। बचन न सुन्यो न बयन विसेख्यों।।
सो लालन तजि रहे अभागी। गई लाल मैं सोय न जागी।।
जब तोहिका बाहर बहिराए। बैरिन नींद कहाँ ते आए।।
देख्यों जाग मँदिर तोर सूना। नगर कोट घर भयो बिहूना।।
आयो फूल छाँड़ फुलवारी। काँटा रह्यो बाग महँ झारी।।
गवो कंत सो बेग सुभागा। पाछे रह्यो कलंक सो लागा।।
दिह्यो उत्तर मोहिं कंत सोहाई। फाटै भुम्म अब जाउँ समाई।।
यह कलंक अब दिह्यो मिटाई। उठ कै लाल लिह्यो सँग लाई।।
ऐसो रतन मिला जग, छार समान्यो आय।
धृक जीवन जो लाल बिन, जग माँ जियत रहाय।।७।।
यह घर बार सो देस तुम्हारा। भयो सून सब जग अँधियारा।।
कवन बताइहि भेद करम था। भूलै कवन देखाइहि पंथा।।
को तुम बिन यह भार उठाई। नेम धरम दिन-दिन अधिकाई।।

पाठान्तर-१- मोरी ।

अब तुम अस जग उपजा नाहीं। कौन सो करै दुखी पर छाहीं।।
तुम समान जग फेरि न आई। को अस रूप ज्ञान बुध पाई।।
भरम नींद रह्यो पिउ सोई। नार सो उत चेत न कोई।।
तुम निहचिंत भयो पिउ जाई। सोच हमार तज्यो सुखदाई।।
सबै लोग हैं यह संसारा। तुम्ह बिनु कोऊ न अहै हमारा।।
केहिक देख मन हुलसैं पीऊ। तृखा बुझाय पियासै जीऊ।।

वह बसंत वह पावस, वहै फूल फल सोय।
सब अपने रितु देखब, तुम्हें न देखै कोय।।८।।

वहै मंदिर औ सरवर तीरा। करहिं धमार सदा वह तीरा।।
वहै फूल फूलै[1] चहुँ ओरा। वहै चातक रँग खंजन मोरा।।
वहै पवन जो फिर-फिर आवै। वहै दिवस वह रैन दिखावै।।
एक न तुम जेहि बिन संसारा। होयगा तीन भुवन अँधियारा।।
वह तरुवर वह पात सुहावन। भाव न एक बिना मनभावन।।
एक दिन हत्यो सो भाग सोहावा। जेहि दिन तोहि नायक लै आवा।।
भये धूम सभ मिसिर के देसा। उठ धावा सभ रंग नरेसा।।
बैठ्यो नील करै असनाना। नर-नरेस सब्ह देख लोभाना।।

एक दिन आय जो[2] देख्यो, सो मुख छार छिपान।
का भा रूप अनूप वह, जेहि संसार लुभान।।९।।

सपने देख बिमोह्यों तोहीं। उपजा विरह तेज लखि मोहीं।।
आयो मिसिर कंत तोहि लागी। कह्यों कि का गुन कीन्ह अभागी।।
प्रेम हमार साँच विधि कीन्हा। पाहन रूप सो हमकौं दीन्हा।।
जब प्रीतम हमसे मुख मोरा। जीवन भयो दरस लखि तोरा।।
चालिस बरस जोग मैं कीन्हा। सुनकै नाँव सबै कुछ दीन्हा।।
जब तोर नाउँ सुनावै कोई। पाछे[3] लाख देऊँ जो होई।।
बीस बरस रह्यो दरस अधारा[4]। बीस बरस सुन नाम सँभारा।।
अब तोर दरस हरा भुव माहीं। नाउँ तुम्हार सुनब अब नाहीं।।
देखहुँ दरस सुनहुँ नहिं नाऊँ। केहि अधार रहौं यह ठाँऊ।।

न पिउ बोल सुनावहु, न अब दरसन देहु।
करहु दया पति राखहु, यह जीवन आपन लेहु।।१०।।

पाठान्तर–१- फूले, २-सो, ३-पाथे, ४-आधारा

अब पत रहै जो जाय पराना। धृक जिव तुम बिन पुन छिन माना।।
जिवन भला जबलहि पिउ होई। बिना पीव धृक जीवन सोई।।
पिव बिन सून सभै संसारा। सुख संपत सभ पिव बिन जारा।।
बिन पिव कोई सँघाती नाहीं। केहि विधि रहे प्रान घट माहीं।।
जरै जाय सुख संपत साजा। बिना पीव आवै नहिं काजा।।
पिव लै सँग जो होय भिखारी। बिन पिउ सुख संपत बलिहारी।।
पिव[1] के संग चैन भाकसी माहीं। बिना पीव सुख बिलसै नाहीं।।
तुम बिन कंत जगत अँधियारा। भयो उजार सभै संसारा।।
निठुर प्रान जो अब लहि रह्यो। पाहन हिया निठुर दुख सह्यो।।

खाय पछार सो[2] छार पर, करै आह एकबार।
पंछी प्रान सो उड़ि गयो, रहे छार महँ छार।।११।।

यूसुफ निकट राख तेहि दीन्हा। बिरहिन प्रेम समापत कीन्हा।।
धन वह सती प्रेम चितलावा। आदि[3] अंत लहि प्रेम लगावा।।
जब लग[4] जियै प्रेम रस चाखै। पिव सँग गये प्रान पुन राखै।।
जो कुछ अहै सो[5] जीवन माहीं। मरै प्रान[6] निठुर कुछ नाहीं।।
रिखि मुनि सिद्ध तपा औ[7] जोगी। प्रेम पुरुष ओ विरह वियोगी।।
पंडित कबी और सज्ञाना। मीर अमीर राव सुलताना।।
रूपवंत गुनवंत सोहाई। तेजवंत बलवंत बनाई।।
ऐसे लोग रहै न पाये। केहि कारन यह जग माँ आये।।

सब आए यहि जगत महँ, कीन्ह सो गुन विस्तार।
कोउ रहे पुनि आवा, खाय लीन्ह यह छार।।१२।।

पाठान्तर–१- अपूर्ण है, २-लो, ३-आद, ४-लहि, ५-जो, ६-प्रांत, ७-ओ।

उपसंहार

उन लोगन कहँ[1] सँवर निसारा। उठा रोय मन महँ एकबारा।।
जब ते जनम लीन्ह जगमाहीं। छुट दुख औरो[2] देख्यो नाहीं।।
जब लहि जिऊँ पिऊँ दुख नीरा। माथहिं दीन्ह सो दुख कै पीरा।।
अवर दुख मैं सब कुछ सहा। भयो एक दुख बाउर महा।।
पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा। रूप अनूप बुध आगर कीन्हा।।
बाइस बरस रहा जग माहीं। छुट विद्या उन जान्यों नाहीं।।
नाम लतीफ अनूप सोहावा। सब गुन ज्ञान दई अधिकावा।।
बात भुलात नहिं पुत्र सोहावा। सायर सुघर सो ग्रन्थ बनावा।।

बाइस बरस के बयस महँ, छाड़ दीन्ह उन देह।
मुरत अनूप गुलाब से, जाय मिले पुन खेह।।१।।

तब मैं भयउँ सो बाउर भेसा। करे सदा अपकाल अँदेसा।।
सब्ह औषध कीन्हा उपचारा। बिनति किह्यो सो बारम-बारा।।
जबतें लतीफ कर मरम विसेख्यों। तब संपत अबिरथा देख्यों।।
तब मैं कहा पुत्र से रोई। किरत सोहाय नहीं अब कोई।।
मोहिंका जान पड़ा जगमाहीं। कोइ ठाकुर ओ सूरत नाहीं।।
तब उन कहा कहैं का ताता। हमकाँ दोख होय यह बाता।।
अहै सो सत्त एक करतारा। वह कर खेल सो अहै अपारा।।
तुमको दोख होब अब ताता। दइ सुखिया कहँ दोख विधाता।।
जो कुछ अंक आदि उन भारा[3]। सो पुन अहै को मेटन हारा।।

जेहि दुख ते अकुलाव तुम, करहु पिता संतोष।
बड़े लोग सब दुख सहै, होय मुगत गत दोख।।२।।

जेहि लहि नबी भये जग माहीं। छुट दुख और सो देखा नाहीं।।
काहुँ कहै कविलास निसारे। रोवत आयु[4] बीत[5] गै[6] सारे।।
काहुँ बाँध अगिन महँ डारा। काहु अंध कीन्ह अँधियारा।।
काहु कहँ आरसी बीरा। काहु कहँ सर तज्यो सरीरा।।
काहु मीन के मुह महँ डारा। काहु कूप डार निसारा।।
जेहिके लाग रच्यो संसारा। तेहिका दुख वार न पारा।।

पाठान्तर—१-वहै, २-और सो, ३*- नूर अली की प्रति में यह अर्द्धाली अपूर्ण है। ४-आव, ५-बीन, ६-कै।

औ स्याम दुख सब्द जग जानी। जब लग वै सो दुख निभानी।।
जहिं लहिं भये सिद्ध अवतारा। सभ का दुख दीन्हों करतारा।।
कोउ न यह जग दुख ते बाँचा। सहै आँच सो कुंदन साँचा।।
रामचन्द्र जो दुख सह्यो, सो जान्यो सब कोइ।
मानुष देह धर सभ, दुख ते व्याकुल होइ।।३।।
तेहिते दुखित होइह जिन ताता। करहु न अब रोय अपघाता।।
संत साधु कहँ वह दुख दई। कनक जराइ खरा कर लई।।
अब तुम करहु मोर संतोखा। देहु असीस जो पाऊँ मोखा।।
यह जग मा सुठ जीवन थोरा। अंतकाल सुठ होइय मोरा।।
कोउ दिन दस आगे कोउ पाछे। है नित काल सो काछे-काछे।।
उन लोगन कै भेट न होना। होने हुए सो हुए न होना।।
देखउ यह जग को गत ताता। दई जनम भर मरन विधाता।।
जे कोइ जनम[1] लीन्ह जग माहीं। सो जान्यो एक दिन है नाहीं।।
जनम साथ यह मरन है, मरन साथ गत मोंख।
हिये बोल न माँखहु, करहु पिता संतोख।।४।।
कहि यह बात जियन मुख मोरा। गयो प्रान तजि प्रान सो मोरा।।
जब सँवरहुँ[2] वह लाल अमोला। हिया फाट मुख आव न बोला।।
जस याकूब सो पुत्र बिछोहा। रह्यो प्रान सो निठुर बिछोहा।।
तस यह प्रान निठुर अब रहे। यूसुफ बिरह नेह निर्दहे।।
यूसुफ सब कहँ पुत्र सोहावा। कहँ अस पुत्र सो जग मा आवा।।
निसि दिन करै तपस्या जोगू। जब तप करै चहै सुख भोगू।।
जाय जोग महँ रैन बिहाई। तरुन बंस महँ बिरिध सोहाई।।
कई ग्रंथ अनूप बनावा। जिन देखा चख नीर बहावा।।
सँवर रूप गुन ज्ञान सोहावा। रात-दिवस जल चख बरसावा।।
हिया बजर का भयो हमारा। को लै गयो सो लाल हमारा।।
गयो लाल केहि देस कहँ, जेहि कै मिलै न खोज।
हो सोइ निहिचिन्त सो, देइ हयें दुख रोज।।५।।
बन्धु कई, हौं रहेउँ अकेला। रोइ-रोइ सभ कहँ परहेला[3]।।
तीन बन्धु मोहिं छाड़ि सिधारे[4]। एक ते एक अनूप सँवारे[5]।।

पाठान्तर—१- जनस, २-सब, ३*- नूर अली की प्रति में यह चौपाई-'सबै गये हौं रहा अकेला। पहिले पढहि मोह पर हेला।।' दिया गया है। ४*- नूर अली की प्रति में -'तेहि पाछें मोहिं छाड़ सिधारा।' पाठ दिया है। ५*- यह अर्द्धाली नूर अली की प्रति में नहीं है।

यह जग छाड़ सोइ निहचिन्ता। गये पैठ औ सागर मीता।।
जब सँवरौं वह सभै सोहाए। छाती फाट बेहर न जाए[1]।।
कहाँ गये औ कहाँ ते आये। जान न परे भेद निरमाये।।
सँवर-सँवर वै लोग सुजाना। रोवें निस दिन होयँ अज्ञाना।।
अपने मित्र सँवर सुख पायहु। होय बोध मनका समझायहु[2]।।
वै सभ गये तुम्हीं यह देसा। केहि दिन वर अक करहुँ अँदेसा।।
तुमका अंत वहै नहिं जाना। तेहिका कौन सोच पछिताना।।

जेहि पंथ सिधारें, सभै बटाऊ लोग।
चलहु सुचित जेहि मारग, और न जोग न भोग।।६।।

रोय-रोय यह बिरह कहानी[3]। कहा रहै जग माहँ निमानी[4]।।
यह जग तें मन रहै उदासा। सँवरौं जहाँ सदा कर बासा।।
देखि जगत कर कूकत हाला। होय सदा मन हाल बेहाला।।
जान न परें भेद अवगाहाँ। जग जोवन उपज्यों भुव काहाँ।।
देहु दयाल भोरहिं कर मोखूँ। दरद मोर अव अवगुन दोखूँ।।
पैठ प्रेम कै अंबर कोई। दिहेन असीस मोहिं मन होई।।
हम न रहब[5] अच्छर[6] रहि जाई। जो कोउ पढ़ै भेद निरमाई[7]।।
औगुन होइ तो लेहु छिपाई। हम न रहब जो देव बताई[8]।।
रस औ भगति प्रेम औ ग्याना। धरम नीति सम कथा बखाना[9]।।
सात दिवस महँ कथा सुहाई[10]। गुरु की दया समापत जाई[11]।।
[12]→

धरम करम एकौ नहीं, अधरम भरा जहाज।
जनम दिये कै लाज कर, राखु दोउ जग लाज[13]।।७।।

पाठान्तर--१-जाई, २-समुझावा, ३-बखानी, ४*- नूर अली की प्रति में- 'कोऊ न रहा जग रहै कहानी।' पाठ है। ५-रहे, ६-अनकर, ७*- नूर अली की प्रति में 'सँवर हियों लोग हिये सुख पाई।' पाठ है। ८,९*- ये चौपाइयाँ नूर अली की प्रति में नहीं है। १०- सोहाई, ११*- नूरअली की प्रति में-'गुरु की दया समापत जाई।' पाठ है। १२*- सभ लोकन कहें लाऊँ सीसा। लावहु दोख न देहु असीसा।। यह चौपाई नूर अली की प्रति में है। १३*- नूर अली की प्रति में दोहा संख्या-७ अपूर्ण है जो इस प्रकार है-

गुन अछार....., ...जहाज।
जनय ....., ...लाग।।

शब्दार्थ और टिप्पणी

अंकम-गोद ६/६

अंश-भाग्य १/५

अंशा-भाग, हिस्सा २/२

आँकुस>अंकुस-नियंत्रण, लोहे का काँटा या एक तरह का भाला जिसे महावत हाथी के सिर पर कोंच कर उसे चलाता है। १४/१८

अँकोरा-भेंट, नजराना १४/१३

अँगिया-चोली, कंचुकी १४/८

अँगुवहु-अंगीकार करो १०/६

आँच -तेज २२/१४

अँजोरी-उजाली रात्रि ७/११

अँदेशा-(फा०) सोच, आशंका ३/१३, ६/७, १५/१२, २१/५, २२/१५, २६/१२

अँदोखा-दुःख, खटका ५/१६

अँदोर-कोलाहल ३/४, ५/३, ५/१६, १६/३ (सोरठा), २०/६, २६/६,

अँबिरित-अमृत ७/७

अकल-अवयव रहित १३/६

अकरम-दुष्कर्म २०/२८

अकसर, अकसरै-अकेले २०/२३, २२/२५

अखज-अभक्ष्य १७/२

अखारा-सभा ७/११

अगम-वह स्त्री जिसके साथ गमन (संभोग) निषिद्ध हो। १३/५

अगर-धूप, एक पेड़ जिसकी लकड़ी में सुगन्ध होती है और धूप दशांग में पड़ती है। १४/५

अगसर-(अ०) आगे २०/३२

अगुवाई-नेतृत्व २०/२८

अछरी-अप्सरा ७/१

अछोहर-ममतामयी ६/१

अजगुत-आश्चर्य ११/३, १५/३६ अनुपमेय ११/४

अजाचक-कामना रहित, संतुष्ट १२/२०

अजया-बकरी ५/१

अज्ज-आज १३/६

अतर-इत्र ६/४

अति-अतिरेक १५/१६

अदेहिन-कामदेव ७/१३

अध -नीचे १२/८

अनत-अन्यत्र १/६, ३/२, असीम ८/२३

अनवन-अनेक १५/२, सहायता या आश्रय न देने वाला २०/११

अनवर-पैर के अँगूठे में पहना जाने वाला आभूषण १४/६

अनसारी-रुष्ट होना १५/२

अनरीती-अनीति, अनुचित व्यवहार ६/६

अनियारे-कँटीला ८/२०

अनीता-अन्याय १४/१४

अनुसारा-आरम्भ करना १५/१७

अनूढ़-अविवाहित १३/५

अनेगन-अनेक, अनगिनत १३/१

अन्हवावा-स्नान कराया २६/१०

अपघाता-आघात, हत्या २२/७, १०/५, १०/१८

अपत-निर्लज्ज, अधम १६/८, लज्जित,

अपमानित १/८, १०/५

अपूरब–अपूर्व, बेजोड़ १५/२५

अभिनासी > अविनासी–जो कभी नष्ट न हो १५/२६

अभिलाखा > अभिलाषा–चाह, इच्छा १५/२

अमराई–आम का बाग १/१०

अमोल, अमोला–अनमोल ७/१०, ४/३

अम्बारी–हौदा २१/४

अयाना, अयानी–अज्ञानी १४/२२, १६/१, अजान, अज्ञान २०/५१

अरगजा–चन्दन, केसर आदि मिलाकर तैयार किया गया एक सुगन्धित लेप१३/१

अरदास–प्रार्थना २/१०, ६/११, १५/११, १५/३०, १६/६, २०/२

अरथाना–(सं० आघ्राण) सुगन्धित द्रव्यों का प्रयोग १४/५

अरिन्ह–धार्मिक व्यक्ति ५/१३

अलँग–ओर, दिशा २०/३३

अलख–परमेश्वर, जो देखा न जा सके २/१

अलखावनी–देखने योग्य न हो २४/७

अलि –भौंरा ७/४, सखी १४/१०

अलिन्द–भौंरा ७/१०

अलोपी, अलोपे–अदृश्य, लुप्त १/२, २०/३६

अवगाहा–कठिनाई १५/३२, २१/१, पार किया २०/४६, अथाह ५/१२

अवधाना–ध्यान देने वाला २०/३४

अवस्था–सम्पत्तिक स्थिति १४/१०

अविरथा–जो व्यर्थ न हो ८/१६

अविरम–निरन्तर ८/१६

असबात–लड़के २२/२२, २२/२३, २२/२६

असावरी–एक राग जो भैरो राग की पत्नी मानी जाती है। २३/१६

असीस–आशीर्वाद १/१६

अहा–है ३/२

अहाना–(सं० आह्वान) पुकार १६/१०, १७/३, १६/२६, ११/१,

अहारा–भोजन २२/२५

अहेर–आखेट,शिकार २५/२

अहेरा–शिकारी ८/१५

अहै–है ७/४

आकर–भण्डार १/६, १२/१, १५/२६

आगर–घर,खजाना ३/२, १५/२२

आगू–आगे १०/१३, इकरार, वचन १६/४, २२/१३

आछत–रहते हुए ३/६

आत–(सं० आतु) शरीफा १३/७

आदि–प्रथम ३३/१२

आधालाँक–खेत से कटे हुए अन्न के पौधे १५/४१

आन–क्षण भर में १/१७, मर्यादा, गौरव, ७/२, ७/१५

आनबार–द्वार पर आकर २/६

आनन–मुँह, चेहरा ६/१२

आनि–आकर १०/६, अन्य, दूसरे १०/१२

आनेहु–लाए २०/३१

आप–स्वयं, आत्मभाव १५/२६

आबदार–पिलाने वाला १५/३७
आभास–द्युति, चमक २/१०
आमिल–खट्टा १२/४
आयसु–आज्ञा १२/१८
आरन–जंगल ५/१६
इक–एक २/८
इकठाई–एक साथ ३/१३
इतर–(सं०) दूसरा २१/६
इन्द्र–देवराज, अंतरिक्ष का देवता १२/१५
इन्द्रायन–एक लता जिसका फल कड़वा होता है। १३/७
इबरानी–यहूदियों की पुरानी भाषा २०/१०
इबरी–यहूदियों की पुरानी भाषा २०/१०
इब्न–सुत १२/४
इमलाक–दरिद्रता, गरीबी २/३
इमाम–धर्म के कार्य में नेतृत्व करने वाला मुसलमान १/१७
इष्ट–आराध्य देव, कुलदेवता २२/४
इसमाईल–याकूब ३/१२
ईंगुर–लालरंग का एक खनिज द्रव्य (सौभाग्यवती हिन्दू स्त्रियाँ जिसे माँग में लगाती हैं) ७/१०
ईछन–(सं० ईक्षण) आँखें १२/१५, १५/२६
उकट–ऐंठे हुए १/१६
उघारी–प्रकट करना ८/८, खोली ६/२
उछाहा–उत्साह, उल्लास ७/२
उजियारी–प्रकाशमान, कान्तिमान १/१५
उत–(अ०) उधर, वहाँ ७/१, ७/६, १६/३ सोरठा
उतपति–उत्पन्न २/३
उतंग–उसके अंग में ७/२, ऊँचा १३/७, १५/२
उदक–जल १५/४
उदधि–समुद्र १४/६
उदाना–उदित होती है १८/५
उदोख–प्रकाश, शोभा २२/१६
उध > ऊर्ध्व–ऊपर १४/२०
उन्हमाही–उनमें ५/१
उनैकै–झुकाकर १३/१
उपजारा–प्रज्ज्वलित होना १/१
उपनेउ–उत्पन्न होना १/१
उपरहन–दुपट्टा, उत्तरीय १६/५
उपराजा–उत्पन्न किया, बनाया १४/८
उपावा–उपाय किया ३/१
उपास–उपवास १७/२
उमगि–उल्लसित होकर ७/२
उमरावन > उमराव–सरदार, सामन्त १/८
उम्मत–किसी विशेष अवतार या पैगम्बर को मानने वाला समुदाय। १/१७
उरेखै–देखना १०/१८
उलछि–उमड़कर १२/६
उलहैगी–फूटना, निकलना १६/६
उरबसी–इन्द्रलोक की एक अप्सरा जो शापवश कुछ दिन भूलोक में पुरुरवा की पत्नी बन कर रही। ७/१३
उसीर–(सं०) खस १६/२, २४/२
उसीसन–सिरहाना २/८
आसे > असा–छड़ी २२/१६
ऊँदक–पानी, अश्रु ८/५
ऊख–ईख ६/८, १५/२६

ऊखा–उषा १०/११
ऊढ़–विवाहित १३/५
ऊनर–हीन २२/२
ऊभ–ऊँचा २०/२३
ऊभि–खड़ा होना ६/८
ऊरध–ऊपर १२/८, २२/१६
एमन–एक मिश्रित राग १३/८
एलची–दूत ६/५
ओट–आड़ २/४
ओदारहिं–गिराना, दाना २०/३६
ओनाई–झुकाया १२/६
औनाना–सुनना २०/१, झुकाना, २०/४१
ओपची–(सं० ओप–चमक) कवच धारी योद्धा २०/६
ओरा–तरफ १४/१५
कछु–कुछ ८/६
कटक–सोना ७/१, सेना १६/४, १६/६, १७/५, १८/४, २०/५२
कटाक्ष–तिरछी निगाह ७/७
कत–क्यों, किसलिए, कैसे ५/१८, १२/१३
कनआनी–किना का रहने वाला २०/१०
कन्द्रप–कामदेव ७/२
कबताही–कबतक १६/१७
कमान–धनुष ७/६
कमीना–नीच, क्षुद्र १२/४
करतार–ईश्वर १/३
करता–बनाने वाला, विधाता १२/३
करना–एक सफेद फूल वाला पौधा १३/१६
करभी > कलभ–ऊँटनी का बच्चा १५/१०, १५/१५, ऊँटनी २०/४, २२/१२
करसत–पीड़ित १७/२
करारी–चैन से ८/१
करेई–करना ५/७
करिया–कालिख ५/१६
कल–चैन, शान्ति २/८
कलपवृक्ष > कल्पवृक्ष–नन्दन कानन का एक वृक्ष जो समुद्र मंथन से निकाले हुए १४ रत्नों में एक है। २/११
कलपि–विलाप करके ६/२
कलावतू–रेशम के धागे पर लपेटा हुआ सोने या चाँदी का चाँद। १३/१२
कलोल–क्रीड़ा के लिए २०/४१
कलगी–पगड़ी में लगाया जाने वाला तुर्रा। २२/७
कस–कैसे ३/२, १२/२
कहि–कहकर ८/२०
काँध–कंधा ३/८, २/६
काँह–क्या ५/१
काज, काजा–के लिए १२/३, २३/४, १५/१३
काजू –काम ३/१
कातर–अधीर, उद्विग्न ६/१२, २०/३८
कानून–रूमी भाषा में बाजे का नाम१३/४
काम–इन्द्रिय या विषय सुख की इच्छा १०/१२
कामकला–रतिसुख वर्द्धन करने वाली कला। ७/१४
कारी–काली १४/१३
कालिंदी–यमुना ७/१४
काह–क्या २०/२६

काहुक–किसी का भी २/६

काहे –क्यों, किसलिए १५/३

काहेलाग–किसके लिए ८/३

किंकर–सेवक १५/५

कीट-भिरंग–दो या अधिक वस्तुओं को मिलाकर एक रूप हो जाने पर प्रयुक्त होने वाला एक न्याव। १३/१०

कीन्ह–किया १६/११

कुकुनू–एक पक्षी जिसके गाने से घोंसले में आग लग जाती है और वह जलकर मर जाता है। १३/२, २४/४

कुकनू–एक कल्पित वृक्ष जिससे यूनानियों के विश्वासानुसार संगीत की उत्पत्ति हुई है २४/४

कुठाउँ–गलत स्थान पर ८/८, १४/१५

कुठारा–कुल्हाड़ी ३/१

कुरी–मिट्टी का टीला ६/५, वंश १२/१, राशि १६/६, २२/१०

कुलटा–अनेक पुरुषों से प्रेम करने वाली। १३/५

कुसम्ह–फूल ६/६

कूकत–कूकना, कोयल का बोलना ८/६

कूच–(फा०) प्रस्थान, रवानगी १/१४, १०/१२

कूजा–सफेद जंगली गुलाब १३/६

केरे–के ५/६

केल,केलि–क्रीड़ा ५/१६, १५/१७, ११/२

केविक–केवड़ा ६/६

कै–अथवा १५/२१

कैलास–स्वर्ग २/१०, ८/१४, १४/१६, हिमालय की एक चोटी १३/१

कैसहु–किसी भी प्रकार की १/१६

कैसारी–कैसे, किस तरह २३/१७

कोक –चकवा ७/२२

कोकनद–सेवक १५/५

कोख–पेट की दोनों पसलियों के नीचे का भाग, गर्भासय २/२, ८/१६

कोट–राज प्रासाद २२/२६

कोतल–खाली चलने वाला २०/३

क्रोधवंत–क्रोधित होकर ६/६

कोप–क्रोध ६/१०

कोबिद–विद्वान, पंडित १५/२

कोबिदहिं–विद्वानों को ७/१४

कोर–वह संधि या जोड़ जिस पर से अंग मोड़ा जा सके। १६/३

कोराँ–गोद १४/८

कोरी –खाली, वंचित २३/७

कोरी > कोरा–गोद २५/६

कोहा–क्रोध १०/५

कौध–बिजली ७/१३

कृष्ण अभिसारिका– वह अभिसारिका नायिका जो श्याम वस्त्रादि पहन कर अँधेरी रात में प्रेमी के पास संकेत स्थल को जाती है। १५/८

खंधारा–तंबू, छावनी २०/७, २०/२३, २२/२६

खाँगहिं–(सं० खंज) कम होना। १७/६

खूँदै–रौंदना १०/१०

खज–भक्ष्य १७/२

खम्माच–रात में गाई जाने वाली एक रागिनी १३/८

खरा–शुद्ध ४/२, सच्चा, छल कपट से रहित २२/२२
खरी–खड़ी ८/१५
खलील–मित्र, सखा २२/३
खिरनी–एक फल वृक्ष १३/७
खीने–क्षीण, पतला, ७/११
खुमार–नशे का उतार २६/११
खूबानी–एक प्रसिद्ध मेवा १३/७
खेम–(सं०) क्षेम, कुशल–मंगल २०/१८
खेवा–नाव का बोझ १/१६, ५/१३
खेह–धूल १/१
खेहा–राख ८/१५
खोट–दोष ३/२
खोर–बुराई, दोष २०/२८
गंजन–नीचे दिखाने वाला २६/१४
गाँसी–चुभने वाली बात ८/२
गजदार–महावत १२/८
गत–गति, हालत १/१
गयन्द–गजेन्द्र ३/५
गरंथ–ग्रंथ २/२
गरीब निवाज–दीन पर दया करने वाला। १/५
गर्विता–अपने रूप गुण का गर्व करने वाली नायिका। १३/५
गहबर–शोक विह्वल ८/२३
गहिलीन्हा–पकड़ लिया ५/२
गहे–पकड़े, दबाये १४/१८
गाछ–पेड़ ७/६
गाजा–बिजली, आफत ५/३
गाजै–खुशी के मारे जोर–जोर से बोलना। ११/५
गाढ़–कठिन १०/११
गाढ़ी–प्रबल ८/२२
गाढ़े–संकट का ८/२०
गाड़–गड्ढा ७/१२
गात–शरीर ३/५, औकात, सामर्थ्य १२/१८
गार–निचोड़, सारतत्त्व ७/१३
गाहाँ–कथा, गाथा २३/६
गिउहारा–गले का हार १०/५
गीव > ग्रीव–गला ३/१२, ५/१६
गुनि–विचार कर १०/७, १५/३३
गुनी–रस्सी ३/१४
गुपत–गुप्त, अदृश्य १/४, ७/५
गुरु–गम्भीर १२/१
गुलद्रुम–एक तरह की बुलबुल जिसकी दुम के नीचे लाल दाग होता है। १३/२
गुसाईं–स्वामी, ईश्वर १/५
गेसुत–स्त्रियों की लट २५/८
गोई–सखी १८/२
गोठिल–भोथरा १०/१२
गोपित–छिपाया हुआ ८/१८
गोफन–ढेलवाँस, छींके के समान एक जाल जिससे ढेले आदि फेंकते हैं। १३/११, २०/३४
गोरखधंधा–झमेला १/१४
गोवा –छिपाकर रखना १/१२, २०/२३, २३/१२, ८/११,
गोवै–छिपाना २३/११
गोहरावा–बुलाया, पुकारा ५/२
घनसार–कपूर १२/१७

घरी–६० पल २४ मिनट का काल २३/८
घाघस–एक प्रकार की मुर्गी १३/२
घाल–नाश करने वाला ६/३
घालि–डालकर ८/१८, नाश करने वाली, घातिनी १०/२
घुँघुची–लाल या सफेद रंग का एक बीज, गुंजा ७/१४
घोखहिं–रटते हैं, बार-बार बोलते हैं १३/१२
चंग–डफ के आकार का एक छोटा बाजा १३/४
चंदोल–एक तरह की पालकी ६/६, २२/१२, छोटा शामियाना १०/१३
चाँपा –दबाना २०/३४
चूँबि–चूमकर १२/५
चक-चौहर–आशा भरी दृष्टि से देखना ६/१
चक-चोहट–चकाचौंध ८/२
चकिरित, चकूत, चकृत–चकित ७/१५, ११/४, १४/६, १४/१७
चख–नेत्र ३/५, ७/७, ७/१६, ८/५, १५/३५
चताई–चुगलखोर, मिथ्याभासी १५/५
चवाव–बुराई की चर्चा १५/१६, २०/४६
चाँपा–दबाया २३/१७
चाटक–जादू ८/४
चात्रिक–चातक १०/११
चापै–दबाने के लिए ८/११
चारा–चर्चा १०/१३
चारियाम–चार पहर, ३/६
चारिचख–देखा-देखी होना, निगाह मिलाना १४/३
चाव–तीव्र इच्छा, चाह १५/२१
चितेरा–चित्रकार ५/१०, ७/१०, १२/३
चित्रसारी–चित्रशाला २०/२१
चिबुक–ठुड्डी ७/१२, ७/२२
चीक–कसाई २४/८
चीर–वस्त्र ८/२०
चुभकी–डुबकी ११/२
चूक–भूल, गल्ती ५/६
चेटक–जादू ८/४
चेतहु–सोचो, विचारो १४/११
चेरा–दास, सेवक २२/५
चैना–सुखपूर्वक १४/८
छँछी–खाली ८/१८
छाँड़ि–छोड़ना ५/७
छिगुनी–कानी उँगली, कनिष्ठिका १५/२०
छत्र–राजाओं के ऊपर लगाई जाने वाली राज चिह्न रूप छतरी १/८
छत्रपति–राजा १२/१४, २३/१८
छात–छतरी, छत १४/४, १४/७
छाती–स्तन १३/५
छार, छारा–धूल, राख, ५/२, १/१
छिन–क्षणभर २/४, १४/१३
छुधा–भूख २/७
छूटि–छोड़कर ६/१२
छोरा–छीन लिया २/४
छोहा–ममता, प्रेम २०/१६
छोहाई, छोहाये–स्नेह युक्त हो गया २५/२, ४/१
जंगम–चल, चलने वाला, प्राणिजन्य १/१, ५/८, ५/११

जंबुक–स्यार ३०/३७

जनि–मत १५/२२

जराऊ–जड़ाव वाला, जिस पर रत्न या नग जड़ा हो। १६/१७

जरित–जड़ा हुआ १६/१७

जलंधर–एक राक्षस १२/१५, बादल २३/६

जल-पक्षी–पानी के किनारे रहकर मछलियाँ आदि खाने वाला पक्षी। १३/२

जाजवंती–एक राग १३/८

जातरूप–सौन्दर्य ७/१३

जातवेद–अग्नि ८/५

जानकै–जाने का १५/६

जाफरी–एक पीले रंग का फूल १३/६

जाम–पहर ८/११

जावँत–जहाँ तक, जितने, १७/६

जहाँ-लह–जहाँ तक १/१३

जाही–एक तरह की चमेली १३/५

जनि–मत १२/२१

जीरन–जर्जर २३/१

जुझारा–रणप्रिय, युद्ध करने वाला २/३

जुत–युक्त १/८

जुन्हाई–चाँदनी ७/१४

जुराफा–अफ्रीका का एक पशु विशेष, जिराफ १३/२

जुरावा–ठंडा हुआ १६/५

जुहार–एक प्रकार का अभिवादन, प्रणाम २२/२

जूझ–युद्ध २/६

जूही–एक झाड़ जिसके फूल बहुत छोटे, सुकुमार और मधुर गंध वाले होते हैं। १३/६

जेइँ–जिसने १२/८

जेवनार–भोज, दावत १५/१७

जोगू–योग्य १०/१४

जोजन > (सं० योजन)–दूरी का मान विशेष २२/१

जो-जो–ज्यों-ज्यों ११/४

जोत–ज्योति, प्रकाश २/२

जोयहु–देखना ४/१

जोरा–पूरा पहनावा ११/३

जोवन > यौवन–जवानी २३/४

जोहारा–अभिवादन का एक प्रकार, प्रणाम ६/५, १०/१३, २०/१, २२/१३

जौ-जौ, ज्यौं-ज्यौं–जैसे-जैसे २/१०, १६/३

झल-झल–पूरी झलक के साथ ८/११

झलाझल–खूब चमकता हुआ १४/५

झार–ज्वाला १/१

झारा –झाड़ी ५/२

झुनझुना–झुन-झुन करके बजने वाला खिलौना १३/१२

झुरहिं–सूखती है २०/११

टारै–दूर करे २/८

टिकावा–निवास, ठहराव २२/११

टेरा–पुकारा ६/६

टेरौं–पुकारना ५/७

टोडी–एक रागिनी, भैरो राग की स्त्री १३/८

टौने–जादू, टोना १३/११

ठहकि–चौंककर ७/१५

ठाऊँ–उचित स्थान २/२, ३/१, ५/१४, १४/१५, २३/७
ठाईं–स्थान, जगह २१/१
ठाकुर–स्वामी ३/२
ठाठ–शान, सजधज २३/७
डफ–एक वाद्य विशेष १६/६
डफारा–गला फाड़कर, चिग्घाड़ कर रोने की आवाज ५/४, ५/६, २०/१५, २०/२३, २२/८
डरपै–डरना७/५
डारा–डालना ६/२
डारौं–छोड़ दो, त्याग दो ८/८
डाह–संताप २३/१
डाहै–संतप्त करना १०/११
डीठी–दृष्टि में १०/८
डोल–पानी भरने का लोहे का गोल बर्तन ६/२
डौंडी–डुग्गी, ढिंढोरा पीटकर १६/१०, २३/६
तंत–उपाय १६/४, तत्त्व ७/१६
तँबुआ–तम्बू १/११
तँवाई–घुमरी, चक्कर २३/१
तखरे–तराजू का पलड़ा १४/१३
तपा–तपस्वी २/६
तबलहि–तब तक ५/८
तमचुर > ताम्रचूड़–मुर्गा १५/६
तमामी–जरीदार कपड़ा ११/५
तहवाँ–वहाँ ७/४
ताकहँ–उसको २/८
ताजन–चाबुक कोड़ा २६/१५
ताता–पिता ३/१, तप्त, गरम ३/१२, १४/२२
ताना-बाना–तानना और भरना ११/४
तरासा–भय, आतंक ६/१०, १०/७, ११/४
तारी–बरने योग्य बनाने वाला १४/६
तास–(अ०) एक प्रकार का रेशमी वस्त्र ११/५, २२/१७
तासो–उससे ७/५
ताह–उसे ६/२
ताहिं–उसको १२/२१
त्रास, त्रासा–भय, डर ५/६, २/२१
त्रासित–डराया हुआ ३/१२
तीया –नारी ८/२
तिरखा–प्यास ३/६
तीरा–किनारे, तट पर ४/२, १२/७
तिरिन–तृण १५/३६
तिरियन–स्त्रियों का १२/३
तीछन–तीक्ष्ण १५/२६
तुखार, तुखारा–एक प्राचीन देश विशेष, इस देश का घोड़ा २२/२, १७/४
तुन–वृक्ष विशेष १६/१
तुरंग–घोड़ा३/८
तुरंज,तुरज –नीबू, १५/१७, १३/७
तुरतेहि–तत्काल ६/५
तुराई–(अ०) आतुरता के साथ २०/३४
तुरी–घोड़ा ६/६, १२/१७, १३/१३
तुलाना–आ पहुँचा १०/१३, २२/४
तुव–तुम्हारे १२/५
तुसार–हिमकण, ओला ८/१४
तुहि–तुम २/८
तूरा–तोड़ा, तोड़ना १४/१२

तूरी–मोती की लड़ियों का झब्बा २०/२०
तृषा–प्यास २/७
तेहिकेरा–उसका ७/३, २२/५
तेहिमहँ–उसमें २/८
तैं–तुम १४/११
तो–तो–त्यौं-त्यौं ११/४
तोर–तुम्हारा ५।१४
तोरिय–तुम्हारी ४/२
तोही–तुम्हें १०/१६
तौ–तौ–वैसे-वैसे १६/३
थाती–धरोहर, पूँजी १/१, १४/१२
थाना–स्थान २२/२८
थाहा –नदी आदि में वह स्थान जहाँ बिना डूबे पाँव टिक जाय। २०/४६
थिर–स्थिर ७/६,
दहुँ–दाहना, जलाना १/३, शायद १४/३
दइय, दई–ईश्वर १/८, २/३, २/६, ५/१६, ११/३
दयंत–दयावान २५/६
दरब–द्रव्य, धन ६/७,
दलइत–सेना नायक २०/६
दल-गंजन–भारीवीर २/३
दलन–नाश करने वाला १४/६
दसन–दाँत ७/१०
दामिन–विद्युत ७/३, २२/१६
दायज–विवाह के समय वर को दिया जाने वाला धन ६/६, १०/१३
दाया–दया १५/४
दावा–दाँव, अवसर, २०/५०
दाहिन–अनुकूल ६/८, १२/१३
दिग्गज–वह हाथी जो पृथ्वी को सँभालने के लिए किसी दिशा में स्थिर माना जाता है। (दसो दिशाओं में दस दिग्गज की बात कही गयी है) २/३
दिधिग–आँख ७/७
दिनेस–सूर्य ७/४
दिपै–दीप्ति, चमक २२/१३
दीठ–दृष्टि ७/१८
दीन्हा–डाला ११/३
दीन–धर्म २२/२५
दीपक–एक राग १३/८
दुअ-दस–कान्तियुक्त (सोने के अर्थ में) ७/१७
दुकूल–रेशमी वस्त्र २/४, ८/५, १५/३०
दुबरे–दुर्बल २०/१
दुम्बे–पूँछ वाला पालतू जानवर, भेड़, बकरी आदि १३/१२
दुमची–पिछला हिस्सा ७/१८
दुहिता–पुत्री २/२
दूखित > दोषित–दोष से युक्त ५/११
दूबर–दुर्बल १२/४
दूभर–भारी, असह्य ५/८
देवल–देवालय, मन्दिर १४/१६
दोखी–दोषी ६/४
दौरावा–दौड़ाना ४/१
द्वौ–दो ७/७
धँसक–दहलने की क्रिया २७/२
धनि–धन्य ५/१८, ७/६, १२/३
धमारी–धमा चौकड़ी, होली की क्रीड़ा २४/१
धरनि–पृथ्वी ४/१

धरहर–बीच में पड़कर लड़ने-झगड़ने वाले को लड़ाई से विरत करना, बचाव २०/२२

धाई–देख भाल करने के लिए नियुक्त स्त्री, उपमाता ७/२०

धामाँ–वासस्थान १४/१७

धिय–पुत्री, बेटी २०/५३

धिरकारा, धिग–धिक्कार है १४/११, १५/२३, १४/२३

धुंध–आकाश में बहुत अधिक गर्द छा जाने से होने वाला अँधेरा। ७/५

धुज–ध्वज ६/४

धुनि–जो किसी धुन में हो १४/६

धूम–शोर, हल्लागुल्ला १४/२१

धौराहर–मीनार १/११, ८/२१

नट–नाटक खेलने वाला व्यक्ति, अभिनेता ८/४

नबी–पैगम्बर, ईशदूत २/१

नरगिस–हलके पीले रंग का एक फूल जो उर्दू, फारसी साहित्य में आँख का उपमान है। १३/१६

नवाइ > नवावा–झुकाना, नतमस्तक होना १/७

नवावा–डलवाया ६/५

नवै गरह–नौ ग्रह-सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु ७/२२

नवोढ़ा–नव विवाहिता स्त्री १३/५

नाउँ–नाम ३/१२

नाय–डालकर ६/५

नायब–सहायक १६/५

नाव–नाम ५/८

नावै–डालना ६/१

नाहाँ–नेह, प्रेम १०/१६

नाहा–नाथ, स्वामी १४/१४, २३/१२

निचोवा–निचोड़ना २३/१२

नित–नित्य १२/४

निदान–(अ०) अन्त में २१/२, २१/५

निधाना–खजाना २/३

निनारा–जुदा २२/५,

निनारी–न्यारी २२/१३, २६/५

निपट–एकदम, बिलकुल ११/१

निपाता–पतन, विनाश २२/२१

निबेरा–बचाव ४/३

निमाना–नीचा १४/६

निमानी–नीचे, छिपी हुई १२/२०, १८/५

नियर, नियरे–निकट ८/१६, ८/४

नियारा–पृथक, जुदा ५/४

नियावा > न्याव–न्याय, इंसाफ ८/१४, २३/१६

निरथाई–निरर्थक, व्यर्थ में १४/२

निरफल–निष्फल १०/६

निरभरै–निर्भय ७/७

निरमाया–निर्माण किया, बनाया ४/२, ७/१५, २६/२

निरसंस–बिना किसी संशय या खटके के १५/४०

निरिप >नृप–राजा ३/३

निराजै–छूटै (सं० नीराजन) १४/२१

निरंजन–परमात्मा ३/६, १५/२८, २१/२

निबाहा–(सं०) रक्षा किया, बचाव किया २०/५३

निस्तार–अभीष्ट की प्राप्ति ११/२, मुक्ति, उद्धार १/६, १४/१४

निसँक–बिना किसी खटके या डर के ७/१८

निसान–नगाड़ा १६/६ (सोरठा)

निसारा–निकाला ६/२

निहार–कुहरा २३/१०

निहारा–देखने लगा २/७

निहाला > निहाल–हर तरह से तृप्त १/५, ८/७

निहोर–प्रार्थना २०/५२

नीठ–अभीष्ट १२/२०

नेक–अच्छा १/८

नेगिन–सम्पत्ति आदि का प्रबन्धक २०/४

नेगी–कर्मचारी, कारिंदा १५/४१, नेग पाने वाला २०/२६

नेवाज > निवाज–दया करने वाला २५/७

नेस्त–जिसका अस्तित्व न हो १/२

नौ रतन–नौ प्रकार के रत्न (मोती, मानिक, वैदूर्य, गोमेद, हीरा, मूँगा, पद्मराग, पन्ना, नीलम) ११/५

नौबत–मंगल आदि सूचित करने वाला बाजा, नगाड़ा २०/८, २२/१४

पंजर–शरीर २३/१२

पंथी–बटोही, यात्री १५/१०

पँवर–द्वार १०/१४

पकरि–पकड़कर ६/११

पखाना–पाषाण १३/८

पखारा–धोना ७/२०

पखिय–पक्षी ८/६

पगठारा–पैरों को ठेला १५/८

पटंबर–रेशमी वस्त्र ६/४

पटतर–बराबरी में ७/१७

पटाहू > पटोही–पथिक २६/१५

पबारी–पता लगाना, थाह लगाना २०/३४

पत > पति–प्रभु, मालिक ८/१७, १०/१६, १५/३, १६/४, २७/११

पति–साख २०/५३

पतिआओ–विश्वास किया ५/१४

पतिका–पति से मिलने की इच्छा रखने वाली स्त्री। १३/५

पतिपाल–(सं० प्रतिपाल) पालक २२/५

पतीजा–विश्वास करना १६/११

पद–डग, मार्ग ८/६

पदुम–पद्म, कमल ६/१०

पनियाला–एक तरह का फल १३/७

परकार–प्रकार १/४

परगट, परघट–प्रगट २/२, १/४

परगासा–प्रकाशित करना ५/२, १२/१०

परचारै, परचावै–सुलगाना २३/१२, २४/४,

परतीत > प्रतीत–विश्वास ३/३, २०/३

परधाना–प्रधान, श्रेष्ठ १२/१

परबीना–प्रवीण १६/५

परबेसा–प्रवेश ७/८

परबोध–सांत्वना, ढाढस ५/१, २०/४४

परमाना, परमानै–प्रमाण रूप में ग्रहण किया, विश्वास किया १०/१६, १२/१२

परसन–स्पर्श के लिए १४/१६

परहार–त्याग १६/२

परहेले–त्यागना, छोड़ना ५/८, १०/५, १४/१०

परहार–(सं० प्रहार) आघात, चोट २०/४२
परान–प्राण ५/१४
परार–पराया २२/२५
परावा–पलायन करना, भागना ५/१६, ६/३
परिहरा–छोड़ा, त्यागा २२/१६
परेवा–कबूतर १३/२
प्रतिपाल–पालन करने वाला २०/४६
प्रवीना–प्रवीण, निपुण १३/३
प्रहत–प्रहार, वार १३/११, १५/२१
परावा–फेंका १५/२०, २०/३६, २०/४३
परिसर–मृत्यु ६/४
परिहरा–प्रायश्चित १०/३
पला–पल में ७/१६
पलुहाई–हरा भरा होना, पल्लवित होना १६/२, २०/२५
पवारा–छितराना, फैलाना ३/३
पवारी–फेंकना ३/१०
पँवारहि–फेंककर २/३
पँवारि–खड़ाऊँ ३/६
पषाना–पत्थर २०/३६
पसारा–फैलाया ६/१०, २०/२३
पसीजै–दया से आर्द होना २१/४
पहरु–पहरेदार ८/२०
पहँ–पास ३/४, ३/६, ५/११, ५/१४, ६/१०, ११/३, २०/४४, २१/६, २२/५, २३/६
पहिराउर–पहनावा ११/३, १८/१
पहुँची–हाथ में पहनने का स्त्रियों का एक प्रसिद्ध आभूषण ७/१६, ११/५
पहुनाई–पाहुना (अतिथि) होने का भाव २०/११
पाँगुल–(सं०) लंगड़ा २२/१२
पाँडुक–कबूतर की जाति का एक हल्के कत्थई रंग का पक्षी १३/२
पाँवरि–जूता २०/५०
पाइ–पैरों पर १४/८
पाऊ–पाँव ८/६
पाग–पगे हुए, डूबे हुए ७/११, पगड़ी ११/५
पाट–विस्तर ६/४, बटा हुआ रेशम का रेशमी वस्त्र १२/१७, सिंहासन १४/४, २२/२४, २५/२
पाटा–पीढ़ा २/४
पातक, पातख–पाप, दुष्कर्म ५/१६, १२/२, १४/६, १४/१४, २१/६
पातकी–पापी ३/१२
पानिन > पाणि–हाथ १४/१५
पानिप–इज्जत, प्रतिष्ठा २०/५१
पायक–दूत ८/२४
प्रापत–प्राप्त १०/१२
पावा–पैर १५/११
पाहाँ, पाहीं–पास, समीप, १/११, २०/१२
पाहुर–उपहार, भेंट २२/१०
पिछारा–शोक से मूर्च्छित होकर पीठ के बल या खड़े-खड़े गिर पड़ना। १०/१२
पिंडुरी–टाँग का पीछे की ओर का मांसल भाग ७/१६
पिडाक–पिटारी ७/११
पिपील–चींटी २०/३८
पियूख–पीयूष ७/११, १५/२६
पिसुन–चुगलखोर ५/१५

पीठी–उर्द की पीठी ११/३
पील–हाथी २०/३८
पुन्नता–पुण्य १४/१५
पुरयहु–पूरा करो १५/३०
पुहुमियाँ,पुहुमी–भूमि, पृथ्वी १५/११, १५/२०, १५/३६, १६/२, २०/४१
पूतन–पुत्रों २२/१५
पूरा–पूर्ण, व्याप्त १/४
पेच–पगड़ी की लपेट ११/५
पेटी–पिटारी, छोटी संदूक १२/२०
पेलि–आगे बढ़ना २०/४२
पेली–उलंघन किया, टाला १४/१०
पै–परन्तु ३/२
पै > पय–दूध १५/२
पैठत–प्रवेश किया ११/१
पैमाना–(फा०) शराब पिलाने का प्याला २०/२६
पैसारा–प्रवेश १५/१३
पोखेउँ–पालन-पोषण किया ८/७
पोत–कांच की गुरिया का दाना ६/३, १०/३, १२/१६
पोला–परेती पर सूत लपेटने से तैयार होने वाला लच्छा १२/६
पोष–पोषण ४/१
प्रोहित–पुरोहित १/७
प्रौढ़ा–सब प्रकार की रति निपुण तथा लज्जा और प्रचुर काम वासना वाली अधिक अवस्था की नायिका। १३/५
पौरुख–पुरुषार्थ, पराक्रम २३/५
फरऊन–वैभव, शानोशौकत २२/१५
फालस–गरमी के दिनों में होने वाला एक छोटा फल १३/७
फिराये–घुमाये ८/७
फुलचरी–एक छोटी चिड़िया जो फूलों पर उड़ा और उसका रस चूसा करती है। १३/२
फेरि–पुनः ५/१४, ८/१७
फेरिकस–फिर कैसे १०/१६
बँधाना–बाँधने वाला ७/६
बँकुरी–टेढ़ी १५/३५
बँदिखाना–बन्दीगृह, कारागार १५/६
बँदुवाना–बंदी, कैदी १५/६, १६/३
बँदिसानी–अलग रहने का भाव १५/२६
बखाना–प्रशंसा करना १/११, १/१२, २/३, ७/४, १२/८
बगरावा–फैलाया, बिखेरा १२/८
बछनाग–एक स्थावर विष १०/२, २६/१५
बटपारहिं–बटमार १२/१४
बड़वानल–समुद्र स्थित अग्नि, कालानल २३/६
बधावा–बधाई, मंगलाचार २२/३
बनवारी–बनमाली६/६
बानिज > वाणिज्य–व्यापार १५/११
बनिता–स्त्री १०/१४, १६/०१
बबूना–दवा के काम आने वाला एक पौधा १३/६
बरख–वर्ष ८/१४
बरत > व्रत–उपवास करना ७/४
बरधित–बढ़ा हुआ २२/२१
बरना–वर्ण का, रंग का १५/५
बरनै–वर्णन करे ७/५
बरबत–वक्तख की शक्ल का एक बाजा

१३/४

बरबस–जबरदस्ती २/४, ५/५

बराना–(सं०क्रि०) बचाना, रक्षा करना ७/७

बरिवंडा–प्रबल, प्रचण्ड २२/२६

बरियाई–(अ०) बलपूर्वक, जबर्दस्ती १४/२२, २०/१५

ब्रह्म अण्ड > ब्रह्माण्ड–समस्त विश्व १५/२६

बलख–अफगानिस्तान का एक देश जो इस समय एक छोटा सा गाँव है। ६/३

बलाहक–बादल २२/१८

बलिहारी–न्यौछावर १५/२३

बसानी–सुगन्धित होना ७/१

बहिराना–बाहर निकाला ११/१

बहोरा–वापस करना, लौटाना १४/२, १४/१५, १५/३५

बाँच–पढ़कर १/१७

बाँचा–पढ़ा १/१५

बाउर–बावला १/११, २/४

बारबयस–बाल्यावस्था १५/३५

बहोरा–वापस करना २१/६, २२/५, २२/७

बागा–एक लम्बा पहनावा जिसका प्रयोग प्राचीन समय में होता था। ३/५, ६/१२, १६/६

बाचा–वचन १०/१६

बाजत–लड़ते हुए

बाट–मार्ग १५/६

बादला–चाँदी का एक चपटा तार जो गोटा बुनने या कलाबतू बनाने के काम आता है। १३/१३

बादला-तासा–चाँदी के तार से बुने गोटे वाला एक तरह का कपड़ा। २१/४, २३/२

बान–वाण १६/४ सोरठा

बाना–पहनावा, वस्त्र २५/१

बानात–एक रंगीन ऊनी कपड़ा जिसका अँगरखा आदि बनाते हैं। १३/१३

बार–केश ७/१८, किनारा ७/१२, बालक ५/५, १२/३, बोझ, भार, ८/६, १५/२३, जल २२/१८

बार-बार–रोम-रोम १४/१५

बारन–सैनिकों के रहने के लिए बने लम्बे दलान २०/३६, न्यौछावर करना २२/११

बारह-बानी–द्वादस वर्ण सूर्य सा चमक वाला, खरा, निर्दोष १६/०१

बारह दरी–वह खुला हुआ कमरा जिसमें तीन-तीन द्वार चारो ओर हों १३/१

बारहिं–बाल्यावस्था १०/२

बारा–बालक, बेटा २/२, ३/२, २०/६, २२/५, किशोर २/१०, १०/१३, ११/१, १२/५, १२/१६, १२/१६, १६/३, (फ०) समय, दिन ६/५, १०/१४, १२/५, बाला १५/२७

बाराहिम–हजरत इब्राहीम २१/३

बारि, बारी–कमसिन लड़की, किशोरी १५/१६, ७/२, ७/२०, १२/३, कन्या ६/३, फुलवारी १०/२

बारिबैस–बाल्यावस्था १/१५

बारें–आखिरकार १०/४

बाल > बाला–तरुणी १४/७, १५/२४

बालके > बालिका–लड़की ७/२०

बाबर–बावला १७/५

बास–गंध ७/१

बासा–भयभीत, आतंकित ६/१० निवास है ८/३

बिकरार,बिकरारा > बेकरार–व्याकुल ५/१, ५/१२, ७/१२

बिकारी–आसक्त, विकारयुक्त होकर ६/६

विखै–(अ०) विषय में, सम्बन्ध में २०/२७

बिछनागा–बिच्छू और नाग ८/१०

बिछुरि परे–बिछुड़े हुए १/१६

बिछुरै–बिछुड़ना २/८

बिछोई–बिछोह, वियोग १/१२

बिजय–(सं० विजया) भंग १२/८

बिजोवै–अच्छी तरह से देख रेख करे, रक्षा करे १५/४१

बिथुराने –बिखेरना ११/२

बिनमतै–बिना विचार के ३/१२

बिनवा–विनय के साथ १५/११

बिरत–अवगत १२/३

बिरन–भाई ५/१

बिरहित–परित्यक्त १३/५

बिलगाई–अलग होना १५/२६

बिसुध > बेसुध–होश हवाश खो देना ५/६

बिसूरत–दुःखी होते है ८/४

बिसेखै–विशेष रूप से ३/५

बिहसाई–मुसकाना १२/१६

बिहाइहि–बताना ५/८

बिहाए–बिताए १/१२

बिहावै –बिताना २०/३३

बिही–अमरूद १३/७

बिहूना–(सं०) रहित, अलग १०/१३

बिहूनी–पराई १८/५, विहीन, वंचित ७/१८, २०/१

बीर–भाई ५/२

बुध–पंडित, विद्वान १/१६

बुहारन–झाड़ना १०/११

बूड़हिं–डूबते हैं ७/१२

बेगाना–पराया २३/४

बेकरारा–व्याकुल होकर ७/४

बेरा–बार ११/२

बेली–साथी, सहायक १५/१७, लता ८/६

बेवान–विमान २२/१२

बेसाहा–सौदा, खरीदी हुई चीज २०/४६

बेहाला–बेचैन २/४, ७/७, ७/१४

बैध-सन्धि–वयः सन्धि १३/५

बैपार–व्यापार ७/१४

बैसे–बैठती है ८/११

बोखारा–रूसी तुर्किस्तान का एक प्रदेश या उसकी राजधानी ६/३

बोध–सांत्वना, तसल्ली ५/५

बोहित–नाव ७/७

बौरावा–बावला बना दिया ३/१

भंजन–भंग करने वाला १४/५

भँवरन–भँवर में, चक्कर में ७/१२

भृगु–एक गोत्र प्रवर्तक ऋषि जो ब्रह्मा के पुत्र माने जाते हैं १५/२१

भभूका–लपक, चिनगारी २३/१०, २३/१२

भयातीत–भय से अभिभूत ५/१२

भरहिं–भरना, पूरा करना १/१४

भरोस–भरोसा, विश्वास १०/१८

भल–अच्छा ८/२१

भाकसी–भट्ठी, भाड़ १४/२३, १५/६, २७/११

भाखा > भाषा–बोलकर भाव प्रकाश करने का साधन ५/६

भाग–भाग्य ६/१२

भाजन–बरतन, पात्र ३/१०, १५/३१

भार–गुरुत्व २२/१५

भाषहि–बोलना, कहना १०/१५

भासक–प्रकाशक ८/११

भिनसारा–प्रातःकाल १/११, ३/४, ८/१२, १२/१६

भुइहरै–तहखाना २०/३६

भुवारा–रूई जैसा रेशेदार २३/१४

भैरो–एक राग १३/८

भोरी–भोली १०/६, १४/३

मंजूसा–पिटारी, संदूक ६/४, २०/६

मंद–धीरे से १५/२३

मंदिल–घर ३/८, ६/७, १६/२ (कवित्त)

मंसा–चाह, इच्छा ३/४

मँजारी–(सं० मार्जारी) बिल्ली १७/२

मृगमद–कस्तूरी १२/१७

मकु–शायद, कदाचित ६/८, १२/१८, २०/२

मुकुलाई–खुलना, छूटना १५/१२

मगरिब देस–पश्चिम का देश ७/१, ६/६

मज्जहिं–स्नान करते हुए ७/१२

मढ़ी–कुटी १८/५

मतंग–हाथी १४/१८, २०/६

मत–सलाह ३/४

मता–विचार २/६, ३/२

मध्या–वह नायिका जिसमें काम और लज्जा समान हो। १३/५

मनुहारा–मनाने का प्रयत्न, खुशामदी १५/१३, १५/२१, १५/२४, २६/४

मयूख–किरण, दीप्त १५/२६

मरातिब–(अर०) पताका २२/१४

मलार–एक राग जो वर्षा ऋतु में गाया जाता है। १३/८

मष्ट–मौन १०/७

महँ–मेरे, मैं ५/११, १२/६

महर–एक पक्षी १३/२

महारन–(महा+अरण्य) बड़ा वन २०/१६

महूँ–मैं भी १५/३

माँझ–मध्य, बीच २०/१६

माँत, माता–गतवाला १४/१८, १२/५

माधो–वैशाख २४/२

मान–प्रमाण ८/७

मानुख–मनुष्य ५/१८

मार–काम १४/२०

मारग–मार्ग, रास्ता २/१

माहिं–में १५/३४

माही–मछली २२/१५

माही-मरातिब–राजाओं, बादशाहों की सवारी के आगे चलने वाले मछली, ग्रह आदि की आकृति वाले सात झंडे। २२/१५

मिन्त–मित्र १६/१७

गिनती > विनती–प्रार्थना ३/१४

मिरुत–मृत्यु ५/१६

मिरुत-हुलास–अति प्रसन्नता से मृत्यु १२/६

मिसरानी–मिस्र की भाषा १/१५
मींचु–मृत्यु १५/३१
मुकुति–मुक्ति १/१५
मुकुरनी–दर्पण २/४
मुगधा–(सं०) यौवन प्राप्त सरल स्वभाव की नायिका १३/५
मुंदरा–बिछुआ १४/६
मुदिता–वह नायिका जो पुरुष की कामना के अकस्मात पूरी हो जाने से प्रसन्न होती है। १३/५
मुरि–मुड़कर १३/५
मूठ–जादू-टोना ११/३
मूध–बन्द करना ८/१५
मूसै > मूसा–यहूदी धर्म के प्रवर्तक जो पैगम्बर या ईश्वर के संदेशवाहक माने जाते हैं। २६/१८
मेघाम्बर–वर्षा का वस्त्र १२/६
मेरऊँ–मिलाऊँ ८/६
मेरावा–मिलाना ८/२३
मैन–मदन, कामदेव २३/५
मैमन्त–मतवाला १२/८
मोख–मुक्ति १०/४
मोजरा–अदब से सलाम १६/५
मोजरै–(अर०) अदब से सलाम करना २२/२४
मोर–मेरा ६/२
मोरी–मेरे १४/१५
मोल–मूल्य, दाम ६/३, १२/२
मौलसिरी–मौलसिरी पुष्प १३/६
यक–एक १२/८
यहकर–इसका १२/२
यहियँ–इसने ही १२/११
रंगरावै–रंग चढ़ाना, रँगना १५/२८
रंगराता–सौन्दर्य आनन्द में डूबा ८/२
रंगा–सदृश्य, तरह २१/४
रंभा–एक अप्सरा ७/१३
रच्यो–बनाया, रचना की ५/१०
रजस्सला–वह स्त्री प्रवाहित हो गया हो १५/१६
रतिपति–कामदेव ११/१
रन–रण, युद्ध १२/१
रब > रवि–सूर्य ७/३, ईश्वर २३/१५
रमना–भेंड़, बकरी के रहने का स्थान १३/१३
रमने–चरागाह, मनोहर हराभरा स्थान १५/११
रवन–रमण करने वाला पति, भर्ता १६/२
रवाब–एक प्रकार की सारंगी १३/४, २४/४
रहस, रहसाए–प्रसन्न, आनन्दित हुए १२/१०, २६/२, ६/६, ६/८
रौधा–पास, निकट ४/३, २०/४५
राउर–आपका, श्रीमान का ३/४, ५/१८, २०/२६
राका–पूर्णिमा १२/१
रोजू–रोना-धोना ८/८
राता–अनुरक्त होना ८/१६, १२/६, लाल, सुर्ख ७/७, रँगा हुआ १६/२
रायमुनी–लाल पक्षी की मादा १३/४
रारी–झगड़ा २०/४५
रावा–राजा ५/१४, १०/१३
रिस–क्रोध ३/३, ३/१०, ३/१२
रूखन–वृक्ष, पेड़ २४/२

रूद–नदी १५/६

रूदनील–नील नदी ११/१

रूपमान–सुन्दर १२/३

रूम–तुर्की पूर्वी कैसर कानिस्तंताइनका राज्य जिसकी राज्यधानी कुस्तुंतुनिया थी। ६/३

रूसा–रोष करना, नाराज होना ६/३

रोकर–नकद रकम, रूपया ६/४

रोज, रोजू–रोना-धोना, विलाप ५/१६, २०/२३, ३/१३

रोरा, रोरी–कोलाहल ८/१८ १३/२

लखि–देखकर २/८

लगन–प्रेम ८/१२

लगुटी–लाठी, दंडा २३/४

लड़ी–गुच्छा, पंक्ति ७/४

लम्बग्रीव–ऊँट १५/१०

लरहिं–लटकती है ७/४

लवलेसा–मग्न ६/७ स्वल्प मात्रा, थोड़ा १५/२२,

लहकेउ–धधकना, चाह से अधीर होना १५/११

लहा–लाभ २०/४६

लाँक–तुरन्त की कटी हुई फसल १५/४०

लाइ –दोष १५/२

लागि–के लिए १/१७

लायक–उपयुक्त ७/६

लाल–माणिक ७/१४

लालमुह–तोता १३/२

लाहा–जलाने लगा ७/२, कान्ति उत्पन्न करता है ७/२०, लाभ, मुनाफा २०/४६

लीन्हसु–लिया ५/१४

लेखा–तरह, सदृश ८/१८, १२/३, २०/५३

लेनहार–लेनेवाला ८/१०

लोना–सुन्दर १२/१७

लोह–लाल २३/१०

लौ–ध्यान १२/२१

वपु–शरीर, सुन्दर रूप १/२

वरियाई–जबरदस्ती ८/१०

वहकेरा–उसका २/८

वहकी–उसकी १४/८

बारा–बेटा, बालक ३/६, २६/१५, न्यौछावर होना १५/२१

बिकरारा–विफल, व्याकुल ३/१०, ८/३

विख > विष–जहर ३/६, ७/७

विखै–विषय ५/१०

विग–भेड़िया ३/६

विटप–वृक्ष १/८

वित्त–धन-दौलत १२/१७

विदग्धा–चतुरता से पर पुरुष को अपने में अनुरक्त करने वाली १३/५

विथा–व्यर्थ में ५/१६

विधि–विधाता २/४, भाग्य १०/११, १२/२१

विधुन्तत–चन्द्रमा को कष्ट देने वाला राहु ७/२२

विप्रलब्ध–अभीष्ट वस्तु जिसे न मिली हो, वियोगिनी १५/८

विप्रलब्धा –संकेत स्थल में प्रिय के न मिलने से दुःखी नायिका १३/५

विभाकर–सूर्य ११/२

विभारा–एक रागिनी १३/८
विरक्ष–वृक्ष ३/१
विलसहु–विलास करना ३/६
विलोकत–देखते हुए ५/३
विषै–ज्ञानेन्द्रियों द्वारा गृहीत होने वाला पदार्थ १५/२४
विसेखि–विशेष रूप से ७/१८
विसेखे–विश्वास किया जाय १/४
विसेखै–देखना ४/१, ५/४
वृक–भेड़िया ३/६
वृथा–व्यर्थ में ५/३
वेदू–जानू, समझूँ १/१३
संकेती–संकट, जंजीर १५/३७
संग–साथ ३/४
संघिन, संघी–साथ देने वाला साथी ३/१२, ५/२
संघार > संहार–नाश ५/१२
संतति–संतान १/१६
संसा > संशय–सन्देह ३/४, २०/८
संहेता–निश्चित स्थान तक २०/५३
सँकर–संकीर्ण ६/५
सँकाना–संकित होना, डरना २०/३६
सँगरो–सम्पूर्ण ६/३
सँघ–पास, निकट २/६
सँघाता–घातक, प्राणहारी ५/१२
सँघाती–साथ देने वाला, साथी १५/१३
सँचारा–उत्पन्न किया २३/१२
सँभारन–सँभालना १२/६
सँजोई–संयोग ८/१५
सँवर–स्मरण करके ५/५, ५/६
सँवारा–सुसज्जित किया २३/१२
सँबहिं–समक्ष १४/१३
सगरे–सम्पूर्ण ४/१
सचान–बाज २२/२६
सचु–सुख, प्रसन्नता १५/३१, २२/३०
सछत–घायल ३/१०
सत्त, सति–सत्य १/१७, ६/१
सतिभावा–सत्य होना १०/८
सदबर्ग–हजारा गेंदा १३/६
सन–स्तब्ध १६/४ (कवित्त)
सनोमान–सम्मान २२/१३
सब्हन–सबको २/७
सभ–समस्त २/८
सभयू–सभी ने ५/१४, ६/३
सभऊँ कहँ–सबको ३/७
समँद–मतवाला १०/१
सम–समान ३/४
समोई–समाहित १/५
समुहाना–सामने आया
सयाना–ज्ञानी, चतुर १/२
सर–बाण ७/५
सरकण्डा–एक सरपत जिसमें गाँठ होती है। २३/११
सरग–स्वर्ग १/१, १/१७, १४/११
सरब –समस्त, समग्र २३/१०
सरबमई–सर्वव्यापी १५/२
सरबरि–(फा०) बराबरी, स्पर्द्धा २०/४२
सरवन > श्रवण–कान ७/८
सरवर–बराबरी ३/३
सरवस–सर्वस्व, सम्पूर्ण १२/५
सरहर–सरपत २३/११
सरागन–शलाका ८/५, २४/२

सरासन–धनुष ७/६

सरिस–समान, तुल्य २/३, शिरीष एक वृक्ष जिसका फूल कोमल होता है। ७/४

सरेखा–चतुर, ज्ञानी १/६, २/८, ३/२, १२/२१, १४/४, १४/६, १५/१, १५/३१, १७/१, २२/४

सलज–लज्जायुक्त १२/१

सलित–सरिता, नदी ११/२

ससहर–चन्द्रमा १३/५

सहदेवा–सहदेव, माद्री से उत्पन्न पांडु के पाँचवें पुत्र १२/१

स्थावर–अचल १/२

स्याम–श्यामा नाम की चिड़िया १३/२

साँकर–बेड़ी ८/१८

साँगहिं–(सं० खंज) कम होना १७/६

साँच–सत्य १/१३, १/१७,

साँड़िनी–तेज चाल वाली ऊटनी १५/१०, १५/१३, २२/२

साँती–शान्त हो १४/२

साँधा–सिद्ध करना २०/४६

साँसति–दण्ड, यातना ६/१२

साँसै–यंत्रणा देना ३/८

साईं–स्वामी, ईश्वर १/८

साखी–साक्षी, गवाही १४/१५

साजू–सामान ३/१

साजा–सजाया, सुसज्जित किया २०/५३

सातछात–(सं०) साक्षात्, प्रत्यक्ष २०/२५

साधा–कामना, इच्छा १०/१६

सानी–जोड़ का, समानता करने वाला २/३

साम–श्याम ७/७

साम–अरब के उत्तर में अवस्थित एक देश जिसकी राजधानी दमिश्क है। ६/३

सारद–शरद ऋतु का १३/२

सारा–सम्पूर्ण ५/१८, ७/५

सारिन्दा–सारंगी १३/४

सारी–गमन करने वाली १६/८

स्वाग–सैर करने वाला, भ्रमरकारी १/११

साला–कष्ट देने वाला ७/७

सावक–पशु-पक्षी का बच्चा ५/१५, ११/२

सिखी–मोर १६/१

सिगरौ–सम्पूर्ण ११/२

सिरी-पंचमी–वसंत पंचमी १६/६

सितासित–सफेद और काला ७/७

सिधावा–प्रस्थान किया ६/२

सिधावहिं–प्रस्थान करना, चला जाना ३/४, ३/१३

सिरजा–उत्पन्न किया, सृष्टि किया १४/६

सिरजेउ–उत्पन्न किया १२/२०, १४/१५

सिराइह, सिराऊँ, सिराने–ठंडा होना, शान्त होना ५/६, १४/१५, १५/७, १२/६,

सिहर–रोमांचित होना ७/१०

सीर–शीतल १५/२

सुचित–चिंता निवृत्त १२/२१

सुजान–प्रेमी १३/१

सुजाना–चतुर, ज्ञानी १२/४

सुकिरित > सुकीर्ति–सुयश, नेकनामी २१/२

सुठि–बहुत अधिक ३/६, ५/६, ८/५, १०/१४, १२/१८, १४/१०, १६/५, २०/३०, २०/५७

सुता–पुत्री ७/१
सुतुर–घोड़ा २०/६
सुद्धि–चेत, खबर २२/३
सुभग–सौभाग्य, सुन्दर ७/१३, ७/१६, २४/२
सुमंत्र–अच्छी सलाह १२/१६
सुर–स्वर ७/१६
सुरभच्छ–देवताओं का भोजन, सुन्दर भोजन १७/३
सुरयानी–देवभाषा १/१५
सुरनारी–देवांगना ७/१४
सुराता–लग गया है ८/८
सुरियाँ–सूली, फाँसी २०/१०
सुरी–देवांगनाएँ ७/२२
सुहेला–सुन्दर, सुहावना १२/१३, १३/६, १५/२६, २४/६
सूध–सीधा २३/४
सूधी–सीधी १५/३५
सूरसती > सरस्वती– विद्या की देवी ७/३
सेत– मुफ्त में, जिसके लिए कुछ देना न पड़े। २०/१
सेंती–मुफ्त में, बिना दाम दिये १५/३७
सेत, सेता–श्वेत ७/७, १२/१०
सेवती–सफेद गुलाब १३/६
सोई–वही ५/१६, १५/३२
सैना–संकेत १४/८
सोग–शोक २/७
सोन–सोना १७/२
सोनजुही–जूही का एक प्रकार जो पीला होता है। ७/२२
सोह–शोभा ७/६
सोहाई–सोहावना १२/५
सोहाए–सुशोभित होना २/१०
सोहासन–सुन्दर हँसी वाला १४/४
सौंतुख–जागने की दिशा में (सम्मुख) १२/६
सौंह–शपथ ३/५, सामने, रूबरू ३/१२, ११/१, १५/३५, १४/२, १८/४, २०/७, २०/३५, २१/८, २३/१५
हँकारा–बुलावा ६/२
हती–आहत ५/१
हतेउँ–नाश किया,नष्ट किया १/५, २१/८
हतेउ–थी १२/१७
हत्यो–था ३/१
हथनाल–हाथी पर चढ़ने वाली तोप २०/६
हन्त–हरण किया हुआ २०/४५
हबस–अफ्रीका का एक प्रसिद्ध देश १२/१८
हम्माम–गरम स्नानागार, स्नान का स्थान २०/६, २३/२
हमीर–एक संकर राग १३/८
हय–घोड़ा २०/३६, २२/११
हरई–समाप्त हो जाती है २/७
हरकारा–डाकिया २०/१०
हरख–हर्ष ८/१४, १२/४, १६/६
हरखानी–प्रसन्न हुई १५/१६
हर-हर–हरी-हरी १३/२
हरिद–पीला २३/७
हरीरा–हरे रंग का १४/५
हरेई–हरना ५/७
हरेवा–हरे रंग का एक पक्षी १३/२
हलकम्प–तहलका, आतंक २०/३४

हाँक–हुँकार, ललकार ३/५, ६/२, १५/१३, २०/३४

हारा–हाल, स्थिति ८/१७

हाल–अवस्था, दशा ७/१४, २३/७

हाला–कम्पित हुई १७/३

हितू–हितेच्छु व्यक्ति ३/७

हुत–हुई ७/१, था १२/६, १२/१७, १५/१६, १५/२५

हुलासा–उल्लास, प्रसन्न होना २/१०, ३/२, ८/१०, १२/११, १५/१७

हुलसाना–उल्लसित होना, आनन्दित होना २०/१८

हूल–शोरगुल २०/३५

हेत–के लिए ७/४

हेता–हेतु या प्रेम १०/३

हेरी–देखा है २/२

हेरौं–खोज करना ५/७

होनहार–होने वाला ३/२

अनहद शब्द–जो शब्द किसी आघात से न उत्पन्न हुआ हो। जब साधक अपनी चित्तवृत्ति भीतर की ओर प्रवाहित कर लेता है, तब उसे अनाहत शब्द (नाद) सुनाई पड़ता है। योग- साधानान्तर्गत यह नादानुसंधान की क्रिया है, जो अनाहत चक्र से मुखरित होता है। इसमें शब्द-ब्रह्म की अनुभूति होती है। १/४

अनहद दस परकार–विद्वानों ने अनाहत ध्वनियों को दस प्रकार की माना है- १. संहारक की पायजेब की झंकार जैसी- २. पालक की सागर की लहर के सदृश, ३. सृजक की मृदंग के समान, ४. सहस्र कमल की शंख सी, ५. चिदानन्द मण्डल की मुरली के समान, ६. सच्चिदानन्द की बीन के सदृश, ७. अखण्ड अर्द्धमात्रा की सिंह गर्जन सी, ८. अगम मण्डल की नफरी सी, ९. अलख मण्डल की बुलबुल के समान आदि । अभी तक ६४ अनाहत ध्वनियाँ अन्वेषित हो चुकी हैं, किन्तु उसका श्रवण सभी के लिए सम्भव नहीं है। जिन साधकों की आध्यात्मिक शक्ति जितनी विकसित होती है, उतने ही सूक्ष्म अनाहत शब्दों को वे सुनने में समर्थ हो सकेंगे। १/४

अब्राहिम (इब्राहिम)–यहूदी जाति के आदि पुरुष, इस्लाम धर्म के अनुसार एक पैगम्बर। ४/२, १५/३२, २०/१७

आलमशाह–एक मुगल बादशाह जो सन् १७५९ से १८०६ के मध्य दिल्ली के सिंहासन पर बैठे थे। अंग्रेजों और रुहेलों द्वारा अनेक विध अपमानित होकर तथा मराठों के हाथ की कठपुतली बनकर नाम मात्र के शासक थे। १/८

उषा-अनिरुद्ध–बाणा की कन्या जिसका व्याह अनिरुद्ध के साथ हुआ था। एक प्रसिद्ध पौराणिक प्रेमगाथा के नायिका-नायक हैं। ९/४

कीट-भिरंगी–भृंग व गुहाँजनी (बिलनी) के विषय में प्रसिद्ध है कि यह दूसरे कीड़ों को अपने बिल में पकड़ ले जाती है और उन्हें अपने रूप का कर लेती है। "भय गति कीट भृंग की नाई। जहँ-तहँ मैं देखे रघुराई।।" तुलसीदास

चारमीत–मुहम्मद साहब के पश्चात अबूबकर(६३२-६३४ई०) उमर (६३४-६४४) उसमान (६४४-६५६ई०) अली (६५६-६६०ई०) क्रमशः उनके उत्तराधि-

कारी खलीफा हुए। ये इस्लाम धर्म के चार मीत के नाम से पुकारे जाते हैं। १/७

चारितत्त्व–सृष्टि के चार तत्त्व- अग्नि, पवन, जल और मिट्टी। मुसलमान इन्हीं चार तत्त्वों से सृष्टि-रचना मानते हैं, जबकि विचारकों ने पाँचवाँ तत्त्व आकाश को भी सृष्टि रचना का आधार स्वीकार किया है। १/१

चौदह रतन–श्री (लक्ष्मी), मणि (कौस्तुभ), रम्भा (अप्सरा), वारुणि (सुरा), अमिय (अमृत), शंख, गजराज (ऐरावत), कल्पवृक्ष, शशि, धेनु (कामधेनु), धन (कुबेर) धनवन्तरि (वैद्य), विष, वाज (घोड़ा) यह चौदह रत्न देवासुर- संग्राम के समय समुद्र-मंथन से प्राप्त हुए थे। ७/२२

तक्षक–आठ प्रमुख नागों में से एक जिसने परीक्षित को काटा था। अष्टनाग- वासुकि, तक्षक, कुलक, कर्कोटक, पद्म, शंखचूड़, महापद्म, धनञ्जय नागों के अष्ट कुल हैं। ७/४

दमिन्ती–विदर्भ नरेश भीमसेन की कन्या थी, जो रूप और गुण में अद्वितीय थी। उसका प्रेम निखद देश के राजा बीरसेन के पुत्र नल से हो गया था। ६/४

निरंजन–निरंजन का शाब्दिक अर्थ 'अंजन- रहित' है। अंजन से तात्पर्य माया से है। इस प्रकार निरंजन का सामान्य अर्थ माया रहित निर्गुण ब्रह्म है। माया से परे जो सार तत्त्व है वही पूर्ववर्ती संतो की दृष्टि में निरंजन है। परवर्ती संतों ने निरंजन को परम मायावी और छलिया रूप में प्रस्तुत किया है। यह शब्द भारतीय दार्शनिक एवं योग परक साहित्य में विशेष रूप से प्रयुक्त हुआ है। २१/३

नूह–आदम से दसवीं पीढ़ी में उत्पन्न पैगम्बर जिसके समय में एक ऐसा तूफान आया था कि सारी सृष्टि जलमग्न हो गयी थी। उस समय अपने परिवार तथा जानवरों के एक-एक जोड़े के साथ एक स्वनिर्मित नौका में बैठकर इन्होंने प्राण बचाए थे। कहा जाता है उन्हीं से पुनः सृष्टि चली, जिसकी संतान इस समय हैं। २/१

मौलवीरूम–मौलवी रूम का जन्म ३० सितम्बर सन् १२०७ ई० में फारस के बल्ख नगर में हुआ था। इनका पूरा नाम मौलाना जलालुद्दीन मुहम्मद अल् बल्खीअर रूमी था। इन्हें लोग खुदा बन्दगार नाम से भी जानते थे। यह फारस के श्रेष्ठ सूफी साधक और कवि के रूप में स्मरण किये जाते हैं। इन्होंने सूफी धर्मान्तर्गत मौलविया सम्प्रदाय की स्थापना किया था। १/१०

यहियाखान आसफुद्दौला–यह अवध के नवाब थे जो प्रकृति से अत्यन्त उदार तथा दानी थे। उनके शासनकाल में हिन्दू, मुसलमान सभी सुख-शान्तिमय जीवन व्यतीत कर रहे थे। लोक जीवन में दृढ़ विश्वास था कि "जिसको न दे मौला उसको दे आसफुद्दौला।" राजा टिकैतराय और राजा झाऊ लाल का उनके द्वारा वजीर नियुक्त किया जाना भी उनकी साम्प्रदायिक उदारता का द्योतक है। १/६

हंस-जवाहिर–यह सूफी प्रेमाख्यान परम्परा की महत्त्वपूर्ण कृति है। जिसकी रचना कासिमशाह ने हि० ११४६ (सन् १७३६ ई०) में की थी। 'हंस-जवाहिर' में राजा हंस और रानी जवाहिर की प्रेमकथा का वर्णन है। यह एक कल्पित कथा है।

कवि ने इसकी घटनाओं के लिए बलख, चीन, एवं रूम जैसे अभारतीय प्रदेशों को चुना है, किन्तु इन स्थानों के निवासी पात्रों का नामकरण पूर्णतः भारतीय है। १/१३

हसन-हुसैन-मुसलमानों के चौथे खलीफा एवं मुहम्मद साहब के दामाद अली के दोनों बेटे थें। बड़े बेटे का नाम हसन तथा दूसरे बेटे का हुसैन था। हुसैन ने यजीद का शासन स्वीकार नहीं किया था। जिनके कारण करबला के युद्ध में शहीद हुए थे। १/१७

सातदीप-पृथ्वी के सातों खण्ड- दिया द्वीप, सरन द्वीप, जम्बू द्वीप, लंक द्वीप, कुश स्थल द्वीप, मधुस्थल द्वीप और सिंहल द्वीप। ७/१

पाठान्तर संकेत

जो दोहा या चौपाई इस प्रति में नहीं है, किन्तु अन्य प्रतियों में है। ➔

एकाधिक शब्दों के लिए। ❖

जो दोहा या चौपाई इस प्रति में है, किन्तु अन्य प्रतियों में नहीं है। ★

कोई चौपाई जो इस प्रति में है, किन्तु अन्य प्रतियों में अधिक है। ☆

चौपाई की अर्द्धाली के लिए। ◐

पूर्ण दोहा या चौपाई के लिए। ●

चौपाई जो अन्य प्रतियों में अन्यत्र दी गयी है। ■

एक शब्द के लिए अंकों का प्रयोग।

पाठान्तर में जहाँ किसी प्रति का उल्लेख नहीं है वहाँ नूरअली की प्रति से पाठान्तर है।